सत्ता और संघर्ष

वाल्मीकि त्रिपाठी

प्रत्यूष प्रकाशन, कानपुर

सत्ता और संघर्ष

लेखक—वाल्मीकि त्रिपाठी

प्रकाशन-काल—फरवरी, १९६३

आवरण चित्रकार—बी० के० डे, कानपुर ।

आवरण मुद्रक—जाब प्रेस, कानपुर

जिल्द साज—रफीक अहमद एण्ड सन्स, कानपुर ।

मुद्रक—विवेक प्रिंटर्स, ब्रह्मनगर, कानपुर ।

मूल्य—पाँच रुपये केवल ।

प्रकाशक ● प्रद्युम्न प्रकाशन, रामबाग कानपुर

भूमिका

भारतीय इतिहास के अठारहवीं शताब्दी के प्रथम चरण को घोर अनिश्चितता का युग कहा जा सकता है। उस काल की प्रमुख विशेषता थी अननुमानित एवं अकल्पनीय अस्थिरता। वही अस्थिरता प्रमुख कारण सिद्ध हुई दीर्घकालीन चरमोत्कर्ष-शिखर विहारिणी मुगल-सत्ता की ह्रासोन्मुख स्थिति की।

भारत में मुगल-सत्ता के जिस सुदूर व्यापी वृक्ष को, बाबर के अथक अध्यवसाय, अद्भुत् शौर्य एवं अटूट धैर्य ने रोपा; हुमाऊँ की सहिष्णुता ने शक्ति के अभाव में भी सूखने से बचाया, सिंचित किया: अकबर के चरम औदार्य, विकट वीरता एवं अनुकूलता की विलक्षण प्रतिभा ने सम्यक् विकास प्राप्त कर, फलित-पुष्पित होने के वातावरण का सृजन किया; जहाँगीर और शाहजहाँ ने अहितकर एवं विरोधी तत्वोंका समूल उन्मूलन कर सुरभित बनाया; औरङ्गजेब की अति महात्वाकाँक्षाओं, अतुलनीय पराक्रमों, अपरिमेय शौर्यों ने जहाँ एक ओर समृद्धि की चरम सीमा पर पहुँचाया, वहाँ दूसरी ओर उसके अमानुषीय, अत्याचारों, अनैतिक आचरणों, जघन्य अपराधों, निकृष्ट-तम स्वार्थों, घोर धार्मिक अन्ध विश्वासों, एवं स्वार्थों के वशीभूत हो अनौचित्य को भी औचित्य सिद्ध करने के सफल-असफल प्रयासों ने उसकी जड़ों को खोखला एवं अशक्त बना दिया।

बहादुरशाह का अन्त होते ही, एक ऐसे युग का प्रादुर्भाव हुआ जिसे भारतीय इतिहास में 'सम्राट निर्माताओं का युग' कहा जाता है। इस काल के सम्राट, इतने विलासी, शक्ति हीन और अकर्मण्य हुए कि अपने मन्त्रियों के सदा कृपाकाँक्षी ही बने रहे। जहाँदारशाह को उसके मन्त्री जुल्फिकार खाँ ने सिंहासनासीन कराया और जितने समय भी उसे शासक के रूप में जीवित रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, निरन्तर मन्त्री के हाथ का खिलौना ही बन कर रहा। तत्पश्चात् फर्रुखसियर सैय्यद बन्धुओं की सहायता से जहाँदारशाह को मार कर गद्दी पर बैठा;

पर, सत्ताधारी बनते ही उसके और सैय्यद बन्धुओं के बीच षणयन्त्रों के जाल की ऐसी सृष्टि हुई, जिसमें सम्राट इस बुरी तरह फँस गया कि मृत्यु के मुँह में जाने पर ही मुक्त हो सका ।

सैय्यद बन्धु दो भाई थे–सैय्यद अब्दुल्ला खाँ बड़ा और सैय्यद हुसेन अली छोटा । सैय्यद अब्दुल्ला खाँ कुशल राजनीतिज्ञ, दूरदर्शी, अवसरवादी तथा षणयन्त्रों एवं अभिसन्धियों के अभिसर्ग में परम प्रवीण था, जब कि सैय्यद हुसेन खां दुर्धर्ष योद्धा मात्र था और उसकी सामरिक सामर्थ्य गर्वोक्ति के रूप में प्राय: प्रकट हो जाती थी-'जिसके सिर पर जूता रख दूँ, वही बादशाह बन जाये ।' दोनों एक-दूसरे के पूरक थे । दोनों की सम्मिलित शक्ति ने फर्रुखसियर, रफीउद्दर्जात, रफीउद्दौला, इब्राहीम तथा रौशन अख्तर, जो इतिहास में 'मुहम्मद शाह' के नाम से प्रसिद्ध है, आदि मुगल सम्राटों को बनाया-बिगाड़ा ।

दोनों भाई, दो शरीर, एक प्राण थे; एक दूसरे के शुभचिंतक थे; मतवैभिन्य के अवसर पर एक, दूसरे को उत्तेजित अनुभव कर शान्त हो जाता था; यदा-कदा परस्पर टकराते भी थे; पर शत्रु के लिए दोनो एक थे । आठ वर्ष तक निरन्तर सैय्यद बन्धु बिना छत्र के शासक बन अपनी स्वेच्छाचारिता का प्रदर्शन करते रहे; अनैतिक, अनुपयोगी एवं अहितकर कार्यों को अपनी सहमति की मुहर लगा औचित्य का स्वरूप प्रदान करते रहे; पर कालान्तर में अप्रत्याशित अर्जित सत्ता के मद में ऐसे मदान्ध हो गये कि अपने को अजेय समझ बैठे । और सतर्कता विलासिता के पंक में पूर्णतया निमग्न हो गई । परिणाम जो स्वाभाविक था, वही हुआ, पतन ।

उन्हीं तथाकथित 'सम्राट निर्माताओं,' एवं उत्तरकालीन मुगल शासकों के इतिहास सम्मत स्वेच्छापूर्ण कार्यों, अदभुत रुचियों, अननुमानित चेष्टाओं, अप्रत्याशित वक्रताओं आदि का हृदयग्राही एवं सुरुचिपूर्ण वर्णन इस औपन्यासिक कृति का विषय है, जो सुधी पाठकों के समक्ष है ।

फरवरी, १९६३ लेखक

कुशल कथा–शिल्पी

श्री प्रताप नारायण श्रीवास्तव

को

सादर सविनय

समर्पित

१

सूर्यास्त हुये काफी देर हो चुकी थी। निरन्तर बढ़ने हुए अन्धकार की गहनता को नष्ट करने के लिए हवेलियों के भीतर-बाहर असंख्य दीप जल उठे थे। दीपों के प्रकाश में जन-जीवन कुछ समय तक ही क्रिया-शील रह सका था। धीरे-धीरे वह क्रियाशीलता भी तम के गर्भ में तिरोहित हो चली थी। और प्रकाश कहीं-कहीं ही अपने अस्तित्व का आभाश कराने लगा था। राजमार्ग तक जनहीन हो चुके थे। रात के सन्नाटे में सिर्फ एक पालकी किले की ओर साधारण गति से अग्रसर हो रही थी। आगे-पीछे बीस सशस्त्र रक्षक साथ थे, जो पालकी को चारो ओर से घेरे हुए चल रहे थे। पालकी के भीतर सहसा ताली बजी। पालकी रुक गई। पालकी पर पड़ा रेशमी परदा एक ओर को सरका। अन्दर से पुकार हुई—"गिरधर !"

"जी हुजूर।" गिरधर केवल इतना ही कहने पाया था कि भीतर से शू SSSS की ध्वनि सुनाई दी। गिरधर स्तब्ध खड़ा रह गया।

राजमार्ग के दोनों ओर स्थित गगनचुम्बी अट्टालिकाओं तक से कोई प्रकाश न आ रहा था। केवल पालकी के दूसरी ओर स्थित एक ऊँची हवेली के द्वारों पर पड़े परदों के पीछे कमरे के प्रकाशित होने का संकेत मिल रहा था। उस प्रकाशित कक्ष से आती हुई सुमधुर ध्वनि के सहसा रुकते ही सवार ने कहा—"सुना कुछ ?"

"क्या हुजूर ?" गिरधर ने अज्ञानता व्यक्त की।

"दर्द भरी आवाज।"

"कहां ?" गिरधर ने चारो ओर वहीं खड़े-खड़े घूमकर देखा।

"सिर्फ लड़ना जानते हो। लड़ाकू इन्सान के पास दिल नहीं होता। क्या गला पाया है ! पालकी नीचे रखवाओ।"

गिरधर कदाचित सवार का आशय समझ गया था। उसने परिस्थिति पर प्रकाश डाला—"हुजूर रात ज्यादा हो गई है।"

"तो क्या हुआ ? रात ज्यादा-कम होती है सोने वालों के लिये। मैं गाना सुने बगैर आगे नहीं बढ़ सकूँगा।" आदेशात्मक स्वर था सवार का।

गिरधर सवार का मुँह लगा नौजवान था। परोक्षरूप से अवज्ञा व्यक्त की—"कल गाने वाली को हुजूर की खिदमत में पेश कर दिया जायेगा।"

"नहीं, गिरधर ! तुम तलवार की झनझनाहट से लड़ने वाले की ताकत का अन्दाजा लगा सकते हो, आवाज सुनकर जिस्म की खूबसूरती की नहीं। इसकी आवाज बता रही है कि इसके गले में ही दर्द नहीं, इसका जिस्म भी निहायत खूबसूरत हैं।" पुनः उसी हवेली के प्रकाशित कक्ष से कण्ठस्वर के साथ घुँघुरुओं का स्वर सुनाई दिया। सवार एक क्षण रुककर बोला—"पैरों में बिजली की-सी ताकत हैं गिरधर।" पालकी के बाहर पैर निकाल दिये सवार ने।

गिरधर के संकेत पर पालकी सड़क पर ही रख दी गई। सुमधुर स्वर की ओर सवार खिंचता चला गया। गिरधर उसका अनुसरण करने लगा।

द्वार पर रक्षक ने खड़े हो आगन्तुक का अभिवादन किया। सवार ने उसकी प्रसन्नता खरीद ली। द्वार रक्षक ने मार्ग निर्देशित कर दिया। सवार के साथ-साथ गिरधर भी अनमने भाव से ऊपर चढ़ने लगा। ऊपर पहुँचते ही एक परिचारिका ने आंखें बिछा दीं। परिचारिका की शालीनता को पुरस्कृत करता हुआ निर्दिष्ट कक्ष की ओर सवार उन्मुख हो गया। कक्ष के द्वार पर पड़ा रेशमी परदा लहरा उठा। एक ओर

सरक गया। आगन्तुक के भीतर पैर रखते ही एक युगल-स्वर फूटा—
"शहज़ादा साहब······ !"

स्वर के साथ ही नर्तकी स्तब्ध खड़ी हो गई। वाद्य यन्त्रों पर मचलने वाले हाथ रुक गये। उपस्थित जन सिर झुकाये खड़े थे। दो पग आगे बढ़ शाहज़ादे ने मधुर मुस्कान बिखेर कहा—"रुक क्यों गईं नाज़नीन ? तुम्हारे पैरों के घुंघरुओं की आवाज़ ही तो मुझे यहाँ तक खींच लाई है।"

"कनीज को हुज़ूर ने शाही महल में बुलवा लिया होता ! हुज़ूर ने क्यों तकलीफ ·· ?"

"ऐसी बेहतरीन आवाज की तरफ खिचने में जो लुत्फ है, वह उसके खींचने में नहीं। क्या नाम है तुम्हारा ?" बीच में ही शाहज़ादे ने प्रश्न किया।

"कनीज को सितारा कहते हैं हुज़ूर।"

"खूब ! बहुत खूब। दरअसल इस अंधेरी रात में पूरे शहर में तुम्हीं एक हो जो गमगीन दिलों को रोशन कर रही हो।"

"कनीज के पास ऐसा हुनर कहां जो······।"

बीच में ही शाहज़ादा बोला—"इसका अहसास हुनरपसन्द को कहां होता है। इन सब लोगों से पूछो जो सारी दुनियां को छोड़ तुम्हारे साये में जिन्दगी काटने के लिए बेताब हैं।" उपस्थित जनों पर दृष्टि डाल कहा—"आप लोग तशरीफ रखिये न, खड़े क्यों हैं ?"

एक ने कहा—"हुज़ूर, अब हम लोगों को इजाज़त दें।"

"जैसी आप लोगों की मर्जी।" प्रस्थान के लिए तैयार लोगों को दृष्टिगत कर कहा।

एक-एक कर सभी शाहज़ादे के प्रति सम्मान प्रकट कर कक्ष के बाहर हो गये।

शरद्चन्द्र की मरीचियों-सी कोमल लावण्यमयी सितारा पर अपना

ध्यान केन्द्रित किया शहज़ादे ने। अब भी सितारा निश्चल जहाँ की तहां खड़ी थी। नख-शिख तक सौन्दर्य की प्रतिमा को निहार शाहज़ादे ने अनुमान को अभिव्यक्ति प्रदान की—"सितारा! मेरा एकाएक आना शायद अच्छा नहीं लगा तुम्हें ?"

"हुजूर! यह क्या कह रहे हैं! यह तो मेरी खुशकिस्मती है कि हुज़ूर ने यहाँ आकर नाचीज़ की कद्र की।" जरा तेज हवा चलने से जैसे गुलाब की डाली झुककर पुनः सीधी हो जाती हैं, उसी तरह सितारा ने कनक-लता—सी देहयष्टि को लोच दे कहा।

सितारा का कण्ठस्वर असाधारण मृदुल था।

"ओह, कितना मीठा है गला तुम्हारा। खुदा ने कितनी नायाब चीज बख्शी है तुम्हें!' शाहज़ादे ने स्वर की मादकता में डूब कहा।

"कनीज हुजूर की क्या खिदमत कर सकती है ?"

"बस! वही चीज सुनना चाहता हूँ जो अभी गा रही थीं तुम।"

सितारा पीछे की ओर पैर मोड़ बैठ गई। तानपूरा हाथ में ले उंगलियों से तारों को छेड़ना प्रारम्भ कर दिया। दो क्षण पश्चात् सितारा का पूर्व संगीत-सिक्त स्वर फूटा—'पिया बिन नागिन बन गई रैन।" सितारा तन्मय हो गा रही थी। स्वर में अपना सम्पूर्ण कौशल भरने की शायद चेष्टा कर रही थी वह। स्वर की मधुरिमा और करुणा से शाहज़ादा इतना अभिभूत था कि गाव तकिये के सहारे अर्ध-शायित-सा नेत्र बन्द किये स्वर की लहरियों के साथ तरंगायित हो रहा था। उसके समक्ष परिचारिका मदिरा पूरित पात्र कब रख कर चली गई, उसे ज्ञात ही न हो सका।

२

अठारहवीं शताब्दी का प्रथम चरण था। मुगल-शक्ति ह्रासोन्मुख हो चली थी। जिस मुगल साम्राज्य-वृक्ष को बाबर ने रोपा, अकबर ने सींचा, जहांगीर और शाहजहाँ के काल में फूला-फला और औरंगजेब ने जिसके विस्तार एवं रक्षा में जीवन-होम दिया, वह अति विलासियों, शक्तिहीनों तथा अकर्मण्यों के हाथ में पड़कर छिन्न-भिन्न हो रहा था। साम्राज्य की विशालता असंदिग्ध थी। शक्ति भी प्रारम्भिक मुगल-शासकों ने यथेष्ठ अर्जित कर ली थी। उसे सुव्यवस्थित करने में सफल भी कम न हुए थे, पर उत्तराधिकारियों की विलासिता सुदृढ़ साम्राज्य में घुन का काम कर रही थी,। आन्तरिक दृष्टि से साम्राज्य खोखला हो चुका था। बाहरी शान-शौकत और पूर्व शासकों की धाक् ही उसके अस्तित्व को सम्हाले थी, अन्यथा वह न जाने कब समाप्त हो गया होता।

औरंगजेब की धार्मिक कट्टरता ने साम्राज्य की नींव हिला दी थी। उत्तराधिकारी बहादुरशाह ने हिलती नींव को पुनः जमाने की बहुत कोशिश की, पर जीवन काल की संक्षिप्तता ने अभिलाषा पूर्ण न होने दी। दूसरे लड़के अजीमुश्शान को परिस्थितियों ने गद्दी पर ला बिठाया। सम्हलने भी न पाया था वह कि बड़े भाई जहाँदारशाह ने जुल्फिकार खां की सहायता से छोटे भाई को सदा के लिए मार्ग से हटा दिया।

अजीमुश्शान के मारे जाने का समाचार चारो ओर फैलने लगा। सुदूर बंगाल तक, जिसका सूबेदार अजीमुश्शान का लड़का फर्रुखसियर था, समाचार पहुँचने में काफी समय लग गया।

एक प्रातः गिरधर अश्वारूढ़ हो अन्यमनस्क-सा किले के प्रमुख द्वार से बाहर आ रहा था कि सामने से निकट आते एक अश्वारोही पर दृष्टि पड़ी। गिरधर ने प्रश्न किया—"कहाँ रहे, तीन दिन से ? दिखाई नहीं दिये ?"

"और अगर यही प्रश्न मैं करूँ तो....?"

"देखो चबेलाराम ! तुम्हारी यह चाल हमेशा काम नहीं देगी। मैं जब कभी कोई प्रश्न करता हूँ, तुम सदा उल्टे वही प्रश्न कर बैठते हो। मैं प्रश्न नहीं, उत्तर चाहता हूँ।"

"तो फिर यह भी बता दो न कि उत्तर क्या चाहते हो ?"

"उत्तर ही जानता होता तो प्रश्न क्यों करता ?"

चबेलाराम को विचाराधीन अनुभव कर गिरधर ने पूँछा—"क्या सोच रहे हो ?"

"सोच रहा हूँ कि जो प्रश्न मुझे करना चाहिये था वह आपने कर डाला।

"अरे भाई चबेलाराम, क्या बताऊँ ! हालत खस्ता है। कुछ समझ में नहीं आ रहा है कि क्या करूँ।"

सहानुभूति पूर्ण स्वर में चबेलाराम बोला—"कुछ-न-कुछ तो करना ही पड़ेगा। घटना साधारण नहीं है। शाहजादा शाहब ने क्या सोचा-विचारा है।"

"किस विषय में?" आश्चर्य भाव भरी दृष्टि गिरधर की प्रश्न चिन्ह बन चबेलाराम के चेहरे पर गड़कर रह गई।

"दिल्ली में शहंशाह की मृत्यु जो हो गई है.............।"

"शहंशाह की मृत्यु? कब, कैसे हो गई मृत्यु उनकी ?"

"आपको नहीं ज्ञात ?"

"नहीं तो!"

"हद हो गई! शहर का बच्चा-बच्चा जान गया है कि जहाँदारशाह

ने शहंशाह को मार कर गद्दी प्राप्त करली है।"

"कौन लाया है खबर?"

"यह तो मुझे भी ज्ञात नहीं हो सका है; पर जिसे देखो, वही इस विषय की चर्चा कर रहा है।"

"कहीं किसी ने झूंठ तो नहीं उड़ा दिया ?"

"सम्भव है, पर झूंठ कोई क्यों कहेगा ?"

"शत्रु की चाल सदा उल्टी होती है। सम्भव है किसी अन्य शाह-जादे ने कोई चाल चली हो।"

"परन्तु लोग तो इस तरह बात कर रहे हैं, जैसे उन्होंने स्वयं घटना अपनी आँखों से देखी हो।"

"कहाँ बात करते सुना है लोगों को ?"

"सब्जी मण्डी के चौराहे से ही सुन कर आ रहा हूँ।"

"आओ तो जरा मेरे साथ।" गिरधर के अश्व का अश्वारूढ़ चवेलाराम अनुसरण करने लगा।

दूर से ही गिरधर को आता देख जन इधर—इधर खिसकने लगे। घोड़े को एड़ लगा निकट पहुंच ऊँचे स्वर में कहा "रुकिये आप लोग।" सब लोग जहाँ-के—तहाँ रुक गये—"इधर आइये।" गिरधर के सामने देखते-देखते बीस—पच्चीस लोग एकत्र हो गये।

गिरधर ने अधिकार पूर्ण स्वर में प्रश्न किया "शहंशाह की मृत्यु की सूचना आप लोगों को किसने दी है ?"

सब एक-दूसरे का मुँह देखने लगे। सुना सभी ने था, पर किससे किसने सुना था, कोई बता न पा रहा था। मौन ने गिरधर की धारणा को पुष्टि प्रदान की। वह बोला "इस तरह की झूँठी अफवाहें फैलाते आप लोगों को शर्म आनी चाहिये। जानते हैं इस की सजा ?"

"शर्म आनी चाहिये आप को जो सच को झूंठ साबित करने की कोशिश कर रहे हैं।"

अश्वारूढ़ गिरधर ने आस-पास के दुकानदारों तक का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लिया था। अधिकारी वर्ग से जन-साधारण तक गिरधर से आतंकित रहा करता था; और फिर यह जान कर कि गिरधर शाहजादे का मुँह लगा अधिकारी है, कोई भी निकट आने का साहस न कर रहा था। गिरधर की डांट सुन निकट दुकान में बैठे एक व्यक्ति से न रहा गया। उसने अभय स्वर में कहा "जिस बात से सारा मुल्क वाकिफ है, उसकी भी खबर आप को नहीं?" अधिकारी वर्ग की असावधानी पर चोट की।

गिरधर का घोड़ा स्वर के उद्गम स्थान की ओर उन्मुख हो गया। अपनी ओर गिरधर को आता देख वह व्यक्ति भी आगे बढ़ आया। असाधारण लम्बा था वह उसके सिर पर रखी इतनी ऊँची थी कि सहस्रों लोगों की भीड़ में भी गरदन सहित पगड़ी उसे देखा जा सकता था। उसने शिष्टाचार का पालन किया।

"कौन हो तुम ?" गिरधर ने अपनी दृष्टि का केन्द्र उसे बना प्रश्न किया।

"हुजूर, देख कर भी कि मैं एक इन्सान हूँ, सवाल कर रहे हैं!"

चवेलाराम ने धीरे से गिरधर के कान में कहा "शत्रु का गुप्त चर प्रतीत होता है।"

"मैं जानना चाहता हूँ कि कहाँ के रहने वाले हो तुम?" चवेलाराम की बात की उपेक्षा कर गिरधर ने पूर्वभाव से प्रश्न किया—"क्या काम करते हो?"

"आगरे का रहने वाला हूँ, घोड़ों की खरीद फरोख्त-करता हूँ।"

"कहाँ हैं घोड़े तुम्हारे ?"

"यहां मैं घोड़े बेचने नहीं, अपने नाते-रिस्तेदारों को लेने आया हूँ।"

"हूँ !" गिरधर ने रहस्यपूर्ण दृष्टि से उस व्यक्ति को देखा।

"हुजर, शक की नजर से देखने की गल्ती न करें। मेरा एक-एक

लब्ज सही है।" गिरधर का दृष्टिभाव पढ़ उसने अपनी स्थिति स्पष्ट की।

"यह भी सही है कि दिल्ली की गद्दी पर जहांदारशाह का अधिकार है!"

"जी हां, तख्त को हासिल किए हुए उन्हें काफी दिन हो चुके है।'

"और अगर तुम्हारी बात झूँठ निकली तो ..... ?"

"पूरब में सूरज का निकलना अगर झूँठ हो सकता है तो मेरी बात भी झूँठ हो सकती है।"

"आवश्यकता पड़ने पर तुम्हें शाहजादा साहब की सेवा में उपस्थित होना पड़ेगा, इस कारण तुम्हें कुछ दिन के लिए किले में नजरबन्द रखा जायगा।"

"सांच को आंच क्या, मगर मेरा बड़ा नुकसान हो जायेगा। मेरे लिये एक-एक दिन बड़ा कीमती है; रोजगारी आदमी ठहरा। दिल्ली में आजकल सोना बरस रहा है। लूट मची हुई है—लूट। मनचाही दौलत लोग बटोर रहे हैं। हुजूर ऐसे सुनहले मौके से क्यों गुलाम को महरूम कर रहे हैं?"

"तुम्हारी सूचना सच होने पर तुम्हारा नुकसान पूरा कर दिया जायेगा।"

"तो फिर चलिये।" लोगों को आश्चर्य हो रहा था घोड़े के व्यापारी का साहस देखकर। उनके जीवन का प्रथम अवसर था यह जब कि किसी को वे गिरधर से इस भांति निर्भय होकर वार्तालाप करते देख सुन रहे थे। कुछ ही क्षणों में विस्मय-विमुग्ध दृष्टि से हो अधिकारियों के साथ उसका जाना देखते रह गये लोग।

३

शाहजादे को पाने के लिए गिरधर ने दुर्ग का एक–एक कोना
ावा डाला, मगर कहीं भी शाहजादा फर्रूखसियर न मिला। गिरधर
ले से ही शाहजादे के स्वभाव से समझौता न कर पा रहा था, यह
ुमान कर कि वह सितारा के यहां होंगे, वह चल तो पड़ा, पर मन-ही
ा क्रोधित हो रहा था।

सितारा की हवेली आते ही गिरधर उतर पड़ा अश्व से। चवेला–
म को वहीं छोड़ वह ऊपर चढ़ने लगा। सामने परिचारिका को देख
ान किया "शाहजादा साहब अन्दर हैं ?"

"शायद !" परिचारिका की मधुर मुस्कान ने गिरधर का स्वागत
्या—"हुजूर कुछ परेशान नजर आ रहे हैं ?"

"शाहजादा साहब की सेवा में मेरे उपस्थित होने की सूचना
ुँचाओ।" परिचारिका की सहानुभूति गिरिधर की मन:स्थिति में
ाई परिवर्तन न ला सकी।

"गुस्ताखी माफ हो। हुजूर कनीज पर शायद बेहद नाराज हैं।
ान में तो ऐसी कोई खता नहीं हुई है।"

"मैं कहता हूँ फौरन शाहजादा साहब को सूचित करो जाकर।"
रिचारिका की कोई भी कला काम न आ रही थी। गिरधर का स्वर
र्ममतर होता जा रहा था।

निराश स्वर में परिचारिका बोली—"हुजूर आराम फरमा रहे हैं
स वक्त। किसी को भी वहां जाने की इजाजत नहीं है।"

"मगर मुझे इसी समय मिलना है उनसे, बहुत आवश्यक काम है।"

"हुजूर का हुक्म बजाने का मतलब होगा शाहजादा साहब की हुक्म अदूली! कनीज से ऐसी गुस्ताखी की उम्मीद हुजूर न करें।" अङ्गों का मोहक संचालन कर परिणाम जानने के अभिप्राय से वह गिरधर को कनखियों से देखने लगी।

गिरधर क्षण मात्र के लिए किंकर्तव्य विमूढ़ हो गया। सहसा सारी कठोरता न जाने कहां विलीन हो गई। सरस दृष्टि से परिचारिका की ओर देख कर कहा—"बाई जी कहां होंगी इस वक्त?"

"हुजूर सब जानते हैं मेरी जुबान से ही क्यों कहलाना चाहते हैं?" लज्जाजनित रक्तिम आभा से परिचारिका का चेहरा आभासित हो उठा।

"क्या बाई जी को सूचित करने का कोई उपाय नहीं है?"

"शाहजादा साहब की खिदमत में हैं वह इस वक्त, उन्हीं का हुक्म है कि जो भी आए वापस जाने को कह दिया जाए।"

"तब तो कदाचित यह तुम्हारी ही कृपा का परिणाम है कि मैं अभी तक हवेली से बाहर नहीं कर दिया गया।" कह गिरधर धीरे से मुस्कराया।

"हुजूर का ही तो सब कुछ है यहां का। हुजूर के साथ ऐसे पेश आने की कौन हिमाकत कर सकता है। हुजूर की एक नजरे इनायत के लिये तो शहर के बड़े-बड़े रईस तरसते रह जाते हैं। यह तो मेरी खुश किस्मती है कि हुजूर ने कनीज की फिजूल बातों में अपना इतना वक्त जाया किया।"

गिरधर की स्थिति शाहजादे के पश्चात् की-सी थी।

"बस! इसी बात का तो दुख है कि इतनी जिन्दगी व्यर्थ गई। समय का सदुपयोग तो तुम्हारे साथ बात करने में है। आज महसूस कर रहा हूँ कि पहले क्यों न मुलाकात हुई तुमसे।"

परिचारिका पानी-पानी हो रही थी। अप्रत्याशित सौभाग्य की

उपलब्धि ने उसे विक्षिप्त-सा कर दिया था। सितारा के संसर्ग द्वारा अर्जित अनुभव का प्रयोग किया उसने—"हुजूर ऐसे कब तक खड़े रहेंगे ?"

"जब तक तुम खड़ी रखोगी।"

"तशरीफ ले चलें सरकार।" सामने की ओर संकेत किया परि-चारिका ने।

कक्ष में प्रविष्ठ होने के पूर्व ही गिरधर ने अनुमान व्यक्त किया "कहीं हमलोगों की बात-चीत से शाहजादा साहब और..........?"

"आप फिक्र न करें। उनका कमरा इस कमरे के पांच कमरों के बाद पड़ता है। कोई भी आवाज वहां तक नहीं पहुँच सकती।"

"आस-पास कोई नौकर-चाकर तो नहीं...........?"

"हुजूर हमीदा के साथ हैं। किसकी मजाल जो आस-पास फटक तक सके। अगर कोई हिमाकत करे भी तो बोटी-बोटी नुचवा कर रख दूँ।"

"किसकी बोटी नुचवा रही है हमीदा ?" सहसा सितारा ने अन्दर के कक्ष से आ पूँछा।

हमीदा सकते में आ गई। उसका स्वर फूटने भी न पाया था कि गिरधर को देख सितारा बोली—"मेरी गैरहाजिरी में हमीदा वेजा पेश तो नहीं आई?"

वर्तमान स्वर और स्वरूप के आधार पर सितारा ने अनुमान व्यक्त किया।

"हमीदा से आप ऐसी उम्मीद क्यों करती हैं ?"

"यह तो हुजूर की नजरे इनायत है कनीज पर फिर भी हमीदा जरा शोख मिजाज की है। डरती रहती हूँ कि कहीं..........।"

व्यर्थ की बातों में गिरधर अब और अधिक समय न नष्ट करना चाहता था, फौरन अपना अभिप्राय व्यक्त किया—"हुजूर तो शायद

आराम करना रहे होंगे ?"

"जी हां, आंख लगने को ही थी कि आप लोगों की आवाज सुन आना पड़ा।"

हमीदा कांप रही थी।

"मगर हमीदा तो कह रही थी कि उस कमरे तक आवाज पहुंच ही नहीं सकती।"

"बचपना है अभी इतनी तमीज कहां कि सन्नाटे की हालत में हल्की आवाज भी दूर तक सुनी जा सकती है ?"

"तब तो मैं आप लोगों के विश्राम में बहुत बड़ी बाधा सिद्ध हुआ आकर।" "शाहजादा साहब नाराज तो नहीं हो रहे थे ?"

"आप से भी कहीं वह नाराज हो सकते हैं ! आपकी तो वह तारीफ करते नहीं थकते। न जाने कितनी बार तारीफ कर चुके है मुझसे। मुझे तो कुछ ऐसा लगने लगा है कि वह आप से डरते हैं।"

"आप भी गजब कर रही हैं। कहीं शाहजादे साहब से न कह दीजियेगा। वह बहुत ··· ··· ।"

"अगर कह दिया हो तो ········ ?"

"नामुमकिन, ऐसी ना समझी आप कभी नहीं कर सकतीं।

"कभी–कभी नामुमकिन भी, मुमकिन बन जाता है।"

"तो क्या वाकई आप ने कह दिया है ?"

"घबड़ाइये नहीं, उन्होंने सुनकर नाराज होने की बनिस्बत खुशी ही जाहिर की थी। और कहा था········।"

"क्या कहा था ?" गिरधर का औत्सुक्य फूट पड़ा।

"वह आप को अपना सबसे बड़ा हमदर्द समझते हैं।

"दरअसल ?"

"आप मुझसे क्या उम्मीद रखते हैं ?"

"आप सच ही कह रही हैं।" गिरधर का स्वर सहसा धीमा हो गया था—"मुझे आप पर पूरा विश्वास हैं, मगर आपने यह बता कर मुझे वेचैनी में डाल दिया है।"

"क्यों ?"

"जब तक मैं अपने विगत आचरणों के लिए उनसे क्षमा याचना नहीं कर लूंगा, तब तक मेरी वेचैनी दूर न होगी।"

'गुस्ताखी माफ हो। आप भी अजीव किस्म के इन्सान मालूम देते हैं। माफी माँगने की क्या जरूरत ? जो आप की तारीफ करे, उसी से आप माफी मांगना चाहते हैं ?"

'मैं अपने स्वभाव से मजवूर हूँ। मुझे बड़ी वेचैनी अनुभव हो रही है।"

"आप ऐसे मिजाज के इन्सान हैं, इस वावत उन्होंने मुझसे कभी कुछ नहीं कहा।"

"अगर आपको कष्ट न हो तो हुजूर को मेरी उपस्थिति से अवगत करा दीजिए जाकर" अचूक अस्त्र चलाया गिरधर ने।

"जाना ही पड़ेगा।" परास्त-सी होकर सितारा चल पड़ीं।

गिरधर ने आश्वस्त हो दीर्घ सांस ली और प्रतीक्षा करने लगा।

कुछ ही क्षणों में सितारा ने उपस्थित हो सूचित किया—"हुजूर वहीं याद फरमा रहे हैं आपको।"

सितारा की बात सुनते ही गिरधर उस द्वार की ओर, जिधर से सितारा आई थी, ऐसे लपका जैसे अकाल ग्रस्त प्राणी किसी अनाज के दाने पर झपटता है। परन्तु गिरधर अन्य कक्ष में प्रवेश भी न कर पाया था कि सितारा की हँसी ने रोक लिया उसे। स्तब्ध हो पीछे मुड़ कर देखा तो सितारा को कहते सुना—"आप अनजान जगह में हैं। अकेले शाहजादा साहब तक नहीं पहुँच सकेंगे।"

गिरधर सितारा की ओर ऐसी दृष्टि से देख रहा था जैसे वह कह रहा हो "तो फिर आगे-आगे चलो न। खड़ी देर क्यों कर रही हैं ?"

सितारा ने भी जैसे दृष्टि की मूक भाषा पढ़ ली हो। वह गिरधर के स्पष्ट रूप से कुछ भी कहे बिना मार्ग निर्देशन हेतु चल पड़ी। शाहजादा तक पहुँचने में गिरधर को ऐसे विचित्र मार्ग से होकर गुजरना पड़ा कि यदि उसमें एक-दो बार आने जाने के उपरान्त भी अकेले आने को कहा जाता तो कदाचित ही सफल होता। विचित्र मार्ग था वह। अन्ततोगत्वा गिरधर पहुंच ही गया उस कक्ष में जहाँ शाहजादा एक विशाल पर्यंक पर औंधे मुँह पड़ा था। देखते ही गिरधर का समस्त संकल्प क्षीण पड़ गया। कुछ क्षण किंकर्तव्य विमूढ़ हो खड़े देखते रहने के उपरान्त गिरधर ने दृष्टि विनिमय द्वारा ही अपना अभिप्राय व्यक्त किया। सितारा ने स्पष्ट अस्वीकार कर मुस्करा दिया। उस क्षण की मधुर मुस्कान भी गिरधर को अप्रिय लगी। गिरधर ने पुन: शाहजादे की ओर देखा। ऐसी विषम स्थिति का सामना कभी करना नहीं पड़ा था उसे, शिष्टाचार की कदाचित् अनभिज्ञता के कारण झिझक थी उसमें कुछ क्षणों तक तो वह झिझक का शिकार रहा' फिर साहस बटोर प्रत्येक सम्भावित स्थिति का सामना करने के लिए कटिबद्ध हो उसने पैर पटक जोर से खाँसा। प्रयास निष्फल गया। गिरधर पराजय स्वीकार करने वाला था नहीं; पुन: पूर्व क्रिया दोहराई; पर शाहजादे की स्थिति में कोई परिवर्तन न आया। गिरधर ने दृष्टि उठा सितारा की ओर देखा तो वह खड़ी मुस्करा रही थी। सितारा की मुस्कान गिरधर को अपने पौरुष को चुनौती-सी प्रतीत हुई। वह भावावेश में आ कह उठा —"हुजूर सो रहे हैं क्या ?"

शाहजादे के कान में फिर भी जूँ न रेंगते देख सितारा की हास्य ध्वनि गिरधर के कर्ण-कुहरों में प्रवेश कर गई। गिरधर ने सितारा को देख शाहजादे की ओर देखा और तत्क्षण किसी अकल्पनीय आशंका

से सिहर उठा। आशंका जनित अप्रत्याशित परिणाम से उत्तेजित हो उसने आगे बढ़ शाहजादे को पकड़ हिला-हिला कहा—"हुजूर...... हुजूर।"

शाहजादे ने करवट ली। नेत्र बन्द किये ही उसका स्वर फूटा—'ऊ ऽ ऽ ऽ कौन है ?"

"मैं हूँ हुजूर, गिरधर।"

शाहजादे ने नेत्र खोल दिये, अप्रत्याशित रूप से घबड़ा कर उठ बैठा और पूंछा—"गिरधर ! तुम ?"

"जी हजूर।"

"यहाँ ?"

"जी हाँ, बड़ा गजब हो गया है।"

"क्या हो गया है।"

"दिल्ली पर जहाँदारशाह का अधिकार हो गया है।"

"और अब्बाजान........?"

बात काटकर गिरधर ने कहा—"शायद अब वह इस दुनियाँ में नहीं हैं।"

शाहजादा पलंग से उछल कर फर्श पर आ रहा और गिरधर के दोनों कंधे पकड़ अविश्वास भरे स्वर में पूँछा–"दरअसल ऐसा हो गया है ?'

"जी हाँ, खबर तो कुछ ऐसी ही मिली है।"

गिरधर के कंधे छोड़ घूमकर दूसरी ओर कुछ क्षण तक निरन्तर देखते रहने के पश्चात् शाहजादे ने अपना मौन भंग किया-"क्या फैसला किया है गिरधर तुमने?"

गिरधर को अपनी बात कहने का अवसर समझ में आया। वह सोत्साह बोला-"अगर यह खबर सच है तो आपको वही करना है जो किसी भी उत्तराधिकारी को करना चाहिये।"

"मतलब ?" समझते हुए भी शाहज़ादे ने प्रश्न कर दिया।

"हमले की तैयारी करना है हुजूर को।"

"गिरधर जानते हो, क्या कह रहे हो ? हमले का मतलब होगा शाही ताकत से टकराना। शायद अभी तुम शाही फौजी ताकत से वाकिफ नहीं हो, वरना..........।"

"शाही फौजें ताकतवर ही अगर होतीं तो दिल्ली के तख्त का मालिक जहाँदरशाह न होता।"

"यह बात पते की कही तुमने। मालूम होता है कि शाही फौज कमजोर हो गई है।" गिरधर की बात सुनते ही शाहज़ादे फर्रुखसियर का चेहरा अप्रत्याशित रूप से चमक उठा। किन्तु क्षण भर में ही उत्तेजना न जाने कहाँ विलीन हो गई और नैराश्यपूर्ण स्वर में कहा—"हाथी कितना कमजोर होगा, गधे से ज्यादा ताकतवर तो हर हालत में रहेगा ही। शाही फौज की ताकत में कितनी कमी आगई होगी, हमारे मुकाबले में तो फिर भी ताकतवर होगी ही। तुम किस ताकत पर शाही फौज का सामना कर सकते हैं ?"

"हुजूर, यह गम्भीर मामला है। इतनी शीघ्र कुछ भी नहीं कहा जा सकता। महल में तशरीफ ले चलिये, और लोगों से भी सलाह-मशविरा कर लिया जायेगा।"

गिरधर की ओर से दृष्टि हटा सितारा को देख फर्रुखसियर ने कहा-"अब चलता हूँ जानेमन। मौका मिला तो रात तक....।"

"हुजूर, क्यों तकलीफ उठाते हैं? मैं खुद ही क्यों न हुजूर की खिदमत में हाजिर हो जाया करूँ।' बीच में ही सितारा बोली।

"नहीं तुम, अभी बेगम साहिबा के मिजाज से वाकिफ नहीं हो। तुम्हें देखते ही वह जमीन सिर पर उठा लेंगी। मेरी तुम्हारी और अपनी जान एक करने पर उतारू हो जायेंगी। बड़ी गुस्सेबाज है वह, क्या से क्या कर उठायेंगी, कुछ कहा नहीं जा सकता।"

"एक बार अजमाने तो दीजिये ।"

"शेरनी की माँद में हाथ डालना अकलमन्दी नहीं है सितारा। खामखाह अपनी जिन्दगी खतरे में डालना चाहती हो ।"

"हुजूर की जैसी मर्जी ।". लम्बी साँस छोड़ी सितारा ने ।

नैराश्य सागर में डूबी हुई सितारा को आश्वासन देने के अभिप्राय से फर्रुखसियर ने कहा—"यकीन रक्खो. तुम्हारे वगैर मैं जिन्दा नहीं रह सकता सितारा ।"

"हुजूर ।" प्रेमाभिभूत हो सितारा फर्रुखसियर के सीने से जा लगी।

गिरधर सिर नीचा किये खड़ा था ।

सितारा के बालों को अपनी उँगलियों से उलझाते-सुलझाते हुये शाहजादे ने कहा-"जल्दी ही ख्वाहिश पूरी होगी तुम्हारी ।"

सितारा ने सिर उठाया तो शाहजादे की दृष्टि सितारा के सुदीर्घ सजल नेत्रों से जा टकराई। शाहजादे का दिल पसीज उठा। सितारा के कपोलों पर प्यार के अनेक चिन्ह अंकित करते हुये शाहजादे ने कहा-"रात को इन्तजार करना ।"

गिरधर शहजादे के पीछे-पीछे नीचे की ओर अग्रसर होने लगा।

८

महल में प्रवेश करने पर फर्रुखसियर को सूचना मिली कि कुछ व्यक्ति दिल्ली से आये हैं जो प्रतीक्षागृह में बैठे हैं। फर्रुखसियर ने प्रतीक्षा गृह की ओर कदम बढ़ा दिये। कक्ष में प्रवेश करते ही मुनीम-खाँ को अपने स्वागत में खड़ा देख लपक कर फर्रुखसियर ने बाहों में भर लिया। क्षण मात्र में पृथक हो मुनीम खां के चेहरे की ओर देख फर्रुखसियर ने कहा—"चाचाजान! आपकी उम्र बहुत लम्बी है।"

"क्यों बेटा?"

"अभी-अभी रास्ते में मैंने आपको याद किया था और आप सामने खड़े हैं।"

मुनीम खां को बहादुरशाह का प्रधानमन्त्री बनने का सौभाग्य प्राप्त हो चुका था। अपने प्रधान मन्त्रित्व काल में मुनीम खां ने ऐसी प्रतिष्ठा और ख्याति अर्जित कर ली थी कि अधिक अवस्था प्राप्त व्यक्ति तो खां साहब के नाम से पुकारते थे उन्हें और शेष 'चाचाजान' सम्बोधन द्वारा ही सम्बोधित करते थे। बहादुरशाह के समय से ही फर्रुखसियर-मुनीम खाँ को 'चाचाजान' कहा करता था। मुनीम खां के अधिकांश बाल पक चुके थे। चन्द्रमा में कालिमा की भांति कहीं-कहीं ही सिर में कालिमा का आभास मिलता था। अवस्थानुरूप स्वर में कहा उन्होंने-"क्या करूँगा लम्बी जिन्दगी लेकर बेटा? रखा ही क्या है अब जिन्दगी में? क्या-क्या नहीं देखा है इन आँखों ने?"

"हाँ चाचाजान! मुझे तो याद ही नहीं रहा। आप तो दिल्ली से ही आ रहे होंगे? क्या खबर है वहाँ की! लोगों का कहना है कि

चाचाजान जहांदारशाह का कब्जा हो गया है वहां, और अब्बा....?"

"हां बेटा ! इस धोखे की दुनियां में कुछ भी नामुमकिन नहीं, जो कुछ सुनने में आया है, सच है।"

"लेकिन ताज्जुब है कि मुझे कोई खबर अभी तक नहीं मिल सकी। आज ही किसी घोड़े बेचने वाले ने यहां आकर खबर फैलाई है।"

"यही गनीमत समझो कि खबर देर-सवेर मिल तो गई, वरना सालों गुजर जाते और यहाँ तक खबर पहुँच भी न पाती।"

"क्यों चाचाजान ?"

"जुल्फिकार खां ने चारों तरफ सरहदों पर ऐसा पहरा लगा रखा है कि दिल्ली का एक भी आदमी बाहर नहीं जा सकता। एक-एक अमीर को पकड़-पकड़ कत्ल करवा दिया गया है। न जाने कैसे जान बचा कर दो महीने में यहां तक पहुँच पाया हूँ।"

"दो महीने हो गये ! मगर यह सब हो कैसे गया चाचाजान ?"

"बेटा ! अब क्या कहूं, जुबान नहीं खोलनी चाहिये मरे हुये इन्सान की बाबत। जो कुछ भी हुआ, सब तुम्हारे अब्बाजान के सबब हुआ। उन्होंने मौके पर हमला न करने दिया। मैं उनके 'जरा ठहरो' के धोखे में ही ठहरा रह गया और दुश्मन ने मौके से फायदा उठाया।"

बहादुरशाह के दूसरे पुत्र अजीमुश्शान शाह की एक आदत थी कि जब कोई उसके पास कुछ निवेदन करने आता था तो निवेदन सुनने के पश्चात सदा 'जरा ठहरो' ही कहकर रह जाता था।" मदिरा की मादकता के परिणाम पर प्रकाश डाला मुनीम खाँ ने।

"जहांदारशाह बहुत ताकतवर है क्या चाचाजान ?"

"रंडी का गुलाम भला क्या ताकतवर होगा ! तकदीर की बात है जो दिल्ली का बादशाह बन बैठा है, वरना लाल कुँवरि के दामन की साया में साँस लेने वाले इन्सान की औकात ही क्या।"

'यह लालकुँवरि कौन है ?"

"हिन्दू रण्डी है बेटा। उसी के हाथ में हुकूमत की बागडोर है इस वक्त। जहांदारशाह तो बेदाम का गुलाम है उसका, जैसा वह नचाती है वैसा ही नाचता है वह।"

"आपने तो देखा ही होगा उसे ?"

"नहीं बेटा, मैं तो मैदाने जंग में इस बुरी तरह घायल हो गया था कि सारे जिस्म में जख्म ही जख्म थे। पूरे डेढ़ महीने चारपाई पर पड़ा रहा हूँ। पड़े-पड़े जो कुछ सुनने को मिला, उसी की बुनियाद पर इतना कहा जा सकता है कि है बड़ी चालाक औरत। अपनी जिन्दगी भर की कमाई फौज तैयार करने में खर्च कर दी उसने, उसी फौज की मदद से आज वह हिन्दुस्तान की नूरजहां बनी बैठी है।"

"आप अब भी कमजोर मालूम हो रहे हैं। इस गाव तकिये का सहारा ले लीजिए।" फर्रुखसियर ने गाव तकिए की ओर संकेत किया।

"यह तो उम्र का तकाजा है बेटा। दिन पर दिन कमजोर ही होना है अब।"

"ऐसा क्यों कहते हैं चाचाजान ! आप ही का तो भरोसा है इस समय।" गिरधर का स्वर था यह।

गिरधर की ओर संकेत कर मुनीम खां ने प्रश्न किया—"यह कौन है बेटा ?"

'गिरधर को नहीं पहचानते आप ? मंगलसिंह का लड़का है।"

"पगल है यह ! कितना बड़ा हो गया है ! छोटा-सा था तब देखा था।"

"चाचाजान ! गिरधर बड़ा बहादुर है। भयानक से भयानक जंगली जानवरों को निहत्थे मार गिराता है; हाथियों की सूँड़ तो ऐसे उमेठ देता है कि हाथी चिग्घाड़ कर भागता नजर आता है, कितना ही तेज बहने वाला दरिया क्यों न हो, गिरधर सीधे तैर जाता है।"

"क्यों नहीं—क्यों नहीं ! बहादुर बाप का बेटा बहादुर तो होगा ही। मंगलसिंह कौन कम ताकतवर थे। एक दफे का किस्सा अब भी याद है मुझे। मैं मंगलसिंह के साथ एक गाँव से गुजर रहा था। दोपहर का वक्त था, धूप काफी तेज थी, प्यास के मारे गला सूखने लगा था। दूर से ही बस्ती के पास एक कुआँ नजर आया। हम लोग उसके पास गए। शायद बस्ती भर में वही एक अकेला कुआं था, क्योंकि उस दोपहर में भी काफी लोग पानी भर रहे थे। अच्छी-खासी भीड़ थी उस कुयें पर। हम लोग भी जा पहुँचे वहां। एक पानी भरने वाले से हम लोगों ने पानी पिलाने को कहा। वह अपना डोल रस्सी से खोल पानी पिलाने के लिए तैयार ही हुआ था कि कहीं से एक साँड़ आता दिखाई पड़ गया किसी को। बस ! फिर क्या था। मच गया हल्ला। जो जैसा था सिर पर पांव रख कर भागने लगा। डोल लुढ़कते-पुढ़कते दूर जा गिरे। पानी पिलाने वाला भागते—भागते हम लोगों को भी भागने को कह गया, पर हम लोग भागे नहीं। मैंने मंगलसिंह की ओर देख पूँछा कि क्या विचार है ! मंगलसिंह ने कहा कि साँड़ ही तो है। मंगलसिंह का इतना कहना था कि साँड़ दस गज के फासले से ही हम लोगों को देख फुफकारा। बड़ी भयानक थी फुफकार उसकी। कुत्तों के भूँकने की आवाज दूर-दूर से आ रही थी। साँड़ की फुफकार हम लोगों को होशियार करने के लिए काफी थी। हम लोगों को हटते न देख सांड़ दौड़ा और देखते-देखते आ पहुँचा हम लोगों पर। वाकई सांड़ ही था वह। ऐसा साँड़ मैंने दूसरा नहीं देखा। बड़ा लम्बा-चौड़ा था वह। उसकी लम्बी-लम्बी सींगे भालों की तरह नुकीली थीं। मैंनें देखा कि मंगलसिंह के दोनों हाथों में उसकी दोनों सींगे थीं। मंगलसिंह को कभी वह दस-बीस कदम पीछे रेल देता और कभी मंगलसिंह उसे खदेड़ते चले जाते। बराबर का जोड़ था दोनों का, रह-रह कर फुफकार उठता था साँड़। मंगलसिंह भी मगर कम न था। क्या फुरती थी शरीर में। ताकत और

फुर्ती एक साथ अगर कहीं देखने में मिली तो मंगलसिंह के ही जिस्म में। दोनों भिड़े हुए थे। मैंने कई बार कोशिश की कि अपना भाला फेंक कर मारूं, मगर इस डर से वैसा न कर सका कि अगर कहीं चूक गया तो मंगलसिंह को लगेगा जाकर। मैं एक ओर खड़ा दोनों की फुर्ती देख रहा था। सौ-सौ दो-दो सौ गज के फासले पर चारों ओर आदमी औरतों और बच्चों का मेला-सा लग गया था। सब सांस रोके देख रहे थे। मगर किसी को आगे बढ़ने की हिम्मत न पड़ रही थी। सूरज, जो सिर पर चमक रहा था, धीरे-धीरे पश्चिम की ओर झुकने लगा। धूप की तेजी में कमी आती जा रही थी। मंगलसिंह का शरीर लहू-लुहान हो चुका था। सांड़ के बदन से भी कम खून न बह रहा था। चारों टांगें बुरी तरह जख्मी हो गई थीं। कुछ ही देर में चारों ओर से शोर आना सुनाई दिया। मैंने मंगलसिंह और सांड़ की तरफ देखा तो मंगलसिंह सांड़ की सीगों को टेढ़ा कर रहे थे और सांड़ सींगो को सीधा ही बनाये रखने की भरकस कोशिश कर रहा था। दोनों की ताकत की अजमाइश का वक्त था वह। आखिर कार दोनों सींगें मंगलसिंह के हाथों में टूट कर आ गई। सींग टूटते ही सांड़ सिर के बल हुमका; मंगलसिंह की फुर्ती अब भी वैसी ही थी; फौरन सीगें फेंक गरदन धर दबाई और दोनों हाथों से मरोड़ना शुरू किया। देखने लायक नजारा था वह। भीड़ में तमाम तरह के बाजे बजने शुरू हो गये थे। जिसे, जो मिला था, उसे ही वह, पीट रहा था। जैसे-जैसे गरदन मुड़ती जा रही थी, सांड़ के पैर तिरछे होते जा रहे थे और भीड़ नजदीक आती जा रही थी। देखते-देखते मंगलसिंह ने गिरा दिया सांड़ को जमीन पर। सांड़ की आँखें लाल सुर्ख थीं। मैंने मंगलसिंह की तरफ भाला बढ़ाया, मगर मगलसिंह भी एक जिद का बहादुर था। हाँफते हुए कहा उसने "हथियार से मारा तो क्या मारा। अब तो यह कब्जे में आ गया है। अभी इसका कचूमर निकालता हूँ।" मंगलसिंह ने जोर से दांती पीसे और न जाने

क्या किया कि सांड़ के चारो पैर फैल गये।

"बड़ी तेजी से लोगों ने चारो तरफ से घेर लिया आकर हम लोगों को। मंगलसिंह आ खड़े हुए। मंगल सिंह की शक्ल देखने लायक थी। पूरा जिस्म खून से लाल था। चेहरे पर बहादुरी की झलक थी। भीड़ में से एक बुजुर्ग ने आगे बढ़ मंगलसिंह की पीठ ठोंकी और कहा— "शेर को सियार साबित कर दिया बेटा तुमने। आज तुमने उस सांड़ को मार गिराया है जिसने सौ से ज्यादा आदमी-औरतों को खदेड़-खदेड़ कर मार डाला है। इससे हम सब लोग इतने डरे हुए थे कि घर से बाहर निकलना तक मुश्किल था। अगर कोई झूँठ-मूँठ भी इसका नाम ले देता था तो बुरी तरह से सब भागते नजर आते थे, सो तो तुमने देख ही लिया होगा। हौवा बना हुआ था गांव भर के लिए। बेटा ! तुमने गाँव वालों को नई जिन्दगी बख्सी है। गांव की सैकड़ों-हजारों आत्मायें तुम्हें दुआ दे रही हैं। हम गरीब किसानों के पास रखा ही क्या है ! जो है तुम्हारी नजर है।" कहते ही उस बुड्ढे ने बेशकीमती हार अपने गले से उतार मंगलसिंह के गले में डाल दिया। देखते-दखते सैकड़ों थालियाँ लिए औरतें आगे बढ़ने लगीं। किसी में कुछ था, किसी में कुछ। किन्हीं-किन्हीं में तो चिराग जल रहे थे। जो जितने निकट आ सकीं, आ-आ कर चिराग वाली थाली घुमाने लगीं। सैकड़ों थालियां दौलत से भरी मंगलसिंह के कदमों पर पड़ी थीं। मंगलसिंह को उस दिन वह चीज हासिल हुई जो मैदाने जंग में सैकड़ों-हजारों दुश्मनों को मार कर भी हासिल न हो सकी थी। मंगलसिंह ने सारी दौलत गरीबों में तकसीम कर दी थी। ऐसे मंगलसिंह की औलाद है यह गिरधर ; बाप से बढ़कर तो औलाद को होना ही चाहिये।"

मुनीम खां द्वारा मंगलसिंह की वीरतापूर्ण घटना का अत्यन्त सजीव वर्णन सुन सभी विस्मय विमुग्ध थे। गिरधर के चेहरे पर विशेष रूप से गौरवपूर्ण भाव आभाषित होने लगा था। भावावेश में आकर

गिरधर ने कहा—"तो फिर अब क्या होना चाहिये चाचाजान ?"

"किस बावत बेटा ?"

"दिल्ली पर हमला जो करना है।"

"होना तो जरूर चाहिए, मगर अच्छी खासी ताकत की जरूरत है। कितने जवान होंगे तुम्हारे पास ?"

"यही लगभग दो हजार।"

"दो हजार जवान तो चन्द लहमों में उड़ जायेंगे।"

"तो फिर होना क्या चाहिए ?"

"बेटा, मेरा तो दिमाग ही आज-कल काम नहीं करता। समझ में नहीं आता कि क्या करूँ, क्या न करूँ।"

"आप ही तो बड़े बुजुर्ग है हम लोगों के बीच। आपका अनुभव हम लोगों के लिए बहुत महत्वपूर्ण सिद्ध होगा।"

"सो तो ठीक है बेटा, मगर बिना फौजी ताकत के कुछ भी मुमकिन नहीं।"

"फौजी ताकत तो बढ़ाई जा सकती है। आज ही भरती शुरू कर देंगे।"

"नये नवजवानों से शाही फौज के मंजे सरदारों को मात नहीं दी जा सकती।"

"खामोश हाँथ पर हाँथ धरे बैठे रहना भी तो मुनासिब नहीं है।"

"बजाँ फरमा रहे हो बेटा, मगर बिना ताकत के तो हाथ-पैर भी नहीं हिलते डुलते।"

"अच्छा चाचा जी, क्या ऐसा कोई आस-पास नहीं है जो हमारी सहायता कर सके ऐसे मौके पर ?"

कुछ छण तक सोच सन्देहात्मक आशा मुनीम खाँ ने व्यक्त की —"मदद मिल सकती है और उम्मीद भी है कि शायद उन दोनों की मदद से ख्वाब भी पूरे हो जाँय ; मगर खतरे की भी गुन्जाइश कम

नहीं है ।"

"किनसे सहायता मिल सकती है ?"

"बिहार के सूबेदार सय्यद हुसेन अली और इलाहाबाद के सूबेदार सय्यद अब्दुल्ला खां से । ये दोनों सगे भाई हैं; बादशाह सलामत के हमेशा खैरख्वाह भी रहे हैं ।"

"परन्तु खतरे की क्या सम्भावना है उनसे ?"

"दोनों भाई दो जिस्म एक रूह हैं,एक दूसरे पर जान देने को हमेशा तैयार रहते हैं । और सबसे खास बात यह है कि छोटा भाई हुसेन अली तुम्हारी ही तरह बहादुर हैं, हमेशा तलवार पर ही यकीन करता है, जब कि बड़ा भाई अब्दुल्ला बहुत ही धूर्त और सियासी मामलों में चालाक है । अगर दोनों एक हो गये तो आस्तीन के सांप सावित होंगे ।"

"मगर हम दोनों को एक होने ही क्यों देंगे ? हमें इस समय सिर्फ ऐसे व्यक्ति की सहायता की जरूरत है जो सैनिक दृष्टि से शक्तिशाली हो । अब्दुल्ला के पास हम जायेंगे ही नहीं ।"

"मगर हुसेन तो जायेगा, उसके बिना वह एक कदम भी नहीं उठाने का ।"

"तो फिर आप ही कोई रास्ता निकालिए न ।" गिरधर कह कर शान्त हो गया ।

मुनीम खाँ अपना कोई सुझाव पेश कर सकें उसके पूर्व ही फर्रूख-सियर बोल उठा—"जब तक आप हैं, मुझे किसी से डरने की कोई जरूरत नहीं । सैय्यद भाई आप से ज्यादा अनुभवी और होशियार थोड़े ही हैं । हमें पहले मौजूदा जरूरत का ख्याल करना चाहिये ।"

मुनीम खां ने अन्य उपाय न देख फार्रूखसियर की बात का ही समर्थन किया—"ऐसा ही सही । किसी को बिहार भेज कर हुसेन के

रुख की जानकारी हासिल कर ली जाय।"

"किसी को भेजने की अपेक्षा क्यों न हम सेना के साथ यहां से कूंच कर दें। हुसैन तैयार हो ही जायेगा। उसे साथ लेते हुए आगे बढ़ेंगे। व्यर्थ में समय नष्ट करना उचित नहीं।"

"गिरधर की बात भी कुछ समझ में आ रही है?" फर्रुखसियर ने अपनी सहमत प्रदान की।

मुनीम खाँ ने कोई विरोध न किया।

५

सुरा और सुन्दरी को ही जीवन का आदि और अन्त समझने वाला जहाँदारशाह विलासिता में आकण्ठ डूबा हुआ था। सत्ता दो शक्तियों बेगम लालकुँअरि और मन्त्री जुल्फिकार खाँ में विभक्त थी। जुल्फिकार खाँ लालकुँअरि का अधिक-से-अधिक सानिध्य प्राप्त करने की सतत चेष्टा किया करता था। लालकुँअरि मन्त्री के भाव को समझ निरन्तर दूर ही दूर रहने का प्रयास किया करती थी। दोनों अपनी—अपनी चालों में इस बुरी तरह फंसे थे कि कहाँ क्या हो रहा है, इस ओर ध्यान देने की फुरसत ही किसी को न थी। जब शक्ति के मूर्तमान रूप ही उदासीन थे तो अधीनस्थ कर्मचारियों से आशा की ही क्या जा सकती थी। वे भी सम्राट, बेगम और प्रधान मन्त्री का अनुसरण करने लगे थे। यहाँ तक कि सम्पूर्ण शासक वर्ग मदिरा--मोहनी का दास बना जीवन के दिन मस्ती से काट रहा था।

उदासीनता इस सीमा तक पहुँच गई थी कि फर्रूखसियर की सेनायें आगरे की सीमा से टकराने लगीं, फिर भी सम्राट की मोह-निद्रा भङ्ग न हुई। उपेक्षा का परिणाम वही हुआ जिसकी सम्भावना थी। युद्ध हुआ, पर व्यर्थ। शाही सेना के सैनिक रणाङ्गण में भी मदिरा-मोहनी का लोभ संवरण न कर सके। जिसने जिस ओर रास्ता पाया भागता नजर आया।

फर्रूखसियर को, दिल्ली की गद्दी पर अधिकार करते देर न लगी, न ही विशेष क्षति उठानी पड़ी। सिंहासनासीन होते ही फर्रूखसियर ने सहायकों के प्रति सर्व प्रथम कृतज्ञता व्यक्त की। सैय्यद भाइयों की महत्वपूर्ण सहायता के परिणाम स्वरूप सम्राट ने बड़े भाई अब्दुल्लाखाँ

को 'नवाब कुतबुल्मुल्क, यमीनुद्दौला, सैय्यद अब्दुल्लाखाँ, बहादुर ज़फ़र जंग, सिपहसालार यारे वफादार' की उपाधि से विभूषित किया और छोटे भाई हुसेन को 'उम्दानुल्मुल्क अमीरुल उमरा बहादुर फीरोजजंग सिपहसालार' उपाधि से समलंकृत किया। दोनों ही अपने-अपने गुणों के के आधार पर क्रमशः प्रधान मन्त्री और सेनापति के पद के अधिकारी बना दिए गए। अन्य अनेक महत्वपूर्ण पदों पर लुत्फुल्ला खां, मुहम्मद अमीन खां, तकर्रुबखाँ, मीरजुमला आदि की नियुक्तियाँ की गईं। गिरधर तो सम्राट का अङ्गरक्षक था ही वह उसी पद का अधिकारी बना रहा।

युद्ध के अन्तिम दृश्य उपस्थित होने के पूर्व ही जुल्फिकारखाँ आगरा क्षेत्र से दिल्ली की ओर भाग खड़ा हुआ। मन्त्री के इस आचरण को लालकुअँरि ने देख लिया था जिसका परिणाम यह हुआ कि वह शिविर में जहाँदरशाह को खोजती-खोजती युद्धस्थल तक जा पहुँची और सम्राट को साथ ले सुरक्षा की दृष्टि से दिल्ली को चल दी। एक ही गाड़ी में दोनों मार्ग में अपनी प्रारम्भिक आवश्यकताओं की पूर्ति करते किसी तरह दिल्ली पहुँचे। सम्राट के बहुत आग्रह करने पर लालकुँअरि मन्त्री के महल में शरणार्थ पहुँची। मन्त्री और उसके पिता असदखाँ ने बड़े प्रेम से स्वागत किया उनका और आत्मीयता प्रदर्शित की। जहाँदारशाह ने अपने को पूर्ण सुरक्षित समझ मदिरा का सहारा लिया। तीन दिन से पीने को मिली नहीं थी, खूब पी और वहीं फर्श पर लुढ़क रहे। मन्त्री तो इस अवसर की ताक में था ही। वह लालकुँअरि को घसीटता हुआ अन्दर-भाग में ले गया और अपनी अतृप्त अभिलाषा-पूर्ति की आकाँक्षा व्यक्त की। लालकुँअरि भी जीवन का मोह त्याग शक्ति भर प्रतिरोध के लिए प्रस्तुत हो गई। बेगम मन्त्री के चंगुल से बचने की कोशिश कर ही रही थी कि बाहर सैनिक आ उपस्थित हुए। असदखाँ ने बादशाह और बेगम की उपस्थिति की सूचना फर्रुखसियर

तक पहुँचा दी थी। जहांदारशाह को शत्रु के हाथों सौंप वर्तमान सम्राट का कृपा-भाजन बनने की अभिलाषा में उसने ऐसा किया था। बाहर शोर-गुल सुन लालकुँअरि को कोठरी में बन्द कर जुल्फिकार खां भी बाहर निकल आया और अब्दुल्ला खां तथा अन्य कर्मचारियों के साथ सम्राट फर्रुखसियर को उपस्थित देख खींसे निपोर स्वामिभक्ति प्रकट की—"हुजूर के लिए ही जहांदारशाह को कैद कर रखा है मैंने। आइये, अन्दर तशरीफ लाइये।"

सब ने अन्दर जाकर देखा कि जहांदारशाह नशे में बुत बना औंधे मुँह फर्स पर लेटा है। अब्दुल्ला ने लात की ऐसी ठोकर मारी कि जहांदारशाह सीधा हो गया और आंखें बन्द किये ही बुदबुदाया—"कौन है?"

"तेरा दुश्मन।"

यत्किंचित आँखें खोल जहांदारशाह ने उसी लहजे में कहा—"जा भाग यहाँ से, अभी मैं आराम कर रहा हूँ।"

"आराम के बच्चे, उठ।" जोर की एक ठोकर जमाई अब्दुल्ला ने।

जहांदारशाह का क्षण भर के लिये नशा हिरन हो गया। पूरी तौर से आँखें खोल देखा सबको। फर्रुखसियर के साथ अनेक अपरिचितों को दृष्टिगत कर प्रश्न किया—"कौन हो तुम सब, किसलिये आए हो यहाँ?"

"हुजूर को कैदखाने की हवा खिलाने के लिये।"

"चलो।" उठने का उपक्रम करते हुए जहांदारशाह बोला—"वहां तो कोई आराम में खलल डालने नहीं आयेगा?"

इसी बीच भीतर से दरवाजा जोर-जोर से भड़भड़ाने की ध्वनि आई। ध्वनि ने सबका ध्यान आकर्षित किया अपनी ओर।

अब्दुल्ला खां ने जुल्फिकार खां से रोबीले स्वर में प्रश्न किया—"कौन है अन्दर।"

"एक पागल कनीज है हुजूर।"

"इसकी बेगम कहां गई ?" अब्दुल्ला को लालकुंअरि के अन्दर होने का सन्देह हो गया था।

"पता नहीं, कहीं भाग गई होगी।"

द्वार भड़भड़ाने की ध्वनि शनैः शनैः तीव्रतर होती जा रही थी। एक क्षण के लिए भड़भड़ाहट रुकी और नारी-स्वर सुनाई पड़ा—"दरवाजा खोलो, मैं हूँ लालकुँअरि।" लालकुँअरि बाहर की बातों को सुन-सुन तत्क्षण बाहर निकलने के लिए व्याकुल हो रही थी।

अब्दुल्ला जुल्फिकार खां को रोषपूर्ण दृष्टि से देख सैनिकों को उसे गिरफ्तार करने का आदेश दे उस ओर बढ़ गया जिस ओर से दरवाजा भड़भड़ाने की ध्वनि आ रही थी। दरवाजा भली भांति खुलने भी न पाया था कि लालकुंअरि झपटी बाहर की ओर। अब्दुल्ला से टकराती वह जा लिपटी जहांदारशाह की कमर से और भयभीत दृष्टि से आस पास खड़े लोगों को देखने लगी।

अब्दुल्ला ने आकर कहा—'हुजूर, यही है बेगम लालकुअरि।" जुल्फिकार खां की ओर उन्मुख हो कहा—"क्यों बे, तू तो कहता था कि अन्दर पगली कनीज बन्द है ?"

जुल्फिकार खाँ भालों की नोकों के बीच अचल खड़ा था।

"दगाबाज, मक्कार! क्रोध से दांत पीस अब्दुल्ला खां ने तलवार का ऐसा हाथ मारा कि जुल्फिकार खां का सिर कटकर दीवाल से जा टकराया। अब्दुल्ला खां के अप्रत्याशित आचरण से सहसा सब सहम गये। वही अन्त अपना और जहांदारशाह का अनुमान कर लालकुंअरि जहांदारशाह के शरीर से बुरी तरह चिपट गई। रक्त से रञ्जित तलवार ले अब्दुल्ला उनकी ओर बढ़ा। लालकुंअरि अब्दुल्ला के उस स्वरूप को देखना न सहन कर सकी और अचेत हो लुढ़क पड़ी। अब्दुल्ला का हाथ उठा ही था कि फर्रुखसियर ने हाथ उठा ठहरने का संकेत किया और कहा—

"इतनी आसान मौत नहीं मिलनी चाहिये इसे। कैदखाने का मजा भी तो जरूरी है।"

लालकुंअरि की अचेतनावस्था भंग हो चुकी थी, विद्युत चालित यंत्र की भांति उठ खड़ी हुई और अनुनय-विनय भरे स्वर में बोली–'मुझे भी साथ ही उसी कैदखाने में डाल दीजिए।"

"ले जाओ दोनों को।" फर्रुखसियर का आदेश सुन दोनों को घसीटने की आवश्यकता नहीं पड़ी कर्मचारियों को।

कर्मचारियों से घिरे हिन्दुस्तान का बादशाह और उसकी बेगम नंगे पैर सड़क पर जा रहे थे, और दोनों ओर जनता उनकी दशा पर सम्वेदना प्रकट कर रही थी।

६

"सुबह-सुबह कैसे रतनचन्द ?" आशा के विपरीत रतनचन्द को अपनी सेवा में उपस्थित देख अब्दुल्ला खां ने आश्चर्य व्यक्त किया।

"यों ही हुजूर के दर्शन करने चला आया।"

रतनचन्द बनिया जाति का प्रमुख व्यापारी था। उसके अपार सम्पत्ति के स्वामी होने की बात दूर-दूर तक विख्यात थी। साधारण-तया लोगों की धारणा थी कि राजकोष से भी अधिक सम्पत्ति रतन-चन्द के पास है। रतनचन्द सहिष्णु तो था ही, सबसे प्रमुख विशेषता उसकी थी वर्तमान परिस्थिति के साथ समझौता करना। अवसर से चूकना तो उसने सीखा ही न था। किसी भी साधारण-से-साधारण अवसर को अपने बौद्धिक कौशल से स्वर्णिम अवसर में परिणित कर अप्रत्याशित लाभ उठाना उसके बायें हाथ का खेल था। उसे इस बात का भलीभांति ज्ञान था कि साम्राज्य की वास्तविक शक्ति किसके हाथ में है। सम्राट फर्रुखसियर की सेवा में सिंहासनारोहण दिवस के पश्चात एक बार भी उपस्थित न हुआ था वह: पर अब्दुल्ला खां की सेवा में उपस्थित होने से एक भी दिन न चूका था। सर्वप्रथम आगे बढ़ अब्दुल्ला खाँ का यदि किसी ने स्वागत किया था तो वह था रतनचन्द। पहले तो अब्दुल्ला खां ने रतनचन्द को सन्देह की दृष्टि से देखा, पर रतन-चन्द की सेवाओं ने उन्हें इतना अभिभूत कर दिया था कि उसी की प्रदान की हुई प्रत्येक वस्तु का उपभोग कर रहे थे अब्दुल्ला खाँ। रतनचन्द की छोटी-छोटी भीतर कीओर धंसी आंखे, मोटी चपटी नाक, सकरा मत्था और स्थूल शरीर को देख अब्दुल्ला खां ने अपनी

पूर्व निर्मित धारणा के अनुसार मुस्करा कर कहा - "रतनचन्द्र वक्त की कीमत पहचानते हैं, फिजूल वक्त जाया करना नहीं सीखा है।"

"हुजूर जो चाहें कह लें।" विनय की साकार प्रतिमा बन रतनचन्द्र ने अपने को परम आज्ञाकारी सिद्ध करने का अभिनय किया— "मैं सुबह–सुबह हुजूर की खिदमत में इसलिए हाजिर हो गया कि शायद हुजूर को किसी चीज की जरूरत हो। बड़े भाग्य से हुजूर की सेवा का मौका मिला है।"

"मगर तुम्हारी सेवा तो मैं कर नहीं पा रहा हूँ रतनचन्द्र।"

"यह आप क्या कह रहे हैं सरकार। सेवा का कार्य तो हम गुलामों का है हुजूर तो मालिक हैं।"

"नहीं रतनचन्द्र! मैं सोचता हूँ कि जब तुम मेरी हर जरूरत का इतना ध्यान रखते हो तो फिर क्यों न हम तुम्हारी ख्वाहिश पूरी करें।"

"बस! आपकी कृपा-दृष्टि ही काफी है सरकार। जो मुझे चाहिये था, मिल गया। हुजूर की खिदमत के अवसर से अधिक कुछ नहीं चाहिये मुझे!"

"तो क्या सिक्के ढालने का ठेका नहीं चाहते हो तुम?"

"चाहेगा भला कौन नहीं; मगर मैं नहीं चाहता कि हुजूर इसके लिए परेशान हों।"

"परेशानी की बात नहीं रतनचन्द, मैं इधर महसूस कर रहा हूँ कि बादशाह की नजर कुछ बदलती सी-जा रही है।"

"क्या कोई बात हो गई हुजूर?"

"बात क्या होनी है रतनचन्द! दम ही क्या है उसमें जो मेरे सामने आंख भी उठाये; फिर भी कल जब मैंने तुम्हारी ख्वाहिश उसके सामने रखी तो नाक भौं सिकोड़ने लगा। काफी देर तक इधर-उधर की बातें करता रहा। मगर मैंने आखिरी बार उसकी दिली

ख्वाहिश जाहिर करा ही ली।"

"वह क्या चाहते हैं ?" रतनचन्द्र के स्वर में चरम उत्सुकता थी।

"उसके चाहने न चाहने से क्या होता है। जो वह चाहेगा, वह हो थोड़े ही जायेगा।"

"बादशाह सलामत की मर्जी के खिलाफ

बीच में ही रतनचन्द्र की बात काट अब्दुल्ला खाँ ने कहा—"तुम भी निहायत डरपोक किस्म के इन्सान हो रतनचन्द्र। इस सल्तनत में वही होगा जो मैं चाहूँगा; बादशाह को वही करना पड़ेगा जो मैं कहूँगा। आखिरकार उसे हिन्दुस्तान की हुकूमत हासिल कराने में खून-पसीना किसने बहाया है ? मैं और मेरा भाई हुसेन अगर मदद न करते तो क्या यह कभी बादशाह बनने के ख्वाब पूरा भी कर सकता था। मैं उसे तीन दिन की मोहलत दे आया हूँ। तीन दिन बाद तुम्हें ठेका मिल जायेगा।"

"मैं नहीं चाहता कि मेरी वजह से हुजूर को बादशाह सलामत की

"रतनचन्द, बादशाह ऐसा इन्सान होता है कि उससे जितना दब कर रहो वह उतना ही सिर चढ़ता जाता है।"

"हुजूर हम तो रियाया हैं, रियाया के लिए बादशाह ईश्वर होता है। ईश्वर से कौन नहीं डरता ?"

"मेरे रहते रतनचन्द्र तुम्हें बादशाह से डरने की कोई जरूरत नहीं। अगर किसी किस्म का बेजा दबाव पड़े तो मुझसे कहना। मेरी मौजूदगी में तुम्हे किसी किस्म की तकलीफ नहीं होनी चाहिये।"

"हुजूर को तो मैं बादशाह से भी बढ़कर मानता हूँ।"

"और मुझे रतनचन्द?" सहसा हुसेन ने प्रवेश कर प्रश्न किया।

रतनचन्द्र ने फौरन उठकर हुसेन का अभिवादन किया।

स्थान ग्रहण कर हुसेन ने आगे कहा—"रतनचन्द ! आजकल घोड़े

बहुत ख़रीदने लगे हो ? क्या घोड़ों का भी रोजगार करना शुरू कर दिया है ?"

"सरकार को घोड़ों का बेहद शौक है न। हुजूर के लिये ही तो घोड़े खरीदे है मैंने। हुजूर जब हुक्म करें, मुआइने के लिये हाजिर करूं लाकर।"

"घोड़ों के शौकीन तो बादशाह भी हैं।" हुसेन ने कहा।

"होंगे, मगर हमारे हुजूर की बराबरी कौन कर सकता है ?"

"शहंशाहे हिन्दुस्तान भी नहीं?"

"छोटे मुँह बड़ी बात न हीं कहना चाहता सरकार। शौकीन होना बड़ी बात नहीं, शौकीन तो मामूली-से-मामूली इन्सान भी किसी चीज का हो सकता है, पर महत्व तो इस बात का होता है कि वह अपने शौक को किस हद तक पूरा कर सकता है। बादशाह सलामत के हजारों घोड़े आपके सिर्फ हीरा पर न्योछावर हैं। हीरा जैसा शानदार ख़ूबसूरत घोड़ा दूसरा इस दुनियां में सम्भव नहीं है।" इधर-उधर सतर्क दृष्टि से देख रतनचन्द्र ने दबे स्वर में कहा—"मगर हुजूर, हीरा की हिफाजत की खास जरूरत है।"

"क्यों, रतनचन्द ?

"जहांपनाह की निगाह हीरा पर पड़ चुकी है।"

"वाकई ?"

"भाई हुसेन ? रतनचन्द्र जैसा वफादार इन्सान सल्तनत में दूसरा नहीं। राई रत्ती खबर रखते हैं। सूरज की रोशनी की पहुँच के बाहर कोई चीज हो सकती है, मगर रतनचन्द की निगाह . . .।"

बीच में ही हुसेन बोल पड़ा—'भाईसाहब। तो फिर आप दखल न दीजियेगा। हीरा पर निगाह उठाने वाले की आंखें फोड़े बिना मैं रह नहीं सकता अब।"

हुसेन के उद्दण्ड स्वभाव से अब्दुल्ला भलीभांति परिचित थे। शान्त

करने के अभिप्राय से अब्दुल्ला ने कहा—"मगर किसी के देखने से क्या होता है। खूबसूरत चीज को तो दुनिया देखती है। देखने से किसी को रोका नहीं जा सकता है।"

"हुसेन रोक सकता है। हुसेन की तलवार रोक सकती है। सारी बादशाहत एक लहमें में खाक में मिला सकता हूँ।"

"हुजूर को तकलीफ उठाने की क्या जरूरत, जब तक यह गुलाम जिन्दा है। हुजूर के तो ऐश करने के दिन हैं। एक-से-एक नायाब सौ घोड़े हुजूर के दिल बहलाव के लिये अभी भेजवाये देता हूँ जाकर। साथ में एक सवार भी खरीद लिया है।"

"किसलिये ?"

"हुजूर, घोड़े पर चढ़कर उसने ऐसे-ऐसे करतब दिखाये कि देखने वाले दंग रह गये। बड़ा हुनरमन्द इन्सान है वह। घोड़ों की एक-एक नस से वाकिफ है।"

"तब तो आज ही हम देखेंगे उसका हुनर। भाईसाहब ! आप भी गुलाब बाग में तशरीफ लाइयेगा दोपहर तक।"

"जरूर-जरूर।"अब्दुल्ला ने आश्वासन दिया—"और मेरा भी कुछ ख्याल है रतनचन्द्र ?"

"यह भी कोई भूलने की बात है हुजूर ! आप की चीजें भी शाम तक सेवा में उपस्थित हो जायेंगी।"

"चलो, रतनचन्द्र! उस घुड़सवार को अभी देखना चाहता हूँ मैं।" रतनचन्द्र को हुसेन के साथ अब्दुल्ला का महल उसी क्षण छोड़ना पड़ा।

७

"हुजूर इस तरफ नहीं।"

"तो फिर किस तरफ हैदर ?"

"बस्ती की तरफ हुजूर।"

हैदर के कथानुसार फर्रूखसियर घूम गया। और धनुष पर बाण रख उसकी डोरी खींची। हैदर डोरी के साथ खिचता—सा बोला 'और जरा हुजूर, और।" कुछ रुक—"थोड़ा और।"

"आज कमाल कर दिया हुजूर ने।" तीर छूटते ही हैदर ने प्रशंसा की-"जरूर किसी हसीना को निशाना बनाया है आज आपने। तीर खाली नहीं जा सकता।"

अनेक प्रशंसात्मक भावनाओं में डूबता-उतराता फर्रूखसियर नीचे उतर आया। गाव तकिये का सहारा लेते ही हुक्के की नली मुँह में आ लगी। हुक्के से गुड़-गुड़ की ध्वनि निकलने लगी।

चवेला राम ने निश्चिन्तता पूर्वक बैठ कर कहा-"हुजूर ने पोशाक भी आज गजब की पहन रक्खी है।"

"जरा पोशाक में जड़े जवाहरातों की तरफ तो गौर फरमाइये।" तकर्रुब खाँ ने कहा।

"आप लोगों ने पगड़ी में लगे हीरों को तो देखा ही नहीं।"

"आप भी कमाल करते हैं,वह भला किसकी नजर से चूक सकते हैं। सबसे पहले तो उसी पर नजर पड़ती है देखने वाली की।"

"लेकिन नजर ठहर नहीं सकती।"

"ठहरेगी कैसे ? कोई मामूली हीरा है ? कल ही तो हुजूर ने दस लाख में खरीदा है इसे ।"

"अमाँ आप भी कीमत आंकना नहीं जानते । दस लाख तो इस हीरे पर न्योछावर हैं । इसने वह जगह हासिल की है कि दस-बीस करोड़ भी इसकी कीमत समझी जाय तो कम हैं ।"

"दरअसल तकदीर हो तो ऐसी ।"

"कलंगी तो ऐसी गजब ढा रही है कि कुछ कहते नहीं बनता ।"

"और मूरमें की बारीकी ?"

"वह तो हुजूर की सुरमेंदानी की सलाइयों का कमाल है ।"

"गिरधर नहीं लौटा अभी तक ?" अपने तीर का परिणाम जानने की उत्सुकता व्यक्त की बादशाह ने ।

"काफी दौड़ना पड़ा होगा आज ।"

"और फिर हुजूर ने रुख भी तो बदल दिया था ।"

"तुम्हीं ने तो कहा था ।"

"हुजूर का तीर नदी की तरफ जा रहा था । किसी मछली का ही शिकार हो पाता ।"

इसी बीच गिरधर ने प्रवेश किया । उसके अभिवादन समाप्त होने के पूर्व ही बादशाह पूँछ बैठे—"खाली हाथ ?"

"हुजूर का तीर कभी खाली गया भी है ?"

"कहां है ?" देखने की अभिलाषा व्यक्त की फर्रुखसियर ने ।

हैदर के अतिरिक्त अन्य सरदारों ने कक्ष त्याग दिया । गिरधर के संकेत पर आपाद मस्तक वस्त्राच्छादित सजीव काया ने प्रवेश किया । परिचारिका ने संकेत पाते ही अपना कार्य किया । परदा हटते ही फर्रुखशियर सौन्दर्य की सजीव प्रतिमा को देखते ही रह गया । कुछ क्षणों तक भली भाँति देखने के उपरान्त फर्रुखसियर ने प्रश्न किया—

"क्या नाम है तुम्हारा ?"

"लक्ष्मी।" अपहृत बाला का उत्तर था।

गिरधर अभिवादन करता पीछे हटता गया। हैदर की ओर संकेत कर फर्रुखसियर ने पूँछा—"इन्हें पहचानती हैं ?"

लक्ष्मी ने नकारात्मक सिर हिला दिया।

हैदर, समृाट के संकेत से परिचित था, उठकर कक्ष के बाहर हो गया।

"मुझे क्यों यहां लाया गया है ?" लक्ष्मी ने सहमें स्वर में पूँछा।

"ओह! तुम्हें यह भी नहीं मालूम?" मुक्त हास्य के साथ बादशाह ने कहा।

"अब तुम्हें यहीं रहना होगा।"

"क्या मैं अपने बापू के पास नहीं जा सकूँगी ?"

"यहाँ जो लाया जाता है, लौट कर नहीं जाना चाहता।"

"पर में यहां रुकना नहीं चाहती।" मुक्त होने के लिए लक्ष्मी हिली।

एक साथ दो दासियों की उपस्थिति को लक्ष्य कर बादशाह ने सगर्व कहा—"यह शाही महल हैं। अपनी मर्जी के मुताबिक कुछ न कर सकोगी।"

लक्ष्मी अपने को अरक्षित अनुभव कर भयभीत नहीं हुई, वरन उसकी मुख मुद्रा कठोर होती चली गई। सुन्दर चेहरे पर रोष के चिन्ह लक्ष्य कर बादशाह ने कहा—"वाह ! वाकई भौंहें कमान हुई जा रही हैं। बैठ जाओ न खड़ी-खड़ी थक गई होगी।"

लक्ष्मी पूर्ववत खड़ी रही।

"इस तरह कब तक खड़ी रहोगी ?'

"जब तक आप मुझे अपने घर जाने नहीं देंगे।"

फर्रुखसियर लक्ष्मी के एक-एक हाव–भाव को बड़ी ही सूक्ष्म दृष्टि से लक्ष्य कर रहा था। उसने अनुमान लगा लिया कि यह साधारणतया

सीधी नहीं होने की। दासियों की ओर दृष्टि फेरते ही दासियाँ रफू-चक्कर हो गईं। न जाते देर न आते, पर आते समय उनके हाथ खाली नहीं थे। एक ने दूसरी के हाथ में रक्खे पात्र को सुराही से भरा। मदिरा पूरित पात्र लक्ष्मी के सामने उपस्थित किया गया। उसकी अप्रिय दुर्गन्ध से उद्विग्न हो लक्ष्मी ने हाथ का ऐसा धक्का दिया कि पात्र सहित मदिरा फर्रुखसियर के ऊपर जा गिरी। बादशाह की आँखें खुलने भी न पायी थीं कि लक्ष्मी वहाँ से ऐसी उड़ी कि उसकी खोज की जाने लगी।

८

रतनचन्द्र का महल विशाल था। उसकी बाह्यभिव्यक्ति तो अति साधारण थी, पर अन्दर अगणित कक्ष थे। पीछे की ओर विशाल उपवन था, जिसके बीचोबीच संगमरमर का तालाब था, जो सदा निर्मल जल से लबालब भरा रहता था। नीले, स्वेत, लाल सभी रंगों में कमल पुष्प सदा खिले रहते थे। उपवन लगभग समस्त सम्भावित फलों-पुष्पों से परिपूर्ण था। दर्शनीय स्थान समझा जाता था वह। जब कभी रतनचन्द्र की कृपा का कोई विशेष अधिकारी बन जाता था तो उसे इस बाग के दर्शन कराये जाते थे। रामदास नामक व्यक्ति इस बाग को सदा सजाया-सँवारा करता था। रामदास ने अन्य नौकरों को नये पौदों को सींचने का आदेश दे उनका निरीक्षण करना प्रारम्भ ही किया था कि रतनचन्द्र के एक मात्र पुत्र लालचन्द ने निकट आ रामदास का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया "बापू ?"

"ओह ! छोटे मालिक !" रामदास ने घूमकर अपने भावी स्वामी का अभिवादन किया।

"लक्ष्मी कहाँ है बापू ?"

"कितनी बार तो उससे कहा बेटा; मगर न जाने आजकल क्या हो गया है उसे, घर से साथ आने को तैयार ही नहीं होती।"

"पर, वह तो घर पर भी नहीं है।"

"पास-पड़ोस में चली गई होगी कहीं; मगर तुम्हें कैसे मालूम, बेटा ?"

"बापू ··बापू ···बात यह है कि बापू ··मां ने लक्ष्मी को यह हार देने को बुलवाया था।" हाथ के हार की ओर संकेत कर कहा-"पर उसे बहुत खोजा गया, कहीं पता ही नहीं चल रहा है उसका।"

रामदास आगे बोलने जा ही रहा था कि सामने से भागती आती लक्ष्मी पर दृष्टि पड़ी "वह आ रही है लक्ष्मी।" हाथ के संकेत की ओर लालचन्द ने भी देखा।

निकट आ खड़ी भी न होने पाई थी कि बुरी तरह हांफते हुए उसने कहा "बचाओ बापू, बचाओ।"

अंक में पुत्री को समेटते हुए रामदास ने पूछा--"क्या है लक्ष्मी; कौन है?"

"बापू—सिपाही ।"

"कहां सिपाही? महल में सिपाही कहां?"

"सड़क पर।"

"क्या तेरा पीछा कर रहे थे?"

"हां।"

"मगर क्यों?"

"मुझे बादशाह के पास पकड़ कर ले गये थे।"

"बादशाह के पास पकड़ ले गये थे?" लालचन्द ने अविश्वास व्यक्त किया।

लक्ष्मी की सांसें अब भी तेजी से आ-जा रही थीं। उसने भय विस्फारित दृष्टि से लालचन्द की ओर देख कहा—"हां! बापू के आने के बाद ही सिपाही मुझे पकड़ ले गये थे।"

"यह तो सरासर जुल्म है।" रामदास ने सक्रोध कहा।

"मैं अभी पिता जी से कहता हूं जाकर।" लालचन्द्र प्रस्थान करने

वाला ही था कि कुछ सोच कहा—"तुम भी चलो न लक्ष्मी, पिताजी के सामने सारी बात कह देना।"

लक्ष्मी ने पिता की ओर देखा।

"चली जा न बेटी। सेठ जी तो हमारे मालिक हैं।" रामदास ने लक्ष्मी का संकोच दूर कर दिया।

लालचन्द्र के साथ लक्ष्मी हो ली।

रतनचन्द्र बही-खाता खोले मुनीम से कुछ प्रश्न कर रहा था; द्वार पर आहट ने दृष्टि को आकर्षित किया। पुत्र के साथ लक्ष्मी को देख रतनचन्द्र ने तीव्र स्वर मे पूँछा—"यह कौन है साथ में ?"

"लक्ष्मी हैं पिताजी–रामदास माली की बेटी।"

"तुझे कहाँ मिली ?"

"बाग में।"

"क्या रोज आती है बाग में ?"

"जी हाँ।"

"तू भी जाता है रोज बाग में ?"

"जी हां पिता जी, मगर····मगर पिता जी—वैद्य जी ने कहा था कि सुबह बाग में टहलना स्वास्थ्य के लिये लाभप्रद होता है।"

"हूँ !" कुछ क्षण रुक रतनचन्द्र ने आगे प्रश्न किया—"यहाँ इसे किसलिए लाया है तू ?"

"पिता जी, इसे सिपाही पकड़ ले गये थे।" लालचन्द ने लक्ष्मी को उत्साहित किया।

"बोलो न लक्ष्मी ! कहां ले गये थे सिपाही तुम्हें ?"

लक्ष्मी ने कहा—"बादशाह के सामने।"

"क्या कोई तीर गिरा था तेरे यहां ?"

"हाँ, आँगन में पड़े तीर को मैंने सिपाहियों को उठाते देखा था। मैं कुछ भी नहीं जानती उस तीर के विषय में।"

इसी बीच दास ने द्वार पर राजकीय कर्मचारियों के उपस्थित होने की सूचना दी आकर सेठ को।

सेठ ने उठते हुए दास को आदेश दिया—"इस लड़की को नीचे के खण्ड में बन्द कर दो जाकर।"

रतनचन्द्र के जाने के उपरान्त दास ने लक्ष्मी को सम्बोधित किया—"चलो।"

"मैं पहुँचाये देता हूँ इसे, तुम अपना काम देखो जाकर।" लालचन्द्र ने दास को टाल दिया।

लक्ष्मी को साथ ले लालचन्द्र गर्भ-स्थित कक्ष की ओर अग्रसर हो गया।

रतनचन्द्र ने द्वार पर पहुँचते ही एक उच्चाधिकारी के साथ अनेक कर्मचारियों को खड़े देखा। यद्यपि कारण से वह भलीभाँति अवगत था, फिर भी अनभिज्ञता व्यक्त की—"कहिये, आप लोग किसलिये पधारे हैं?"

"शाही महल से भाग कर एक लड़की आप की कोठी की तरफ आई है।" अधिकारी का स्वर था यह।

"कब?"

"अभी-अभी।"

"मगर मेरे यहां तो कोई लड़की नहीं आई।"

"मैंने तो उसे अपनी आंखों आप की कोठी में घुसते देखा है।" सहायक कर्मचारी ने कहा।

"हो सकता है कि आपको धोखा हुआ हो।"

'आंखों देखी बात में धोखा कैसा ? मैंने ही नहीं; मेरे सभी साथियों ने देखा है।" साथियों की ओर घूम कहा—"क्यों ?"

एक साथ सभी ने स्वीकारात्मक स्वर व्यक्त किया।

"परन्तु मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मेरे यहां कोई लड़की-वड़की नहीं आई है।"

"जरूर आई है, और अभी भी आपकी कोठी में है।" सर्वोच्च अधिकारी ने रोषपूर्ण स्वर में विश्वासपूर्वक कहा।

"अगर आपको ऐसा विश्वास है तो आप उसे खोज सकते हैं। कोठी आप लोगों के लिए खुली है।" सेठ रतनचन्द ने कहा।

रतनचन्द्र के अनुमति प्रदान करते ही सभी कर्मचारियों ने कोठी में प्रवेश का उपक्रम किया। रतनचन्द ने रोकते हुए कहा—"देखिये, आप लोगों में से कोई एक कोठी में प्रवेश कर खोज सकता है लड़की को।"

रतनचन्द्र के प्रभावशाली व्यक्तित्व से सभी परिचित थे। इस बात से आशंकित हो कि कहीं सेठ कोठी में प्रवेश से इन्कार न कर दे, अधिकारी ने रतचन्द्र की शर्त स्वीकार कर ली—"चलिये।"

अधिकारी आँखें फाड़–फाड़ उन सभी स्थानों को काफी देर तक देखता रहा जिन्हें रतनचन्द्र दिखाते रहे। उस मार्ग की ओर अधिकारी को जाने का अवसर ही न दिया जहां लक्ष्मी छिपी थी। कोठी इतनी विशाल थी कि चक्कर काटते-काटते अधिकारी परेशान हो गया। उसे कोठी के मार्गों, कक्षों और मोड़ों का ध्यान न रहा और न लक्ष्मी ही प्राप्त हो सकी। ऊब कर अधिकारी ने कहा—"वाकई धोखा ही हुआ।"

अधिकारी के वाक्य में निहित प्रस्थान के भाव को अनुभव कर रतनचन्द्र ने मुस्करा कर स्वागत-भाव व्यक्त किया—"आप पहली बार

तो इस गरीब की झोपड़ी में पधारे हैं।" एक कक्ष की ओर संकेत कर-
"कुछ सेवा का तो अवसर दीजिये।"

"सेठ जी! हम आप पर अविश्वास के लिए अत्यन्त दुःखी हैं। अब हमें आप इजाजत दीजिये। जहांपनाह इन्तजार कर रहे होंगे।"

"आप जैसा वफादार कर्मचारी दूसरा देखने में नहीं आया।"

रतनचन्द्र की प्रशंसा से फूल अधिकारी ने अधिकारजनित गर्वहीन भावना व्यक्त की-"मैं तो एक अदना सिपाही जहांपनाह के हुक्म के मुताबिक कदम उठाने की कोशिश करता हूं।"

बातचीत करते-करते दोनों निर्दिष्ट कक्ष में पहुंच गये थे। अल्प-धन राशि अधिकारी की ओर बढ़ाते हुए रतनचन्द्र ने निवेदन किया—"ऐसी ही कृपा सदा बनाये रखिये।"

"मतलब।"

रतनचन्द्र, अधिकारी के स्वभाव से अनभिज्ञ तो थे ही, प्रश्न सुन अव्यक्त रूप से चौंक पड़े; पर तत्काल प्रकृतिस्थ हो स्वाभाविक स्वर में कहा—"मेरा मतलब है कि कभी-कभी इस गरीब खाने में पधारने की कृपा करते रहिये।"

"इसे आप अपने पास ही रखिये, पेट भरने के लिए तनख्वाह ही काफी है। अकेला हूं, बड़े मजे में गुजर-बसर हो जाती है।"

इसी बीच एक दास नत सिर हो सामने खड़ा हो गया आकर। एक तो रतनचन्द्र वैसे ही अपने प्रयास में असफल होने के कारण क्षुब्ध हो रहे थे, असमय दास की उपस्थिति ने उन्हें उन्मन्न कर दिया, गरज उठे वह—"यहां क्यों आ मरा नालायक कहीं का?"

"मालिक, सेनापति जी पधारे हैं।"

सुनते ही अधिकारी के पैरों तले से जमीन खिसक गई। भयत्रस्त

हो वह बोला--"सेठ जी मुझे बचाइये खां साहब की नजर से।"

रतनचन्द्र मानसिक संतुलन खो चुका था। उसी स्थान की ओर संकेत कर दिया जहां लक्ष्मी पहले से ही उपस्थित थी। अधिकारी उसी ओर लपका।

रतनचन्द्र लुड़कते-पुड़कते तत्काल हुसेन खां के स्वागतार्थ द्वार की ओर लपका। दूर से ही अभिवादन-भाव व्यक्त करते रतनचन्द्र को देख हुसेन खाँ बोला--"आप आये नहीं ?"

"आइये पधारिये।" हुसेन खां के प्रश्न से भयभीत होने पर भी रतनचन्द्र ने स्वाभाविक स्वर में कहा।

हुसेन खां ने आगे बढ़ कहा--"हम और भाईसाहब काफी देर तक इन्तजार करते रहे आपका।"

बचाव का कोई उपाय न देख रतनचन्द ने अपनी अनुपस्थिति के कारण पर प्रकाश डाला---"आपकी सेवा में उपस्थित होने के लिए तैयार हुआ ही था कि बादशाह सलामत के अनेक सिपाही आ धमके।"

"किसलिए ?"

रतनचन्द प्रश्न का उत्तर देने भी न पाये थे कि स्त्री-कंठ की भयानक चीख सुनाई दी।

"हुसेन खां ने प्रश्न किया--"यह चीख कैसी ?"

रतनचन्द को अपनी भूल का भान् हुआ। घबड़ाहट भरे स्वर में कहा--"हुजूर ! बुरे झंझट में फँस गया हूँ।"

"बोलो न, बात क्या है ?"

"हुजूर ! अब आप ही रक्षा कर सकते हैं।"

"अरे ! कुछ कहोगे भी ?"

"आइये।" रतनचन्द ने अनुसरण करने का संकेत किया।

भूगर्भ-स्थित कक्ष में ठीक से प्रवेश भी न कर पाये थे कि अधिकारी को अपनी ओर लपकता देखा दोनों ने। हुसेन के दृष्टिगत होते ही अधिकारी सहम गया। हुसेन ने साश्चर्य प्रश्न किया—"गुलाम ! तू यहाँ ?"

अधिकारी गुलाम अहमद कुछ न बोला। गुलाम अहमद के हाथ में रक्त-रञ्जित तलवार देख रतनचन्द लपका कक्ष की ओर। लालचन्द के दो टुकड़े देख रतनचन्द चीख कर धराशायी हो गया। हुसेन ने आगे बढ़ कक्ष का दृश्य देखा। गुलाम अहमद से प्रश्न किया--"यह नौजवान कौन है ?"

"सेठ का लड़का।"

"किसने मारा इसे ?"

"..............।"

"तेरी तलवार की यह करामात है ?"

"...........।"

"जवाब दे।" हुसेन के भीषण स्वर से कांप उठा अहमद।

"हाँ, सरकार।"

"क्यों मारा तूने इसे ?"

अचेत पड़ी लक्ष्मी की ओर संकेत कर गुलाम अहमद बोला—"हुजूर ! यह लड़की जहाँपनाह के हुजूर से भाग कर यहां छिपी थी आकर। हम इसका पीछा करते-करते यहाँ तक आ पहुँचे। मुझे क्या पता था कि वह यहां छिपाई गई है। मैं कोठी में इसे न पाकर लौटा जा रहा था कि आप आ गये। आप से डर मैंने अपने को छिपाने को सेठ से कहा। सेठ ने मुझे इसी कमरे में छिपने को कहा। मैंने यहां आकर इस लड़की को पाया। सेठ का लड़का मेरे साथ बेजा पेश आया। मेरा हाथ उठ गया हुजूर।"

अचानक रतनचन्द ने उठकर कहा—"झूँठ सरासर झूँठ । मेरा लाल कभी किसी के साथ वेजा पेश नहीं आया।"

"इसका आपके पास क्या सबूत कि आपका लड़का इसके साथ वेजा पेश नहीं आया ?"

"हुजूर, मैं अपने लड़के के स्वभाव से अच्छी तरह परिचित हूँ उसने आज तक कभी किसी के साथ अनुचित व्यवहार नहीं किया, और फिर उसे क्या गरज पड़ी थी कि इस माली की छोकरी के लिये सरकारी नौकर के साथ वेजा पेश आता।"

अहमद से न रहा गया, वह बोल उठा– "हुजूर ! गुस्ताखी माफ हो। जब मैंने इस कमरे में पैर रखा तो देखा कि दोनों एक दूसरे का हाथ पकड़े हँस-हँस कर बातें कर रहे थे।"

अहमद की बात से हुसेन को परिस्थिति की वास्तविकता से भिज्ञ होते देर न लगी। तत्काल अनुमान को यथार्थ रूप में प्रगट किया —"सेठ जी ! जरूर तुम्हारा लड़का इस लड़की से मोहब्बत करता होगा। इसके लिये वह कुछ भी कर सकता था।"

इसी बीच लक्ष्मी कुछ हिली-डुली। उसके हांथ की चूड़ियों की खनक ने सबका ध्यान आकर्षित किया। सेठ के लिये वह कल्पना के भी परे था कि उसका लड़का एक गरीब माली की लड़की से प्रेम कर सकता है। अपनी समझ में असम्भव बात को पुत्र की मृत्यु का कारण बनते देख वह बौखला उठा—"लक्ष्मी !"

सेठ के असाधारण तीव्र स्वर के कर्ण कुहरों में प्रवेश करते ही लक्ष्मी सहसा उठ खड़ी हुई। बुरा हाल था उसका। भय से थर-थर–थर–थर कांप रही थी। वह सेठ ने क्रोधपूर्ण दृष्टि से उसकी ओर देख प्रश्न किया–"लाल तुझसे पहले भी मिला करता था ?"

भयत्रस्त होने के कारण लक्ष्मी का स्वर न फूट सका, परन्तु उसने

स्वीकारात्मक ढंग से सिर हिला दिया।

"जबान क्या गल गई है?" सेठ बुरी तरह फुफकारा।

लड़खड़ाते स्वर में लक्ष्मी बोली—"हां ...आं ...आं।"

परन्तु स्थिति स्पष्ट थी। विशेष कुछ कहने-सुनने की आवश्यकता न समझ हुसैन ने अहमद की ओर उन्मुख हो कहा—"जा, भाग यहां से। फिर कभी सेठ की कोठी की तरफ नज़र उठाई तो जहन्नुम पहुँचा दूँगा।"

अहमद जान छुड़ा ऐसा भागा वहां से जैसे हुसैन के वाक्य के अन्तिम शब्द उसे ले उड़े हों।

९

फर्रुखसियर तो प्रतीक्षा में था ही। ज्यों-ज्यों समय बीत रहा था, उसके दिमाग का पारा सातवें आसमान पर चढ़ता जा रहा था। उसके लिए यह असाधारण घटना थी। एक लड़की बादशाह के सामने आये और उसकी इच्छा के प्रतिकूल आचरण करे, असह्य था।

फर्रुखसियर की रुचियाँ विचित्र थीं। घोड़ों का बेहद शौक था उसे। घोड़ों की संख्या दिन-दूनी रात-चौगुनी बढ़ती जा रही थी। एक से-एक बढ़िया घोड़े शाही सेवा में देखे जा सकते थे। बादशाह के इस शौक की चर्चा काफी दूर-दूर तक हो चुकी थी। चारो ओर से घोड़े सिमिटते चले आ रहे थे। घोड़ों के मुँह माँगे दाम शाही खजाने से मिल रहे थे।

वस्त्राभूषणों की रुचि भी साधारण न थी। विभिन्न प्रकार की पोशाकें फर्रुखसियर के शरीर पर देखी जा सकती थीं। कभी-कभी तो वस्त्रों की विचित्रता हास्यात्मक हो उठती थी। ऐसे भी अवसर आते थे जब बादशाह इतने अधिक आभूषण धारण करता था कि नव वधू की कल्पना साकार हो उठती थी।

क्रोध जनित विकलता से मुक्त होने के लिए बादशाह मदिरा पूरित पात्र-पर-पात्र चढ़ रहा था। अहमद को अपनी सेवा में उपस्थित होने की सूचना पाते ही बादशाह की उत्तरोत्तर वृद्धि पाती हुई मादकता न जाने कहां काफूर हो गई। सजग हो फौरन उपस्थित होने की अनुमति प्रदान की। अहमद को सामने अकेले खड़े अभिवादन करते देख बाद-

शाह ने प्रश्न किया। "लक्ष्मी कहाँ है ?"

"सेठ रतनचन्द की कोठी में।" अहमद ने उत्तर दिया।

"सेठ रतनचन्द की कोठी में ?" अविश्वास भरा स्वर था बादशाह का।

"हाँ हुजूर, वह सेठ के माली की लड़की है और····।"

"तो फिर पकड़ क्यों नहीं लाया उसे ?" अहमद के कथन के पूर्ण होने के पूर्व ही फर्रुखसियर ने अपना अधैर्य व्यक्त कर दिया।

"सेठ के लड़के को मार मैं उसे ला रहा था कि उसी वक्त सिपह सालारे जंग वहाँ जा पहुँचे। उनकी वजह से मैं कामयाब न हो सका।"

"तो क्या हुसेनखाँ उसे ले गया ?"

"गुलाम इस बाबत कुछ नहीं जानता।"

"हूँ।" कह कर फर्रुखसियर मौन हो गया; कुछ क्षणों तक विचार मग्न रहने के उपरान्त कहा—"इन सैय्यदों ने तो नाक में दम कर रखा है।" अहमद को आदेश दिया—"गिरधर को फौरन भेज दो जाकर।"

फर्रुखसियर गाव तकिए के सहारे अर्धशायित हो छत की ओर निहारने लगा। विचारों में इतना खोया हुआ था कि गिरधर कब सेवा में आ उपस्थित हुआ, बादशाह को ज्ञात ही न हो सका। गिरधर पहले तो चुपचाप खड़ा रहा; फिर पद ध्वनि द्वारा बादशाह का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयास किया। आँख खोल गिरधर को स्थान ग्रहण करने का संकेत किया बादशाह ने। गिरधर के बैठने के उपरान्त फर्रुखसियर ने कहा—"गिरधर ! ये सैय्यद तो आस्तीन के साँप सिद्ध होते जा रहे हैं।"

"क्या फिर कोई हुजूर की शान के खिलाफ कदम उठाया ?"

"हाँ, उस लड़की को, जिसे तुम सुबह लाए थे, हुसेन खाँ ने अपने कब्जे में कर लिया है।"

"मगर हुसेन खाँ तो ऐसे नहीं हैं ! वह तो औरतों से दूर भागते हैं।"

"यह सब दूसरों को दिखाने के लिए है । अभी-अभी अहमद के जरिए मालूम हुआ है।"

"तो फिर इसके माने हैं कि इनकी ज्यादतियां दिन-पर-दिन बढ़ती जा रही हैं। इनके दिमाग ठिकाने लगाने के लिए कुछ न कुछ तो करना ही पड़ेगा ।"

"जो ठीक समझो करो; किसी तरह इन्हें रास्ते से दूर करो।"

"आपके इशारे भर की देर है। एक साथ दोनों को गिरधर इस संसार से बिदा कर सकता है।"

"हुसेन खाँ ज्यादा खतरनाक है। उसे अपनी बहादुरी पर नाज है; अपने को सिकन्दर समझ रखा है उसने ।"

"सारी सिकन्दरी उसकी एक हाथ में भुला दूँगा ।"

"इतना आसान नहीं है।"

"गिरधर मंगलसिंह की सन्तान है ; कुछ भी कठिन नहीं है मेरे लिए।"

"तुम्हें अपना भी तो रास्ता साफ करना है।"

"मतलब ?"

"सिपहसालार नहीं बनना चाहते हो क्या ?"

"यह तो हुजूर की मर्जी ····।"

"नहीं गिरधर, मैं तो पहले से ही तुम्हें यह ओहदा देना चाहता था, मगर सैय्यदों की ताकत के सामने कुछ कर ही नहीं पाया । तुम जब चाहो हुसेन को समाप्त कर यह ओहदा हासिल कर सकते हो।"

चुटकी बजा गिरधर ने आत्माभिमान व्यक्त किया—"बस यों लीजिए आज ही आप की सारी परेशानी दूर करता हूँ ।"

"बड़े खाँ साहब का क्या हाल है ?" फर्रूखसियर का संकेत

मुनीम खां की ओर था।

"बचने की कोई उम्मीद नहीं है।"

"क्या शाही हकीमों ने भी जवाब दे दिया है?"

"कोई क्या कर सकता है इस उम्र में?"

"अच्छा होता अगर उनसे सलाह ले ली जाती।"

"किस बावत?"

"यही सैय्यदों के मसले में।"

"मैं किसी की सलाह की जरूरत नहीं समझता। हर तरह से इस सिर दर्द को दूर करना ही है।"

"लेकिन कोई ऐसी तरकीब काम में लाना कि अब्दुल्ला खाँ को शक न होने पाये।"

"तो क्या जहांपनाह उन्हें अभी और दूध पिलाना चाहते हैं?"

"चाहता तो कतई नहीं हूं; मगर सैय्यद अब्दुल्ला जैसा होशियार इन्सान भी दूसरा नहीं है। उन्हें खत्म करना हंसी खेल नहीं है।"

"परवर दिगार, बस, बैठे तमाशा देखते रहें। किसी से कुछ भी कहने-सुनने की कोई जरूरत नहीं।"

"मैं भला क्यों अपने ही हाथों अपने पैरों कुल्हाड़ी मारने लगा।"

"तो फिर गुलाम को आज्ञा दीजिए।" गिरधर कह कर उठ खड़ा हुआ।

"मगर बहुत सावधानी की जरूरत है गिरधर।" बादशाह ने गिरधर को सचेष्ट किया।

"हुजूर, बेफिक्र रहें।" गिरधर कहता हुआ कक्ष के बाहर हो गया।

१०

चाटुकारों और प्रशंसकों से घिरा बादशाह सैय्यद बन्धुओं के प्रति निर्मित धारणा को पुष्टि प्रदान कर रहा था समय के साथ-साथ बादशाह और सैय्यद बन्धुओं के बीच विरोध बढ़ता जा रहा था । अब्दुल्ला खाँ ने मुद्रा ढालने का ठेका रतनचन्द को दे दिया था जिसे बादशाह मीर जुमला को सौंपना चाहता था । यह सूचना पाते ही कि रतनचन्द ने मुद्रा ढालने का कार्य प्रारम्भ करवा दिया है, मीर जुमला सीधा भागता हुआ सम्राट की सेवा में आ उपस्थित हुआ । बादशाह के दाहिनी ओर निजामुलमुल्क और मुहम्मद अमीन खाँ बैठे थे; बाईं ओर खान दौरान और हैदर बेग उपस्थित थे । अभिवादन के उपरान्त आसन ग्रहण करते ही बादशाह ने प्रश्न किया—"आज कई दिन बाद दिखाई दिए मीर साहब ?"

मीर जुमला के कुछ उत्तर देने के पूर्व ही हैदर बेग ने कहा—"इमारत की तैयारी में आजकल बुरी तरह जुटे हुए हैं मीर साहब ।"

"सिक्के ढालने का काम तो बाखूबी चल रहा है ?" बादशाह ने स्वाभाविक जिज्ञासा वश कहा ।

मीर जुमला ने समझा कि कदाचित बादशाह व्यङ्ग कर रहा है, उसने व्यंग्य पूर्ण मुस्कान के साथ कहा—"जी हाँ, खूब जोरों से चल रहा हैं ।"

बादशाह ने भी मीरजुमला के व्यंग्य को न समझ प्रसन्नता व्यक्त की

—"चलिए आपकी ख्वाहिश पूरी हो गई ।"

सम्राट के वाक्य में निहित उसकी अनभिज्ञता मीर जुमला पर प्रगट हो गई । उसने सूचनार्थ निवेदन किया—"शायद हुजूर, मौजूदा तबदीली से वाकिफ नहीं हैं ।"

"क्या कोई खास बात है ?"

"जी हाँ, रतनचन्द ने सिक्के ढलवाने शुरू कर दिये हैं।"

"यह क्या कह रहे हैं आप ?"

"गुलाम हुजूर की खिदमत में वही बयान कर रहा है जो हो रहा है।"

"लेकिन रतनचन्द किसके हुक्म से सिक्के ढलवा रहा है? मेरे पास तो वह आया भी नहीं ।"

"उसके लिए सैय्यद अब्दुल्ला साहब के अलावा किसी के हुक्म की जरूरत नहीं ।"

हैदर बेग ने मीर जुमला के कथन को पुष्टि प्रदान की—"रतनचन्द बड़े सैय्यद साहब के अलावा किसी को कुछ समझता ही नहीं । जो चाहता है कर लेता है, उसे किसी का डर नहीं है ।"

मुहम्मद अमीन खां ने अपनी धारणा व्यक्त की—'सैय्यद भाई भी तो रतनचन्द के हाथ की कठपुतलियाँ हैं ।"

"क्यों न हों; उसी की वजह से तो दोनों ऐश करते हैं । रतनचन्द ने क्या नहीं मुहैया किया है उनके लिए । सात पीढ़ियों तक की कमाई उनकी खिदमत में पेश कर दी है ।" मीर जुमला ने वातावरण के अनुकूल भावना व्यक्त की ।

"क्या रतनचन्द के पास शाही खजाने से भी ज्यादा दौलत है ?" बादशाह ने कभी सुनी हुई बात के आधार पर अपना सन्देह व्यक्त किया ।

"सुनने में तो कुछ ऐसा ही आता है । शाही खजाना तो कभी-कभी

खाली भी होता रहता है मगर, रतनचन्द्र के खजाने से निकलता अभी कुछ नहीं है; बल्कि दौलत बढ़ती ही जाती है।"

"तब तो उसके पास बेहतरीन हीरे जवाहरात जरूर होंगे।" बादशाह ने अपनी रुचि प्रगट की।

"परवरदिगार का अन्दाज बिल्कुल सही हैं। रतनचन्द्र के पास ऐसे-ऐसे बेहतरीन हीरे हैं जिनकी खूबसूरती बयान नहीं की जा सकती।"

"चवेलाराम !"

"जहाँपनाह !" चवेलाराम ने नतमस्तक हो आज्ञापालन की मुद्रा धारण कर ली।"

"गिरधर कहाँ है।"

"हुजूर, आज सुबह से ही मैं उनकी तलाश में हूँ, मगर न जाने कहाँ चले गये हैं, कुछ पता ही नहीं चल रहा है उनका।"

स्मृति पर बल डाल बादशाह ने आशंका व्यक्त की—"अभी तक नहीं लौटा ?"

"हुजूर की खिदमत में मैं उन्हें ही खोजता हुआ यहाँ आया था।"

"कहीं किसी झँझट में न फँस गया हो।"

"क्या हुजूर ने कहीं भेजा है उन्हें ?"

"नही, मैंने नहीं, वह खुद ही गया है। जरा जिद्दी किस्म का आदमी है न वह। जिस बात की जिद पकड़ लेता है, उसे किये बिना नहीं मानता।।"

"अगर हुजूर कुछ बताने की इनायत फरमावें तो गुलाम अभी उन्हें ला खिदमत हाजिर हो आकर।"

"मगर, यह तो मुझे भी नहीं मालूम कि वह कहाँ होगा इस वक्त। वह तो कह रहा था कि तुम्हें जरूर साथ ले लेगा।"

"यही तो मुझे भी आश्चर्य हो रहा है कि मुझे साथ लिए बिना

वह कहीं नहीं जाते। आज न जाने क्यों कहां गायब हो गये !"

इसी समय दो कर्मचारियों के सेवा में उपस्थित होने की सूचना निवेदित की गई। सम्राट की आज्ञा पा दोनों ने प्रवेश किया। दोनों की साँस तेजी से चल रही थी। अभिवादन के उपरान्त एक ने निवेदन किया—"गिरधर बहादुर कत्ल कर दिये गये।"

अप्रत्याशित सूचना सुन सब आश्चर्य चकित हो उठे। सम्राट के मुँह से निकल पड़ा—"ऑय !" स्पष्टीकरण के अभिप्राय से प्रश्न किया—"किसने कत्ल किया है गिरधर को ?"

"सिपहसालारे जंग सैय्यद हुसैन खाँ ने।" कर्मचारी ने उत्तर दिया।

बादशाह को सुनकर जैसे लकवा मार गया।

निजामुल्मुल्क ने जो अवस्था तथा अपने प्रौढ़ विचारों के कारण बादशाह तक द्वारा सम्मान की दृष्टि से देखे जाते थे, मौन भंग किया—"यह तो सरासर ज्यादती है हुसैन खाँ की।"

"मनमानी करने की भी एक हद होती है।" मीरजुमला ने कहा।

हैदरबेग ने दुर्घटना की टीका की—"गिरधर जैसे बहादुर इन्सान को जब कत्ल किया जा सकता है तो किसी की भी जान खतरे में समझी जानी चाहिये।"

"हम गिरधर भाई का बदला लेंगे।" चबेलाराम ने प्रतिशोध की भावना व्यक्त की।

हैदरबेग ने समझाया—"चबेलाराम ! जल्दी में कोई गलत कदम उठाने का वक्त नहीं है। खूब सोच-विचार कर कुछ फैसला करना चाहिये।"

निजामुल्मुल्क ने परिस्थिति की गम्भीरता पर प्रकाश डाला—"सय्यद हुसैन खाँ के हौसले बहुत बढ़े हुये हैं। गिरधर को मिलाकर सल्तनत के सात वफ़ादारों को मौत के घाट उतार चुके है। वह उनकी

स्वेच्छाचारिता दिन-पर-दिन बढ़ती जा रही है। मैं जहाँपनाह की खिदमत में गुजारिश करूँगा कि कोई न कोई इन्तजाम करें, वरना कुछ भी नामुमकिन नहीं है।"

"आप ही कोई तरकीव सोचिये। गिरधर की हत्या सुन कर मेरे दिल-दिमाग दोनो वेकावू हो रहे हैं। काश ! आज बड़े खाँ साहव जिन्दा होते।"

"तब तो किसी को कुछ सोचने–विचारने की जरूरत ही न थी। ऐसी-ऐसी तरकीवें उनके दिमाग में भरी रहती थीं कि दुश्मन को हर हालत में अपने मुँह की खानी पड़ती थी।" निजामुल्मुल्क ने मुनीम खां की व्यावहारिक बुद्धि की प्रशंसा की।

वादशाह ने पराजय-भावना प्रदर्शित की–"किसी तरह इस हुसेन खाँ से गला छुड़ाइये। यह तो नाकों चने चबवाये है, नींद हराम कर रखी है सबकी। सल्तनत का बहादुर-से-बहादुर इन्सान भी खौफ खाता है हुसेन खाँ से।"

"तो फिर वेहतर होगा कि हुसेन अली को मारवाड़ के राजा अजीत सिंह से निपटने के लिये रवाना कर दिया जाय।"

बादशाह प्रसन्नता से उछल पड़ा—"यह तरकीब अच्छी रहेगी। अजीतसिंह ने सिर भी उठा रखा है इधर। कुछ वक्त के लिये वह वला टल जायगी।"

"मुझे तो उम्मीद है कि हमेशा के लिये खत्म हो जायगी। अजीत सिंह वड़ा लड़ाकू राजा है; और फिर इधर, उसने अपनी फौजी ताकत भी काफी बढ़ा ली है।"

"तब तो मालूम देता है कि सांप भी मर जायगा और लाठी भी न टूटेगी। अभी वजीरे आजम को इत्तिला करवाये देता हूँ।"

"पर वजीरेआजम को किसी तरह का शक न होने पाये। चेहरा

देखकर मन की बात जान लेते हैं।"

"उनके हाजिर होने पर आपको भी बुलवा लूँगा।"

"हुज़ूर का हुक्म पाते ही सिर के बल दौड़ा चला आऊँगा खिदमत में।"

"अच्छा, अब आप लोग तशरीफ ले जाइये, रात काफी हो चुकी है।" मदिरा की तृष्णा ने सबको विदा कर एकान्त प्राप्त करने को बाध्य कर दिया बादशाह को।

सम्राट का अभिवादन कर सब प्रस्थान कर गये।

११

सैय्यद बन्धु यद्यपि अपने को सर्वोपरि शक्तिशाली समझते थे, तथापि व्यक्त रूप से राजकीय सम्मान के समक्ष सिर झुकाते थे। कोई भी ऐसा अवसर न आने पाया था अभी तक जब कि उन्हें सम्राट का खुले आम विरोध करना पड़ा हो। बादशाह इस स्थिति से भलीभांति अवगत था। जहां तक सम्भव होता था सम्राट सैय्यद बन्धुओं से एकान्त वार्ता का अवसर टाल जाता था। जब कभी कोई आज्ञा प्रसारित करनी होती थी, भरे दरबार में बादशाह करता था, जिसे सैय्यद बन्धु सिर झुकाकर स्वीकार लेते थे।

दूसरे दिन भरे दरबार में बादशाह ने अपना अभिप्राय व्यक्त किया — "कल रात फिर खबर मिली है कि मारवाड़ के राजा अजीतसिंह ने दिल्ली पर हमला करने का पक्का इरादा कर लिया है। बेहतर होगा कि उसके दिल्ली आने के पहले उसे वहीं मारवाड़ में ही दफना दिया जाय। बागी कोई मामूली सख्स नहीं है; उसने काफी ताकत बढ़ा ली है इन दिनों। काफी गौर फरमाने के बाद मा बदौलत इसी नतीजे पर पहुँचे हैं कि सल्तनत में सिपहसालारे जंग सैय्यद हुसेन खाँ के अलावा हमारे किसी भी बहादुर में इतना दम नहीं है कि उसे दबा सके। मेरी यह दिली ख्वाहिश है कि उसे जल्दी-से-जल्दी कुचल दिया जाय।

सम्राट के निर्णय को सुन अधिकाँश दरबारियों की दृष्टि में आश्चर्य की झलक दिखाई देने लगी। काना-फूसी की सम्मिलित ध्वनि ने दरबार में अशान्ति उत्पन्न कर दी। अब्दुल्ला खाँ को वास्तविकता समझते देर न लगी, परन्तु स्पष्ट रूप से वह कुछ भी न कह सके और दरबार

भंग हो गया।

कूँच करने के पूर्व हुसेन खां ने बड़े भाई से मिलना उचित समझ हवेली में प्रवेश किया। अब्दुल्ला खां सेठ रतनचन्द के साथ बैठे किसी विषय पर गम्भीरतापूर्वक विचार-विमर्श कर रहे थे। हुसेन खां सैनिक वेष धारण किये था। म्यान में बन्द तलवार चलने के साथ हिल रही थी। हुसेन खां के प्रवेश करते ही रतनचन्द उठ खड़ा हुआ। दोनों भाइयों में विशेष शिष्टाचार का पालन नहीं होता था। सामने बैठे हुसेन ने कहा—"मैं तो जा रहा हूं, अगर कोई जरूरत समझियेगा तो फौरन खबर भेजवाइयेगा।"

"मेरा तो ख्याल था कि कुछ दिन अभी रुक जाते।" अब्दुल्ला खाँ ने अपना अनुमान व्यक्त किया— 'हो सकता है कि दुश्मनों ने बादशाह सलामत के कान भरे हों; और तुम्हें एक बहुत बड़े खतरे ।"

"हुसेन के लिए 'खतरा' नाम की कोई चीज है नहीं।" बड़े भाई की बात काट हुसेन खां ने सगर्व कहा—"मेरा कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता। हुसेन की तलवार में इतनी ताकत है कि बादशाह के दिमाग भी ठिकाने लगा सकता हूँ।"

"कभी-कभी अक्ल का भी सहारा लेना पड़ता है, जिस्मानी ताकत ही हमेशा काम नहीं देती।"

"इन्सान को अपनी जिस ताकत पर भरोसा हो, उसी का सहारा लेना चाहिये।"

"बजा फरमाते हैं आप।" रतनचन्द ने हुसेन की बात का समर्थन किया—"मेरे पास तो कोई ताकत नहीं है। जब कभी जरूरत पड़ती है आप लोगों के पास दौड़ा चला आता हूँ; आप ही लोग हमारी ताकत हैं।"

"तुम सब से ज्यादा ताकतवर हो सेठ रतनचन्द।" अब्दुल्ला खाँ ने कहा—"दौलत आज दुनियाँ की सबसे बड़ी ताकत है। दौलतमन्द

इन्सान क्या नहीं कर सकता ! बहादुरों की बहादुरी और अक्लमन्दों की अक्ल दौलतमन्दों के इशारों पर नाचती है।"

"मगर हुजूर के इशारों पर तो दौलत नाचती है। हुजूर के इशारों पर गुलाम सिर के बल खड़ा रह सकता है।"

हुसेन खाँ की सेना प्रस्थान के लिए तैयार खड़ी थी। उसे रतनचन्द की बातें अप्रिय लग रही थीं। अपने स्वभावानुसार उसने कहा—"तो फिर मैं जा रहा हूँ; हर तरह से आप भी तैयार रहियेगा; अगर कोई खास बात हुई तो खबर भेजूँगा।"

साथ ही अब्दुल्ला खाँ और रतनचन्द भी उठ खड़े हो गये। द्वार तक दोनों हुसेन खाँ को भेजने गये। घोड़ा बाहर खड़ा ही था। हुसेन खाँ सवार हो उड़ चला।

१२

हुसेन खाँ के ससैन्य मारवाड़ प्रस्थान करने के उपरान्त विरोधियों ने निश्चिन्तता की साँस ली; सम्राट की सेवा में उपस्थित हो अपनी प्रसन्नता व्यक्त की; परन्तु बादशाह ने अपने सलाहकारों तथा चाटुकारों की प्रसन्नता की उपेक्षा कर चिन्ता व्यक्त की—"मीरजुमला अभी तक तशरीफ नहीं लाये ?"

बादशाह द्वारा मीरजुमला के अभाव की ओर संकेत होते ही सभी उपस्थित उमंगित जनों की दृष्टियाँ मीरजुमला को अगल-बगल खोजने लगीं। स्थिति पूर्ववत् होने के उपरान्त बादशाह ने आगे कहा—"आप लोगों में से किसी को दिखाई भी नहीं दिये ?"

सम्राट का प्रश्न करना था कि मीरजुमला ने प्रवेश किया। सभी समुत्सुक दृष्टि से मीरजुमला को देखने लगे।

बादशाह ने प्रश्न किया—"किसे भेजा ?"

"चबेलाराम को।" मीर जुमला ने उत्तर दिया।

"कहीं कुछ रास्ते में ही गड़बड़ न कर बैठे ?"

"समझा काफी दिया है; उम्मीद तो ऐसी नहीं है। और फिर रास्ते में दोनों के मिलने की कोई गुंजाइश भी नहीं है।"

"क्यों; क्या चबेलाराम किसी दूसरे रास्ते से रवाना हुआ है ?"

"गया तो उसी रास्ते से है, पर शाही फौज के काफी पहले ही मारवाड़ पहुँच जायेगा वह।"

"राजा अजीतसिंह से क्या कहना है, यह भी समझा दिया है ?"

"समझा ही नहीं दिया है, साथ में एक खत भी दे दिया है।"

पूर्ण आश्वस्त होने के उपरान्त बादशाह के चेहरे पर वही भाव प्रदर्शित होने लगा जो कुछ समय पूर्व अन्य लोगों के मुख मण्डलों पर आभासित हो रहा था। अवसर की अनुकूलता से लाभ उठाया हैदरबेग ने—"तो फिर आज रात जश्न हो जाना चाहिये।"

"जरूर।" अमीन खां ने अनुमोदन किया—"इससे ज्यादा खुशी का दिन और कौन हो सकता है!"

"काफी रात गये तक नृत्य-गान और मदिरा का दौर चलता रहा। बादशाह के सम्पर्क में आने वाले सभी झूम-झूम उल्लास बिखेरते रहे।

अब्दुल्ला खां का गुप्तचर विभाग इतना सुदृढ़ तथा सजग था कि शाही महल की प्रत्येक गतिविधि का परिचय प्राप्त होता रहता था। जश्न मनाये जाने का समाचार मिलने पर अब्दुल्ला सशंकित हो उठे; किसी भीषण षणयन्त्र का आभास होने लगा। उन्हें काफी देर तक विचाराधीन रहने के उपरान्त भी वह किसी निष्कर्ष पर न पहुँच सके। शनैः शनैः विचारों के घात-प्रतिघातों ने उन्हें इतना व्यथित कर दिया कि वह बैठे न रह सके; उठकर कक्ष में ही टहलने लगे। जब स्थिति असह्य हो गई तो रुककर ताली बजाई उन्होंने। तत्क्षण नतमस्तक दासी सेवा में आ उपस्थित हुई।

"आयशा!" अब्दुल्ला का संकेत समझ दासी विद्युत चालित यन्त्र की भाँति अभिवादन करती पीछे हट गई।

अब्दुल्ला ने गाव तकिये का सहारा ले नेत्र बन्द कर लिये। नेत्र तब खुले जब मदिरापूरित पात्र ने ओठों का स्पर्श किया। अब्दुल्ला ने पात्र को दूर करते हुये कहा—"इस वक्त मुझे, शराब की नहीं, तुम्हारी जरूरत है।"

"कनीज खिदमत में हाजिर है।"

"कुछ दिन के लिए शाही खिदमत में जाना होगा।"

"किसलिए ?"

"कुछ राज ऐसे हैं जिनसे वाक़िफ होना निहायत जरूरी है मेरा। शायद हुसेन को मारवाड़ भेजने में कोई राज है जिसका अन्दाज मैं नहीं लगा पा रहा हूँ। यह काम मैं तुम्हें सौंपना चाहता हूँ। तुम शाही खिदमत में काफी दिन रह भी चुकी हो।"

"मगर क्या मेरा वहां जाना खतरे से खाली है ? क्या बादशाह सलामत मुझे जिन्दा देखना बरदास्त कर सकेंगे ?"

"और कोई रास्ता भी तो नजर नहीं आता है ?"

"बेहतर होगा कि लक्ष्मी को यह काम सौंपा जाय।"

रतनचन्द ने लक्ष्मी को अब्दुल्ला खाँ की सेवा में ला उपस्थित कर दिया था। लाख कोशिश करने पर भी लक्ष्मी को अब्दुल्ला के हरम की शोभा बढ़ानी ही पड़ी थी। लक्ष्मी को परिस्थिति के अनुकूल ढालने में आयशा ने काफी प्रयास किया था।

"वह कल की छोकरी भला क्या समझे इन बातों को ?"

"हुजूर, शायद उसकी रुहानी ताकत से वाकिफ नहीं हैं, निहायत अक्लमन्द है वह। मेरा यकीन है कि जो काम मैं नहीं कर सकती उसे वह बखूबी कर सकती है।"

"मगर वह जाने को तैयार होगी भी ?"

"हुजूर की हुक्म उदूली की ताकत किसमें है ? उसे तैयार करना मेरा काम।"

"रोजाना एक बार आना पड़ेगा उसे मेरे पास।"

"इन सब बातों की फिक्र आप न करें। जब तक आयशा जिन्दा है, हुजूर की हर ख्वाहिश पूरी होगी।"

मधुर मुस्कान पूर्ण दृष्टि से आयशा को देख अब्दुल्ला ने कहा—"दरअसल बेमिसाल हो तुम। तीनों सौ में एक भी तुम्हारी बराबरी नहीं कर सकती।"

"हुजूर तीन सौ की गिनती तो काफी पुरानी हो चुकी है। अब तो हुजूर के हरम में पूरी पांच सौ हैं। बेचारी दो सौ कनीजों को क्यों हर बार भूल जाते हैं सरकार ?"

"न जाने क्यों बार-बार तुम्हारे याद दिलाने पर भी तीन सौ की ही तादाद याद रहती है।"

"इलाहाबाद की सूबेदारी के वक्त भी हुजूर के हरम में तीन सौ ही तो थीं।"

"तुम्हें भी मेरी एक-एक बात याद है।"

"हुजूर की बातें भी कहीं भूलने लायक होती हैं। क्या वह वक्त भुलाया जा सकता है जब हुजूर बुरका ओढ़कर शाही महल में मुझसे मिलने के लिये दाखिल हुये थे ?"

"वाकई अब भी जब कभी वह वाकया याद आ जाता है तो तुम्हारी अक्लमन्दी का लोहा मानना पड़ता है। किस खूबी से तुमने मुझे बादशाह सलामत की नजरों से बचाया था, बयान नहीं किया जा सकता।"

"और कोई रास्ता भी तो नहीं था। हुजूर अगर पलंग के नीचे न छिपते तो जान की खैर न थी।"

"और मेरी एक-एक बोटी तब तक बराबर कांपती रही थी जब तक बादशाह उसी पलंग पर बैठा रहा था।"

"वह तो उसी पर आराम फरमाना चाहते थे, मगर मैंने ऐसा सिर दर्द का बहाना किया था कि वह तंग आकर चले गये थे।"

"तुम्हारी इन्हीं बातों ने तो मुझे तुम्हारा गुलाम बना रखा है।"

"यह तो हुजूर की नजरे इनायत है, वरना कनीज है ही

आयशा के मुँह पर हाथ रख अब्दुल्ला ने कहा—"बस ! आगे एक भी लफ्ज नहीं। इन्सान अपनी कीमत खुद नहीं जान पाता। तुम तो मेरे लिये वह हीरा हो जिसकी रोशनी में मुझे वे सभी बातें दिखाई

दे जाती हैं जिनकी जानकारी मेरे लिए बहुत महत्व रखती है।"

"हुजूर तो जमीन के जर्रे को आसमान का तारा बनाये दे रहे हैं।"

इसी बीच परिचारिका ने रतनचन्द के आगमन की सूचना दी आकर। इसके पूर्व कि वजीरे आजम रतनचन्द के प्रवेश की अनुमति प्रदान करें, आयशा ने उठते हुये कहा–"हुजूर कनीज को इजाजत दें।"

"लक्ष्मी को बखूबी समझा देना।"

"हुजूर बेफिक्र रहें।" आयशा बल खाती कक्ष के बाहर हो गई।

रतनचन्द ने प्रवेश किया।

१३

अब्दुल्ला खां और सम्राट फर्रुखसियर की रुचियां लगभग समान थीं। सुरा-सुन्दरी, वस्त्रों-आभूषणों, हीरे-जवाहरातों तथा नाच-गानों आदि का वेहद शौक था दोनों को। दोनों में सदा होड़-सी लगी रहती थी। अपने को दोनों एक दूसरे से बढ़-चढ़कर समझते थे; पर अब्दुल्ला खाँ सम्राट से उतना भय न खाते थे जितना फर्रुखसियर अब्दुल्ला खां से। विरोध भी दबी जबान ही होता था।

अपनी सेवा में लक्ष्मी की सहसा उपस्थिति सुन फर्रुखसियर के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। अब्दुल्ला के हरम में किसी सुन्दरी का पहुँच कर वापस आना बादशाह की दृष्टि में कम कौतूहल की बात न थी; पर सौन्दर्य की सजीव प्रतिमा लक्ष्मी को समक्ष देख समस्त विचार न आने कहां विलीन हो गये। लक्ष्मी छुई-मुई-सी असाधारण वस्त्राभूषणों से समलंकृत दृष्टिनत खड़ी थी; अपराधिनी-सी सम्राट की आज्ञा की प्रतीक्षा कर रही थी। लक्ष्मी को आपादमस्तक देख बादशाह ने कहा—"बैठ जाओ।"

लक्ष्मी तनिक भी आगे न सरकी; वहीं निःशब्द बैठ गई। फर्रुखसियर के संकेत पर अन्य परिचारिकायें कक्ष के बाहर हो गईं। एकान्त पा बादशाह ने अभिलाषा व्यक्त की—"लल्ली!"

बादशाह द्वारा सहसा अपना घरेलू नाम सुन लक्ष्मी की दृष्टि सम्राट पर जा टिकी। लक्ष्मी की आँखों में झाँकते हुये सम्राट मुस्करा दिये। सम्राट की मुस्कान की उपेक्षा कर लक्ष्मी ने अपनी जिज्ञासा

व्यक्त की—"आपको मेरा यह नाम कैसे मालूम हो गया ?"

सम्राट की मुस्कान हास्य में परिणित हो गई। हास्य को बिना नियन्त्रित किये ही सम्राट बोले—"लल्ली ही नहीं, तुम्हारा एक नाम और भी जानता हूँ।" सम्राट रुक लक्ष्मी द्वारा जिज्ञासा व्यक्त होने की प्रतीक्षा करने लगा।

लक्ष्मी स्वाभाविक आचरण के लिए बाध्य हो गई; पूँछ बैठी—"और कौन-सा मेरा नाम आप जानते हैं ?"

"लाली।"

लल्ली-लाली आदि मां-बाप द्वारा सम्बोधित की जाने वाली संज्ञायें सुन लक्ष्मी अपनी वर्तमान स्थिति विस्मरण कर बैठी। चरम आश्चर्य भरे स्वर में बोल उठी—"मेरे ये दोनों नाम आपको किसने बताये ?"

"जो इन नामों से तुम्हें पुकारता रहा है।"

"कब आये थे बापू आपके पास ?"

"उसी दिन शाम को, जिस दिन तुम यहां से भागी थीं।"

"तब तो जरूर आप ही ने उन्हें कैद कर रखा होगा, मेहरबानी करके एक बार मुझे उनसे मिल लेने दीजिये। मैं आपकी जीवन भर अहसानमन्द रहूँगी; आप उन्हें कैदखाने से रिहा कर दीजिये। मेरे ही कारण तो आपने उन्हें कैद कर रखा होगा; अब मैं नहीं भागूँगी, आप उन्हें रिहा करने का हुक्म फरमा दीजिये।"

"मगर यह गलत खबर दी किसने है तुम्हें ?"

"गलत—कभी नहीं; आयशा मुझसे कभी झूँठ नहीं बोल सकती।"

"आयशा तुम्हें कहाँ मिली ?"

"बड़े खां साहब के यहां उसने मुझसे कहा था।"

"हूँ; तो अभी तक जिन्दा है वह। मैं समझे बैठा था कि वह अब इस दुनियां में नहीं है।"

"वह तो खां साहब की खिदमत में बहुत दिनों से है! खां साहब

उनका बहुत विश्वास करते हैं। कोई भी काम उनसे पूँछे बिना नहीं करते। आयशा के कहने पर ही तो खाँ साहब ने मुझे आपकी खिदमत में भेजा है।"

"तब तो जरूर कोई चाल है।" बादशाह का माथा ठनका—"क्या कहकर भेजा है तुम्हें ?"

बादशाह का प्रश्न सुनते ही लक्ष्मी को अपनी भूल का अनुभव हुआ; फिर भी उसने तत्क्षण अपने बौद्धिक चातुर्य के बल पर सत्य को छिपाने की चेष्ठा की - "बापू को देखे बिना मैं बहुत बेचैन रहा करती हूँ। जब से आयशा ने मुझे आपके कैदखाने में मेरे बापू के होने की बात बताई, मैं जिद पकड़ बैठी। आपकी खिदमत में हाजिर होने की कई दिनों की मिन्नतों के बाद खाँ साहब मुझे यहाँ भेजने को राजी हुये।"

"आयशा तो तेरा यकीन करती ही होगी ?"

"जी हां, आयशा दीदी मेरी कोई बात नहीं टाल सकतीं।"

"उसे किसी तरह खां साहब की हवेली के बाहर ला सकती हो ?"

"क्यों नहीं, आप कहें तो मैं दीदी को यहाँ भी ला सकती हूँ। वह मुझे छोटी बहिन की तरह प्यार करती हैं।"

"तो फिर कब लाओगी उसे यहाँ ?"

"पहले आप मुझे मेरे बापू के पास भेजवा दीजिये।" लक्ष्मी ने अनुनय की।

बादशाह जिस बात को बराबर टालने की कोशिश कर रहा था, बाध्य हो उसे कहना पड़ा—'तुम्हारे बापू यहाँ नहीं हैं।"

"ऐसा नहीं हो सकता। आयशा मुझसे झूँठ नहीं बोल सकती। बापू

"तेरे बापू किसी की कैद में नहीं हैं। खाँ साहब ने उन्हें कत्ल करवा दिया है।"

"बापू !" लक्ष्मी पूरी शक्ति भर चीखी और अचेत हो फर्श पर गिर पड़ी।

लक्ष्मी की चीख सुनते ही अनेक परिचारिकायें एक साथ दौड़ पड़ीं। परिचारिकाओं के उपस्थित होने पर सम्राट ने कक्ष छोड़ दिया।

१४

हुसेन अली को दिल्ली छोड़े काफी दिन हो चुके थे। बादशाह फर्रुखसियर निश्चिन्तता की नींद सो रहा था। उसके लिए अब्दुल्ला खाँ इतने खतरनाक न थे जितना हुसेन अली। हुसेन अली का उग्र स्वभाव सर्व विदित था। किस बात पर उसकी तलवार म्यान के बाहर निकल किसकी गरदन धड़ से अलग कर दे, अकल्पनीय था।

मारवाड़ के शासक अजीतसिंह को चबेलाराम द्वारा बादशाह का संदेशा मिल चुका था। अजीतसिंह ने हुसेन अली को समाप्त करने की भरसक कोशिश की; पर हुसेन अली की अजेय शक्ति के सामने उसकी एक भी न चली। अन्त में बाध्य हो उसे हुसेन अली की सेवा में संधि वार्ता के लिए प्रस्तुत होना पड़ा। अजीतसिंह द्वारा बादशाह का षणयंत्र व्यक्त किये जाने पर हुसेन अली के क्रोध की सीमा न रही और तत्काल अजीतसिंह के साथ मैत्री भाव-भरा हाथ बढ़ा दिल्ली को प्रस्थान कर दिया।

यह समाचार पाते ही कि मारवाड़ नरेश को परास्त कर हुसेन अली दिल्ली की ओर अग्रसर हो रहा है, फ़र्रुखसियर के होश उड़ गये; आराम हराम हो गया। शुभ चिंतकों और चाटुकारों की बैठकें होने लगीं। प्राय:, हुसेन की उपस्थिति काफी गुल खिलायेगी, वाद-विवाद का विषय होता। अन्त में सर्व सम्मति से यह निश्चय किया गया कि हुसेन का अभूतपूर्व स्वागत किया जाय। दिल्ली नगर को सजाने की

शाही आज्ञा प्रसारित कर दी गई। राजधानी सजने लगी। सड़कें, गली-कूचे झाड़े-बुहारे गये; धोये गये। मार्ग विशेष को विशेष रूप से सुसज्जित करने का हुक्म हुआ। सैकड़ों कर्मचारी चहल-कदमी दिखाने लगे। हुसेन पड़ाव-पर-पड़ाव लांघता-फांदता दिल्ली शहर में प्रवेश कर सीधे बड़े भाई के समक्ष पहुँचा। अब्दुल्ला खाँ तो स्वागत के लिए तैयार बैठे ही थे; भाई को दृष्टि के समक्ष देखते ही गले मिले। कुछ क्षण पश्चात पृथक होते ही हुसेन ने कहा—"भाई साहब, आइये, जरा शाही महल तक चलें।"

"बैठो; कुछ देर आराम करलो, फिर चलेंगे; ऐसी भी क्या जल्दी पड़ी है?"

"नहीं भाई साहब, मुझे बादशाह के बच्चे से दो-दो बातें करनी हैं।"

बादशाह के प्रति व्यक्त, भाव, भाषा तथा हुसेन की मुद्रा देख अब्दुल्ला ने अनुमान लगा लिया कि अवश्य ही हुसेन की इच्छा के विरुद्ध कोई बात हो गई है सम्राट द्वारा। अब्दुल्ला खां सदैव प्रयत्न किया करते थे कि जहाँ तक हो सके हुसेन का सम्राट से सामना न हो; क्योंकि हुसेन ऐसे उग्र प्रकृति का था कि जो उसे किसी अवसर विशेष पर उचित प्रतीत होता, अण्ट-सण्ट बक डालता था; और साथ ही, आशा के विपरीत उत्तर मिलने पर तलवार भी म्यान के बाहर खींच लेता था। यह देखकर कि सम्राट के किसी आचरण विशेष से हुसेन अत्यधिक क्रुद्ध है, अवसर टालना ही उचित समझा; कहा—"तलवार के धनी मेरे भाई को किसी से बात करने की क्या जरूरत, जब तक मैं जिन्दा हूँ।"

"नहीं भाई साहब! आप ढीले आदमी हैं; कभी साफ बात नहीं करते। मैं आज आखिरी फैसला कर लेना चाहता हूँ।"

"किस बात का भाई ? आखिरकार मुझे भी तो कुछ मालूम हो।"

"आप अभी उसकी चालबाजियों से वाकिफ नहीं हैं। मुझसे मारवाड़-मुल्तान को शिकस्त देने को कहा था; और उधर अजीतसिंह के पास मुझे किसी तरह खत्म करने की बात कहना भेजी थी। अजी-मुश्शान की औलाद नहीं जानती कि जब तक हुसेन के हाथ में उसकी तलवार है, कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता उसका।"

"मेरे रहते नामुमकिन बात कैसे हो सकती है !"

बड़े भाई का आशय न समझ उसी धुन में हुसेन ने कहना प्रारम्भ किया –"हुसेन अपनी तलवार के अलावा किसी का भरोसा नहीं करता। वह समझता होगा कि उसकी फौजी ताकत के बल पर हुसेन बोलता है। मैं आज उसे बता देना चाहता हूँ कि हुसेन क्या है।"

"यह तो उसे ही नहीं उसके बाप तक को मालूम था।"

"फिर भी अपनी बेजा हरकतों से बाज नहीं आता है। आपने ही उसे सिर चढ़ा रखा है।"

"ऐसी बात नहीं है हुसेन भाई। मेरा तो ख्याल है कि जो जैसा हो उसे उसी ढङ्ग का सबक सिखाना चाहिए। बादशाह कोई बहादुर तो है नहीं, जिसके होश ठिकाने लगाने के लिए तुम्हारी बहादुरी की जरूरत हो; उसकी नश तो मैं जानता हूँ। मेरा एक इशारा ही काफी होगा उसे रास्ते पर लाने के लिए।"

"भाई साहब ! आप अब भी उसे गलत समझ रहे हैं। वह बहुत चालबाज है। उसकी बदमाशियों का इलाज आप के इशारे नहीं हैं; सिर्फ हुसेन की तलवार ही उसके सब मर्जों का इलाज एक साथ कर सकती है। आप बैठे-बैठे देखते रहिए, कितनी जल्दी सब झंझट खत्म करता हूँ।"

"हुसेन! कभी-कभी तुम बच्चों की-सी उतावली दिखाने लगते हो।

वक्त को भी तो देखना चाहिए।" अब्दुल्ला का कथन चल ही रहा था कि बादशाह के व्यक्तियों के उपस्थित होने की सूचना मिली। अब्दुल्ला ने उनके वहीं उपस्थित किए जाने की अनुमति दे दी।

हैदरबेग ने अनेक अनुचरों के साथ भीतर पैर रखा। अनुचरों के हाथों में बड़े-बड़े सोने-चांदी के थाल थे, जो हैदरबेग के संकेत पर दोनों भाइयों के समक्ष रख दिए गए। एक-एक थाल का रेशमी आवरण हटाना प्रारम्भ किए हैदरबेग ने। थाल हीरे-जवाहरातों से भरे थे। अन्तिम थाल को अनावरण कर उसमें रखी रत्न-जड़ित तलवार को उठा हैदरबेग ने हुसेन के समक्ष पेश करते हुए कहा—"बादशाह सलामत ने इसे खास तौर से आप की खिदमत में भेजा है।" हुसेन ने तलवार लेने के लिए हाथ फैला दिये। हैदरबेग ने तलवार थामते हुए कहा—"जहांपनाह आपकी मारवाड़ की फतहयाबी से निहायत खुश हैं। वह तो खुद तशरीफ लाना चाहते थे; मगर सिर दर्द ने उन्हें ऐसा परेशान कर रखा है कि चाह कर भी मुबारक बाद देने तशरीफ न ला सके।"

हैदरअली की बात पर ध्यान न दे म्यान से तलवार निकाल उसे उलट-पुलट कर देखते हुए हुसेन ने अपनी धारणा व्यक्त की—"तलवार देखने में तो खूब सूरत मालूम दे रही है; क्यों भाई साहब ?"

"इसमें भी कोई शक है।" अब्दुल्ला ने एक-एक थाल के रत्नों को दृष्टि में तौलते हुए कहा।

हुसेन ने तलवार को हाथ से थहाते हुए कहा—'वजन में कुछ हल्की मालूम दे रही है।'

"हुजूर, इसके वजन पर न जायें, बादशाह सलामत ने हुजूर की खिदमत में वह तोफा पेश किया है कि अगर हुजूर इसकी बाबत सुनें तो इसे हैरत की नजर से देखते ही रह जायें।"

"ऐसा क्या है इस तलवार में ?" हुसेन ने साधारण ढङ्ग से

औत्सुक्य भाव व्यक्त किया ।

"हुजूर इस पर मुगल खानदान की पूरी तवारीख लिखी है । इस जैसा खुश किस्मत कौन होगा इस दुनियाँ में । इसे हर मुगल शहंशाह के हाथों रहने का सौभाग्य हासिल हुआ है । जन्नतनशीन बाबर ने इसी तलवार से लोदी खानदान को खत्म कर राजपूत शिरोमणि राणा सांगा का मैदाने जङ्ग में सामना किया था । बड़े–बड़े बहादुर राजपूतों के इसने छक्के छुड़ा दिये थे । दम तोड़ते वक्त यही तो वह तलवार है जो हुमाऊँ को अपने वालिद से मिली थी । अपने सीने से लगाये शहंशाह हुमाऊँ कहाँ–कहाँ मारे-मारे नहीं फिरे; मगर, एक लहमें के लिए भी अपने से अलग न किया । सूर सुल्तानों ने इसके अलावा और भी कुछ रहने दिया था पास शहंशाह हुमाऊँ के ।" दर्द भरी लम्बी साँस छोड़ कहा—"कितने बुरे दिन थे वे । मालूम दे रहा था जैसे मुगल हुकूमत ही उठ गई हिन्दुस्तान से । मगह बाहरी तलवार !" हुसेन के हाथों में ही रखी तलवार को चूम हैदरबेग ने कहना प्रारम्भ किया -"बाद में क्या गुल नहीं खिलाये इसने । शहंशाह अकबर के हाथों पहुँचते ही उसकी शान देखने लायक हो गई थी । इसने अपनी नोक से मुगल ताकत के उखड़े हुए पैरों को जमाया, मुगलों को हिन्दुस्तान में ठहरने की जगह बख्शी । इसका रुख जिधर हुआ, मुगल हुकूमत उधर ही बढ़ती चली गई । इसने हिन्दुस्तान के उत्तर में अजमेर, ग्वालियर, जौनपुर मालवा, गोंडवाना, अम्बर, चित्तौड़, रणथम्भौर, कालिंजर, जोधपुर, जैसलमेर, गुजरात और बङ्गाल वगैरह सल्तनतों को मुगल हुकूमत के आधीन कर दिखाया । बाद में इसका तमाशा उत्तर-पश्चिम की रियासतों, काबुल, कश्मीर, सिन्ध उड़ीसा, बिलोचिस्तान और कन्दहार वगैरह ने देखा । इसी में इतनी ताकत थी कि दक्षिण के अहमदनगर और खानदेश वगैरह मुगल हुकूमत के अङ्ग

बन सके। हुजूर, यूँ समझिये कि इस तलवार ने उत्तर-पश्चिम में अफगान से लेकर पूर्व में बङ्गाल तक और उत्तर में काश्मीर से लेकर दक्षिण में बीजापुर तथा गोलकुण्डा की सरहद तक मुगल सल्तनत कायम की। अकबर को हिन्दुस्तान का जनप्रिय बादशाह इसी ने बनाया। बड़े-बड़े शानदार और इज्जतदार राजपूतों को अपनी बहनों-बेटियों को मुगलों को सौंपने को इसी ने मजबूर किया। राणाप्रताप को जङ्गल-जङ्गल मारे-मारे फिरने, घास की रोटियां खाने और जमीन पर सोने को किसने मजबूर किया? क्या शहंशाह अकबर ने? नहीं; इस तलवार ने। इसी की बदौलत जहांगीर ने तेइस साल तक ऐश की जिन्दगी काटी। किसी भी ताकत को मुगलों के खिलाफ इसने सिर उठाने न दिया। शहंशाह शाहजहाँ ताज जैसा बेमिसाल मकबरा इसी के बलबूते पर बनवा गये। यह तो किस्मत की बात थी कि किसी तरह यह औरङ्गजेब के हाथ लग गई, वरना औरङ्गजेब की क्या हस्ती थी कि दाराशिकोह, मुराद और शुजा को खत्म कर तख्त हासिल करते। इसी ने तो इस्लाम का झण्डा औरङ्गजेब से उत्तर में काश्मीर, हिन्दूकुश दक्षिण में अफगानिस्तान, दक्षिण-पश्चिम में गजनी से ३६ मील तक; पश्चिमी किनारे की ओर गोआ की उत्तरी हद, वेलगांव और तुङ्गभद्रा नदी तक; दक्षिण में मैसूर, तञ्जौर और कोलरून नदी तक फहरवाया था। काफिरों के छक्के इसी ने छुड़ाये थे। दक्षिणी सल्तनतों के सुल्तानों की नींद इसी ने हराम कर रखी थी। कहां तक हुजूर को इसकी बाबत बतायें। हुजूर तो खुद ही पूरी मुगल तवारीख से वाकिफ हैं। मुगल बादशाहों को जो भी कामयाबी इस हिन्दुस्तान में हासिल हुई, सब इसी की बदौलत। हकदार के हाथ में यह हमेशा हल्की रही है, मगर दुश्मन के सिर पर गिरते ही इसका वजन हजारों गुना बढ़ जाता है। हुजूर समझ लें कि बादशाह सलामत ने अपने बुजुर्गों की पूरी दौलत हुजूर के कदमों में खुश होकर डाल दी है। अब यह हुजूर की शान

में चार चाँद लगाने हुजूर के पास आ गई है।"

"तब तो मेरी समझ में फर्रुखसियर ने खुद हार मान ली है। इस बार हमें माफ कर देना चाहिए उसे। क्यों भाई साहब, क्या ख्याल है आपका ?"

अब्दुल्ला खाँ हैदरबेग और सम्राट के सम्बन्धों से परिचित थे। हुसैन की बात की लीपा-पोती करते हुए अब्दुल्ला ने कहा-"मेरा तो पहले ही ख्याल था कि बादशाह सलामत ऐसी गल्ती कभी नहीं कर सकते, वह इन्सान की कद्र करना जानते हैं। किसी बेवकूफ ने अण्ट-सण्ट बक दिया होगा। आजकल बेवकूफों की भी तो कमी नहीं है।"

हैदर ने अब्दुल्ला की अस्पष्ट बात को समझने की चेष्टा भी नहीं की; फिर भी उसने इतना तो अनुमान लगा ही लिया कि बादशाह के विरुद्ध हुसैन कुछ गम्भीर कदम उठाने जा रहा था। हुसैन की गर्वोक्ति में निहित भाव यथेष्ठ था हैदरबेग को अपनी धारणा निर्मित करने के लिए। और अधिक ठहरना उचित न समझ हैदरबेग ने उठते हुए क्षमा याचना की—"आप लोग मेरी इस धृष्टता को माफ करने की मेहरबानी करेंगे कि मैं जल्दी ही जाना चाहता हूँ। बाद-शाह सलामत को नासाज में छोड़ ही आया था, जब तक मैं आप लोगों द्वारा उनकी भेजी हुई खिलअत को मंजूर करने की इत्तिला उन्हें नहीं दूँगा जाकर, वह बेचैन बने रहेंगे। इस वक्त उनकी सेहत के लिए आराम निहायत जरूरी है।" हैदरबेग कह कर उठ खड़ा हुआ।

अब्दुल्ला ने आवश्यकतानुकूल भावना व्यक्त की —"बादशाह सला-मत की खिदमत में मेरी ओर से अर्ज कर देना जाकर कि किन्हीं जरूरी झंझटों की वजह से इस वक्त उनके हुजूर में हाजिर नहीं हो

सकता हूं ; शाम के वक्त जरूर दर्शन करूंगा आकर।"

"जो हुक्म!" कह कर हैदरबेग ने अभिवादन किया और कक्ष छोड़ दिया।

हुसैन खां हैदरबेग द्वारा व्यक्त इतिहास की तलवार पर पढ़ने की कोशिश कर रहा था।

"तो फिर क्या कहा ?" अत्यधिक प्रसन्नता के कारण लोट-पोट होते हुए बादशाह ने प्रश्न किया।

"कहेगा क्या ; खामोश बैठा सुनता रहा। गांठ में कुछ अक्ल होती तो कुछ कहता-सुनता। बस ! तलवार को उलट-पुलट कर देखता रहा।"

"अब्दुल्ला ने भी कुछ नहीं कहा ?"

"गुलाम को हैदरबेग कहते हैं हुजूर। अब्दुल्ला खां सरीखे एक तो क्या अगर सौ भी एक साथ अपनी अक्ल लगादें तो भी हैदरबेग की चालों को समझना उनके बस की बात नहीं। आखिरकार बड़े खाँ के साथ रह कर क्या इतना भी नहीं सीख पाया हूँ ? पूरी सागिर्दी की है; सिर्फ हुक्का ही नहीं भरा है।"

"मगर, मुझे ताज्जुब तो इस बात का हो रहा है कि अब्दुल्ला खाँ सरीखा निहायत अक्लमन्द इन्सान कैसे बेवकूफ बन गया ?"

"पूरी अक्ल का ठेका उन्हीं को खुदा ने दे रखा है; अक्ल तकसीम करते वक्त खुदा ने इस गुलाम का ख्याल भी रखा था।" हैदरबेग ने कहकर बादशाह के सम्मान में सिर झुका दिया।

"दरअसल तुम्हारा जैसा अक्लमन्द शख्स दूसरा नहीं सल्तनत में।"

"बस ! इंसान यहीं तो धोखा खा जाता है। यह दुनियां बड़ी अजीबो गरीब है; एक-से-एक बढ़कर अकलमन्द इंसान भरे पड़े हैं।"

"होंगे, मगर मुझे तो इस वक्त तुम सरीखा दूसरा नजर नहीं

आता ।"

"यह तो हुजूर की नजरे इनायत है गुलाम पर; मगर गुलाम खुद कभी ऐसी गलतफहमी में अपने को डालने की गुस्ताखी नहीं करता ।"

बहुमूल्य रत्न जड़ित अंगूठी उतार हैदरबेग की ओर बढ़ाते हुए सम्राट ने कहा—"दरअसल, काम तो ऐसा किया है कि अगर तुम्हें कहीं की सूबेदारी सौंप दी जाय तो भी वह कम है । मगर वक्त ऐसा नाजुक है कि हम तुम्हारे जैसे वफादार शख्स को अपने से दूर नहीं करना चाहते ।"

"गुलाम की भी यही ख्वाहिश है कि हुजूर की खिदमत का मौका मिलता रहे ।"

"दरअसल सय्यद भाइयों की नस अगर कोई पहचान सका है तो तुम । उनकी चालों को तुम्हारे अलावा काट ही कौन सकता है ? हाँ, तो शाम को दोनों आ रहे हैं, या सिर्फ अब्दुल्ला ही ?"

"मेरा तो ख्याल है कि दोनों आयेंगे ।"

"क्या ऐसी कुछ बात तुम्हारे सामने हुई थी ?"

"हुसैन तो कुछ बोला नहीं था; मगर अब्दुल्ला उसे साथ लायेगा जरूर ।"

"तब तो तुम्हारा रहना उस वक्त निहायत जरूरी है: मुझे हुसैन की शक्ल तक से डर लगता है । ऐसी खतरनाक सूरत तो देखने में ही नहीं आती ।"

"तो फिर हुजूर रोक क्यों रहे हैं मुझे ? दुश्मन को जितनी जल्दी–से–जल्दी········· · ।"

बीच में ही बादशाह ने बात काट कहा—"यह काम दिल्ली से दूर होना चाहिए । यहां किए जाने पर हालत नाजुक होने का अन्देशा है ।"

"तो फिर दूर कहीं जाने का हुक्म दे दीजिए न।"

"मारवाड़ भेजा तो गया था; मगर वह ऐसा फौलादी इंसान है कि जिन्दा लौट आया।"

"आपने भी तो अजीतसिंह सरीखे बुजदिल और कमजोर राजा से उसे भिड़ाया था।"

"अजीतसिंह को बुजदिल और कमजोर नहीं कहा जा सकता। उस की बहादुरी और जवांमर्दी के कार्य क्या तुमने नहीं सुने हैं ? न जाने कितनों को उसके सामने मुँह की खानी पड़ी है। एक भी तो आज उससे टक्कर नहीं ले सका है।"

"किसी मर्द से पाला नहीं पड़ा होगा।"

"अब तो उसने शिकस्त खाई ही है; कुछ भी कहा जा सकता है उसके लिए।"

"हुजूर, शिकस्त ही नहीं खाई है, उसने वह भी राज हुसेन पर जाहिर कर दिया है जो चवेन्नाराम के जरिए उस तक हुजूर ने भेजा था।"

"वाकई ?" सहसा उछल पड़ा बादशाह—"यह कैसे मालूम हुआ।"

"मेरे जासूसों ने मुझे बताया है।"

"तब तो खैर नहीं।" बादशाह का भय व्यक्त हो गया।

"हुजूर जरूरत से ज्यादा खौफ खाये हुए हैं। मुझे इजाजत क्यों नहीं देते ? हमेशा के लिए आज ही·······।"

"नहीं, हैदर-नहीं; कोई ऐसी तरकीब निकालो कि हुसेन मेरे रूबरू न आने पाये।"

"उसे रोकने का तो एक ही रास्ता है······।"

"मगर वह रास्ता उतना ही खतरनाक है जितना हुसेन खुद।"

"तो फिर गुलाम मजबूर है।"

कुछ क्षणों तक विचार मग्न रहने के उपरान्त बादशाह ने घबड़ाहट व्यक्त की—"जाओ, फौरन मीरनासिर को भेज दो जाकर।"

बादशाह की आज्ञा होते ही हैदरबेग चुपका झुक अभिवादन कर प्रस्थान कर गया।

बादशाह ने आँखें बन्द कर खोल दाहिने हाथ की ओर देखा। परिचारिका सम्राट की आवश्यकता पूर्ति के लिए दौड़ पड़ी। सम्राट कुछ ही क्षणों में ऊबने-उतराने लगा।

१६

पश्चिम दिशा में गगन-मण्डल की रक्तिम आभा सूर्यास्त के क्षणों का परिचय दे रही थी। प्रकृति संध्या-नायिका के आगमन के स्वागतार्थ प्रस्तुत थी। उधर अब्दुल्ला खाँ बादशाह से मिलने की तैयारी कर रहे थे। अच्छा-खासा लम्बा-चौड़ा स्वस्थ शरीर था जिस पर सोने के तारों से जड़े झिलमिलाते रत्नों से निर्मित रेशमी वस्त्र। सिर पर पगड़ी जिसका तुर्रा दर्शनीय था। पगड़ी का हीरा दर्शकों के आकर्षण तथा चर्चा का विषय था। भीतर अब्दुल्ला खां वस्त्राभूषण धारण कर रहा था बाहर जंगी हाथी सवारी के लिए सजाया जा रहा था। खाँ साहब ने मोतियों की माला धारण कर मदिरा पात्र ओठों से लगाया ही था कि लक्ष्मी ने भागते हुए भीतर प्रवेश किया। कक्ष का समस्त क्रिया-कलाप जहाँ था, वहीं स्तब्ध रह गया। नत सिर खड़ी हांफती लक्ष्मी को आपादमस्तक देख अब्दुल्ला खाँ ने पात्र मुँह से दूर करते हुये प्रश्न किया—"लक्ष्मी ! कहाँ से आ रही हो ?"

"शाही महल से ?"

"इसीलिये आज दिखाई नहीं दीं सुबह से। कोई खास बात ? तुम्हारा तो मैं इन्तजार ही कर रहा था। कई बार पूँछ चुका हूँ तुम्हें।"

"हुजूर तो शायद वहीं जाने को तैयार हैं ?" लक्ष्मी ने दृष्टि उठा कर अब्दुल्ला की ओर देख कहा।

"हाँ-हां, मगर तुम्हारी बात भी तो सुनने को तैयार हूँ।" दृष्टि घुमाते ही कक्ष में अब्दुल्ला खां और लक्ष्मी के अतिरिक्त अन्य कोई न रह गया।

"हुजूर का इस वक्त वहाँ जाना खतरे से खाली नहीं है।" लक्ष्मी ने अपना अभिप्राय व्यक्त किया।

"क्यों, क्या ऐसा कुछ सुराग मिला है ?"

"जी हां; मैंने खुद अपने कानों सुना है ?"

"क्या ?" चरम औत्सुक्य व्यक्त कर अब्दुल्ला ने गाव तकिए का सहारा ले लिया।

लक्ष्मी वैसी-की-वैसी ही खड़ी रही। खड़े-खड़े ही उसने निवेदन किया—"हुजूर को और छोटे खां साहब को कब्जे में करने की बड़ी-बड़ी तैयारियां की जा रही हैं। मीरजुमला से तो हुजूर वाकिफ होंगे ही ?"

"हां-हां, बखूबी जानता हूं उन्हें।"

"बादशाह सलामत से मुलाकात करते वक्त आप उन्हें वहीं हाजिर पाइयेगा। वहाँ छोटे साहब को दक्षिण की तरफ भेजने का फैसला तो हो चुका है। और आपको ऐसी शराब पिलाने की तैयारी की जा चुकी है जिसका असर तीन दिन बाद शुरू होगा।"

सुनते ही अब्दुल्ला ने सिर हिला-हिला नाक द्वारा स्वर निकाल लक्ष्मी की सूचनाओं पर विश्वास प्रकट किया।

लक्ष्मी ने आगे कहा—"हैदरबेग तो फौरन छोटे हुजूर को रास्ते से हटाना चाहता है, मगर बादशाह सलामत ही इजाजत नहीं दे रहे हैं।"

"मरते वक्त चीटियों के भी पर निकल आते हैं। बेचारा उड़ने की कोशिश कर रहा है। आज ही उसके पर न काट दूं······।"

बीच में ही लक्ष्मी बोल पड़ी—"वक्त नाजुक है हुजूर। हैदरबेग जैसे हजारों है। किस-किस के कब तक पर काटते रहेंगे हुजूर ?"

"एक भी नहीं बचने पायेगा।"

"किन्हें जहन्नुम पहुँचाना है भाई साहब ?" द्वार से प्रवेश करते ही हुसेन ने सुनी बात पर अपनी जिज्ञासा व्यक्त की।

"आ गये ? तुम्हारा ही तो इन्तजार कर रहा था।" तत्क्षण चेहरे का भाव परिवर्तित कर अब्दुल्ला ने छोटे भाई की प्रतीक्षा-भावना व्यक्त की।

"क्या बताऊँ भाई साहब ! मैं तो बहुत पहले ही यहां आ पहुँचता, रास्ते में मिल गया हैदरबेग।"

हुसेन के मुँह से हैदरबेग का नाम सुन अब्दुल्ला के कान खड़े हो गये; चौकन्ने हो विस्फारित नेत्रों से भाई की ओर देख चरम औत्सुक्य व्यक्त किया—"हैदरबेग !"

"हां, भाईसाहब ! उसने एक घोड़ा भी मुझे नजर किया है। इस घोड़े की बाबत अगर आप सुनेंगे तो दंग रह जायेंगे। कमाल का सख्स है वह भी। तबियत खुश कर दी उसने आज मेरी। ऐसा बेहतरीन घोड़ा बहुत दिनों से देखने को न मिला था।"

"हैदरबेग से कुछ बातें भी हुईं ?" अब्दुल्ला ने अपनी आशंका व्यक्त की।

गद्‌गद् हो हुसेन ने आन्तरिक उल्लास व्यक्त किया—"क्या बयान करूँ भाई साहब। घोड़ों का एक ही पारखी है हैदरबेग। शाही घोड़े खाने का सबसे बेहतरीन घोड़ा उड़ा लाया है।"

"घोड़े के अलावा भी कुछ बातें हुईं ?"

अपनी प्रसन्नता के प्रति बड़े भाई की उपेक्षा अनुभव कर हुसेन ने सन्देहजनित जिज्ञासा प्रगट की—"हैदरबेग ने क्या आपकी शान के खिलाफ कोई हरकत की है ?"

"नहीं, यों ही पूँछा; मगर हैदर आदमी अच्छा नहीं है। उससे खबरदार रहने की जरूरत है।"

"सो क्या मैं जानता नहीं कि वह बादशाह का आदमी है ? आप बेफिक्र रहिये। हुसेन अपनी तलवार के अलावा और किसी पर यकीन नहीं करता। हां, मेरे आने के वक्त आप क्या कह रहे थे कि एक भी

नहीं बचने पायेगा ?"

"हाँ कुछ सियार शेर बनने की कोशिश कर रहे हैं।"

"कौन हैं, मुझे बताइये न; सल्तनत में एक ही शेर रह सकता है। मैं रहूँगा या वे रहेंगे।"

"हुसेन के साथ और अधिक बैठ उन सभी बातों को अब्दुल्ला खां व्यक्त नहीं करना चाहते थे जो तत्काल हुसेन को उत्तेजित कर कोई अप्रत्याशित कदम उठाने को बाध्य कर दें। फलत: प्रसंग परिवर्तित कर कहा—"शायद बादशाह सलामत मेरा इन्तजार कर रहे होंगे। वक्त काफी हो गया है; अब तक मुझे पहुँच जाना चाहिये था।"

हुसेन ने अपने भाई की चाल समझ ली, फौरन कहा—"देखिये भाई साहब ! मैं आपसे कोई बात नहीं छिपाता, आपको चाहिये कि आप भी अपने मन की बात बता दें।"

हुसेन छोटी-से-छोटी बात पर कितना उग्र रूप धारण कर सकता है, इससे अब्दुल्ला खाँ अपरिचित न थे। भाई की धारणा को निर्मूल सिद्ध करने के अभिप्राय से कहा—"हुसेन भाई ! दरअसल बात यह है कि मैं नहीं चाहता कि तुम्हें उन झंझटों में डालूँ जिनसे मैं बखूबी निपट सकता हूँ। जो काम मेरी ताकत के बाहर होगा, वह तो तुम्हें करना ही पड़ेगा। मुझे अपने भाई पर नाज है कि जो काम इस जमीन पर कोई नहीं कर सकता है, उसे मेरा भाई तलवार हिला कर सकता है।"

अपनी प्रशंसा सुन हुसेन का सीना फूल गया; चेहरे की आभा द्विगुणित हो गई। इसके पूर्व कि हुसेन कुछ कहने पाये अब्दुल्ला ने खड़े होते हुए कहा—"देर करना ठीक नहीं, अब मैं चलता हूँ।"

दोनों भाई महल से बाहर निकल दो विपरीत दिशाओं को चल दिये।

१७

"हुजूर कब तक इन्तजार करेंगे ?" दीर्घ प्रतीक्षा से ऊबकर मीर जुमला ने कहा।

"बादशाह ने मीर जुमला की बात का समर्थन किया—"हां, देर तो काफी हो गई है। अब आने की कोई उम्मीद नहीं है।"

"मगर ऐसा कभी हुआ नहीं।"

"उसी का तो मुझे भी ताज्जुब हो रहा है कि अब्दुल्ला में चाहे जो खराबी हो मगर अपनी जबान का पक्का है।"

"कहीं कोई सुराग तो नहीं मिल गया ?" मीर जुमला ने सन्देह व्यक्त किया।

"नामुमकिन।" बादशाह ने विश्वास दिलाया—"सैय्यद भाइयों की बातें मा बदौलत को मालूम हो सकती हैं; उन्हें मेरी नहीं।"

"मगर उनके जासूस भी कम होशियार नहीं हैं। चेहरा देख कर ही मन की बात भाँप लेते हैं।"

"मन की बात भांपने में तो धोखा भी हो सकता है, मेरे पिंजड़े में एक ऐसी चिड़िया आ फँसी है जो उनके मन की बात ही नहीं जानती, बल्कि जैसा चाहती है वैसा नचा भी लेती है उन्हें।"

"इस फन में हुजूर की बराबरी करने वाला कौन है ? क्या अब्दुल्ला के हरम से उड़ आई है कोई ?"

"आपको तो याद होगा कि बहुत दिन हुये रतनचन्द के माली की लड़की लक्ष्मी पकड़ कर लाई गई थी, जो किसी तरह भागने में कामयाब हो गई थी। रतनचन्द का लड़का लक्ष्मी से मुहब्बत करता था।

उसने लक्ष्मी को तहखाने में छुपा लिया था, मगर मेरे आदमियों ने वहाँ भी उसे खोज निकाला। सेठ के लड़के को मार लक्ष्मी को लाया ही जा रहा था कि हुसेन खाँ वहाँ पहुँच गया। हुसेन खाँ की वजह से लक्ष्मी यहाँ न आ सकी। रतनचन्द ने अब्दुल्ला खां को खुश करने के लिये लक्ष्मी उसे सौंप दी, मगर लक्ष्मी एक ही होशियार लड़की है। यह जानते ही कि उसके बाप को अब्दुल्ला खां ने मरवा दिया है, अब्दुल्ला खां से बदला लेने के लिए मेरे पास आ गई है।"

"मगर सैय्यदों को नाच कैसे नचायेगी ?"

"वहां का आना-जाना बन्द नहीं किया है उसने।"

"तब तो खतरनाक साबित हो सकती है।"

"नामुमकिन ! बाप के कत्ल का बदला लेना है उसे। मुझे तो पूरा यकीन है कि रास्ते के रोड़े उसी के जरिए दूर होंगे।"

"इससे आसान तरकीब और क्या हो सकती है, मगर निगाह उस पर भी रखना लाजिमी है ऐसा न हो कि कहीं· · · · · ·।"

"उसकी एक-एक हरकत पर मेरी निगाह रहती है। किस वक्त कहाँ किससे मिलती है और क्या बातें करती, मुझे सब खबर रहती है।"

"तो फिर दरियाफ्त करियेगा कि सैय्यद आये क्यों नहीं ?"

"जरूर-जरूर ! वजह की जानकारी उसे जरूर होगी।"

"इजाजत दीजिये, सुबह फिर खिदमत में हाजिर होऊँगा।"

"हां, रात काफी जा चुकी है; आराम करने का वक्त भी हो गया है।"

"खैर आराम की कोई बात नहीं; अगर उनके आने की उम्मीद होती तो इतनी रात क्या पूरी रात भी नाकाफी थी।"

"वह क्या मैं जानता नहीं, आपकी ही बदौलत तो मा बदौलत आराम की नींद सोया करते हैं। सैय्यद भी आपके नाम से काँपते है।"

"यह तो सब हुजूर की नजरे इनायत हैं।"

"नहीं मीर साहब ! आप जैसा आला इन्सान है ही कौन जो सल्तनत की बारीकियों को बखूबी समझता हो और सैयदों की चालों को नाकाम बनाता हो।"

"मेरा तो ख्याल है कि हुजूर को तकलीफ उठाने की जरूरत नहीं; आराम फरमायें।" बातों की झोंक में बादशाह दो चार कदम मीर-जुमला के साथ द्वार की ओर बढ़ आया था।

बादशाह के बढ़ते कदम रुक गये और जुमला ने झुक कर सम्राट का अभिवादन किया और अपना रास्ता पकड़ा।

बादशाह सीधे विश्राम गृह की ओर उन्मुख हो गया। पलंग पर पैर फैलाकर इतमीनान से दो ही मदिरा पूरित पात्र खाली कर पाया होगा कि अब्दुल्ला के आगमन की सूचना मिली। बादशाह सहसा किंकर्तव्य विमूढ़ हो गया। द्वार पर वह व्यक्ति खड़ा था जिससे बादशाह की रूह कांपती थी; जिससे बादशाह कोसों दूर रहना चाहता था; पर आफत सिर पर आ पहुँची थी। एक बार मन में आया कि सोने का बहाना कर टाल दे; पर अज्ञात भय ने उसे ऐसा न करने दिया। अतिथिगृह में बिठाये जाने की आज्ञा प्रसारित कर दी। कुछ क्षण सोच अपने चारो ओर दृष्टि दौड़ाई; कई परिचारिकायें, जिनमें सितारा-लक्ष्मी आदि भी सम्मिलित थीं, दृष्टिगत हुई। बादशाह ने लक्ष्मी को सम्बोधित किया—"लक्ष्मी ! जरा बढ़कर देखना तो, मीर साहब अभी सदर दरवाजे से बाहर न होने पाये होंगे, उन्हें सैयद भाइयों के आने की इत्तिला तो कर देना।"

लक्ष्मी रफूचक्कर हो गई।

अतिथिग्रह में सम्राट के प्रवेश करते ही अब्दुल्ला खाँ ने उठ कर अभिवादन किया। मधुर मुस्कान के साथ सम्राट ने आसन ग्रहण किया। अब्दुल्ला ने प्रश्न किया—"हुजूर की तबियत शायद कुछ नासाज रही आज ?" अब्दुल्ला को सम्राट स्वस्थ प्रतीत हुआ।

"नहीं, ऐसी तो कोई खास बात आज नहीं हुई।"

"हैदरबेग तो दोपहर को कह रहे थे।"

"हाँ, यों ही कुछ जरा तबियत ढीली हो गई थी उस वक्त ।" बादशाह ने भूल सुधार करने की कोशिश की।

"आ तो मैं उसी वक्त रहा था; मगर कुछ जरूरी काम ऐसे आ गये कि अब जाकर फ़ुरसत मिली है।"

"सल्तनत के काम शैतान की आंत होती है। यह तो आप हैं जो सब निपटाते रहते हैं! आज ही मीरसाहब आप लोगों की बाबत बात कर रहे थे।"

"क्या कह रहे थे ?"

"मुझे तो ऐसा महसूस हो रहा था उस वक्त कि वह आप लोगों की तारीफ करते कभी थकते ही न होंगे। आप लोगों की मेहनत और ईमानदारी पर वह इस कदर फिदा हैं कि······।"

"शायद अभी यहीं से तशरीफ ले जा रहे होंगे?" बीच में ही अब्दुल्ला ने प्रश्न कर दिया।

"कहाँ मिले थे वह आपको ?"

"बावड़ी के पास।"

बादशाह बीच-बीच में द्वार की ओर देख लेता था। अब्दुल्ला की दृष्टि से बादशाह की यह बात छिपी न थी।

"निहायत नेक इन्सान हैं वह। सारी उम्र मज़हबी कामों में गुजारी है।" समय बिताने के लिए बादशाह ने मीर जुमला को ही वार्ता का विषय बनाया।

"पर आजकल तो सियासी मामलों में काफी रुचि लेने लगे हैं।" अब्दुल्ला ने मीठी चुटकी ली।

"वह तो मैंने ही थोड़ा वक्त उनसे देने को कहा है। सोचा, आप लोगों पर सल्तनत के कामों का काफी बोझा रहता है; क्यों न एक

ऐसा शख्स आप लोगों की मदद के लिये कर दूँ जो निहायत जहीन हो; और सल्तनत के दाँव पेचों को बखूबी समझता हो।"

"वाकई, इस वक्त एक ऐसे ही शख्स की जरूरत भी है। विहार में काफी गड़बड़ी मची हुई है। खबर मिली है कि वहाँ की रियाया ने हुकूमत के खिलाफ बगावत करने का फैसला किया है। जल्द–से–जल्द किसी-न-किसी का वहाँ भेजा जाना निहायत जरूरी है। हुजूर ने तो शायद वक्त की जरूरत को पहले ही समझ लिया था। मीर साहब हैं भी ऐसे वफादार और अक्लमन्द जिन्हें बखूबी यह काम सौंपा जा सकता है।"

इसी बीच मीरजुमला के उपस्थित होने की सूचना प्राप्त हुई। बादशाह की दृष्टि मीर को द्वार पर पड़े परदे के पीछे खोजने लगी। मीर ने प्रवेश कर अभिवादन किया। और बादशाह के संकेत पर स्थान ग्रहण कर लिया। आत्मीय दृष्टि से अब्दुल्ला की ओर देख मीर ने कहा 'आज बहुत दिनों बाद यहाँ आना हुआ ?"

"आप तो मीर साहब जानते ही हैं कि सैकड़ों झंझट लगे रहते हैं। जब कभी हुजूर की खिदमत में हाजिर होने की बात सोचता हूं तो कोई-न-कोई ऐसा मसला आ खड़ा होता है कि मौका टल जाता है।"

"खाँ साहब ! आप तो यकीन करेंगे नहीं, अभी–अभी मैं यहाँ से गया हूँ, हुजूर के सामने मैं इसी बात पर तो ताज्जुब जाहिर कर रहा था कि इतनी बड़ी सल्तनत का पूरा काम आप अकेले कैसे सम्हाल लेते हैं !"

"इस बात का रोना तो हुजूर के सामने मैं कई बार रो चुका हूँ और हुजूर ने आपको खोज भी निकाला। आप जैसा मददगार मिलना बड़े खुश······।"

बीच में ही मीरजुमला बोल पड़े—"अरे-अरे, यह आप क्या फरमा रहे हैं ! मैं हूँ ही किस काबिल।"

तपाक से अब्दुल्ला ने आवश्यकता प्रकट की--"यह जानना अपने वश की बात नहीं है मीर साहब। आज ही सुबह खबर मिली है कि बिहार की रियाया बगावत करने पर अमादा है। आप ही एक शख्स हैं जो बगावत की आग को ठंडा कर सकते हैं।"

मीर जुमला भी कच्ची गोलियाँ नहीं खेले थे; बादशाह की आड़ ले पूर्व योजना व्यक्त की—"हुजूर ने क्या दक्षिण की बाबत कुछ जिक्र नहीं किया ?"

"मैं तो आप का इन्तजार कर रहा था।" बादशाह ने अपना बोझा मीर जुमला के सिर रख दिया।

"दक्षिण की बाबत क्या बात है ?" अब्दुल्ला ने आशंका मिश्रित चरम औत्सुक्य व्यक्त किया।

"करीब-करीब वही हालत वहां की भी है जो बिहार . ?"

"मगर मुझे तो वहां की बाबत कुछ सुनने में आया नहीं ?" अब्दुल्ला ने बीच ही में सूचना को कसौटी पर कसने की चेष्टा की।

"दक्षिण से मेरे एक दूर के रिश्तेदार आये हैं आज दोपहर। वह कह रहे थे कि सूबेदार दाऊद खां ने अपने को सुल्तान घोषित कर दिया है। और यह तो आप से छिपा ही नहीं है कि दाऊद खां ने दो साल से आमदनी नहीं भेजी है।"

"मगर पिछले साल जब मैं दाऊद खां से मिला था तो मुलाकात के दरम्यान उसने कोई ऐसी बात नहीं की थी जिससे उसके बागी होने का अनुमान लगाया जा सकता।"

"आपके सामने उसकी क्या जुर्रत जो अलिफ से बे कर जाये। और आप ही उसके दिमाग को ठिकाने लगा भी सकते हैं; और किसी के बश की बात है भी नहीं।"

अब्दुल्ला खां की विचित्र स्थिति हो गई थी। 'हां' अथवा 'न'

कुछ भी नहीं कहते बन रहा था। दिल्ली से दूर वह होना नहीं चाहते थे। उन्हें सदा भय लगा रहता था कि उनकी अनुपस्थिति में बादशाह न जाने क्या कर बैठे। बादशाह फर्रुखसियर को वह सदा अपनी उपस्थिति से आतंकित रखना चाहते थे। और मीरजुमला ने यह कह कर कि दाऊद खाँ केवल उन्हीं के द्वारा रास्ते पर लाया जा सकता है, अन्य किसी के भेजे जाने की सम्भावना भी समाप्त की जा चुकी थी। फिर भी कोई न कोई रास्ता तो निकालना ही था। मीर जुमला को दिल्ली से दूर फेंकना था। अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए अब्दुल्ला ने स्वीकार कर लिया—"दाऊद खाँ से मैं निपट लूँगा, मगर आप बिहार के लिए फौरन कूँच की तैयारी करना शुरू कर दीजिये, ताकि जल्द-से-जल्द आप वहाँ पहुँच बागियों को दबा सकें।"

बाध्य हो स्वीकार करना पड़ा मीर जुमला को—"कोशिश करूँगा कि कल-परसों तक कूँच कर दूँ।"

"रात काफी हो चुकी है। हुजूर अब आज्ञा दें।" अब्दुल्ला के मुँह से प्रस्थान की बात निकलनी थी कि मदिरा और पात्र आ उपस्थित हुये और बिना संकेत व्यक्त किये ही पात्रों में मदिरा उड़ेली जाने लगी। अब्दुल्ला खां ने लक्ष्य किया कि लक्ष्मी ही पात्रों को मदिरा से भर रही थी। लक्ष्मी को देखते ही उसके द्वारा कही गई सभी बातें स्मरण हो आईं। इसके पूर्व कि मदिरा पूरित पात्र सेवा में उपस्थित होने पाये, अब्दुल्ला ने कहा—"अगर आज हुजूर माफ कर दें तो निहायत मेहरबानी होगी। पिछले दस-बारह दिनों से मैं इसे छू तक नहीं रहा हूँ।"

"यह क्यों?" बादशाह की दृष्टि प्रश्न चिन्ह बन अब्दुल्ला के मुख मंडल पर जा टिकी।

"इधर कुछ दिनों से पेट में हल्का-हल्का दर्द बना रहता है। हकीम साहब का कहना है कि दर्द की वजह ज्यादा शराब ही है।

उस दिन से मैंने इसे छुआ तक नहीं है। जान है तो जहान है। आज-कल ऊल-जलूल खाना-पीना सब बन्द कर रखा है। हकीम साहब के मुताबिक दिन काट रहा हूँ।"

अब्दुल्ला ने कुछ भी न लेने की परिस्थिति इस ढंग से उत्पन्न की कि बादशाह को बाध्य हो कहना पड़ा—"तो फिर मजबूरी है; तन्दुरुस्ती हजार निहामत।"

"हुजूर का साथ तो हमें देना ही चाहिये।" मीरजुमला ने अन्तिम अस्त्र चलाया।

"अगर आप यही चाहते हों कि यहाँ से जाकर बिस्तर पकड़ लूँ और दर्द से तड़फ-तड़फ रात काटूँ तो मुझे कोई उज्र नहीं।"

"ऐसी ज्यादती कहीं मुमकिन है? रहने दीजिये मीरसाहब, खां साहब को ज्यादा मजबूर न करिए।"

"माफ करिएगा खाँ साहब! मुझे कतई अनुमान न था कि ऐसी नाजुक हालत में भी आप इस कदर काम कर रहे हैं। मैं खुदा से प्रार्थना करूँगा कि जल्दी-से-जल्दी वह आपको सेहतब रुखें।"

बादशाह से आज्ञा प्राप्त कर अब्दुल्ला कक्ष से बाहर निकल पालकी में जा बैठे। पालकी द्रुत गति से शाही महल के मुख्य द्वार से बाहर निकल राजमार्ग पर गन्तव्य स्थान की ओर अग्रसर होने लगी।

अब्दुल्ला अन्दर बैठे यह निर्णय नहीं कर पा रहे थे कि वह सफल हुए अथवा मीरजुमला।

१८

दो दिन के अन्दर ही मीरजुमला ने ससैन्य बिहार के लिए दिल्ली छोड़ दी। सय्यद अब्दुल्ला खाँ मीरजुमला को अपना सबसे बड़ा प्रतिद्वन्दी समझता था। मीरजुमला के प्रस्थान का समाचार पाते ही हुसेन अली दौड़ा-दौड़ा बड़े भाई के पास आया; और प्रश्न किया—"मीर जुमला को बिहार आपने क्यों भेजा है ?"

"सुनने में आया है कि बिहार के सूबेदार के कहने पर वहां की रियाया ने बगावत करने का फैसला किया है।"

"तो मीरजुमला वहाँ जाकर क्या करेगा ? मीर क्या मुझसे ज्यादा बहादुर है ? क्या उसकी तलवार में ज्यादा········?"

"नहीं भाई यह बात नहीं है; दरअसल मैं चाहता हूँ कि वह दिल्ली से दूर रहे ! उसका यहाँ रहना खतरे से खाली नहीं है।" "आपकी ये बातें मुझे कतई पसन्द नहीं है। आप फौरन मीर को वापस लौटने का हुक्म दें। हुसेन के रहते कोई दूसरा सल्तनत के किसी भी दुश्मन का सामना नहीं कर सकता।"

भाई को आपे से बाहर होता देख अब्दुल्ला ने कहा—"मगर तुम अकेले किस-किस दुश्मन का सामना करोगे ? दक्षिण के सूबेदार ने तो खुलेआम बगावत कर एलान का दिया है।"

"दाऊद खाँ की यह हिम्मत ! भूल गया वह दिन जब गिड़गिड़ाते हुए उसने मेरे कदमों पर अपना सिर रखा था! अभी जाकर होश ठिकाने लगाता हूँ।" कहता हुआ तेजी से हुसेन चला गया।

हुसेन कभी किसी बात की प्रतीक्षा नहीं करता था। उसके निर्णय

के अनुसार तत्काल आक्रमण किया जाना परम आवश्यक समझा जाता था। हुसेन ने फौरन अपने अधीनस्थ प्रमुख सरदारों को तैयार होने की आज्ञा दे दी जाकर। हुसेन के मुँह से आज्ञा का प्रसारित होना था कि सरदार तैयार होने लगे। कूँच के लिए हुसेन दिन-रात का ख्याल न करता था। आवश्यक तैयारी के पूर्ण होते ही उसका घोड़ा हवा से बातें किया करता था। ठीक से सबेरा भी न होने पाया था कि हुसेन ने ससैन्य दक्षिण के लिए प्रस्थान कर दिया।

हुसेन खाँ के दूर होने से सम्राट को राहत मिली; दिन—रात की चिन्ता दूर हो गई।

हुसेन अभी मार्ग में ही था कि बादशाह के गुप्तचर दाऊद से जा मिले; और सम्राट का संदेशा कह सुनाया। साथ ही यह भी आश्वासन दिलाया कि हुसेन के समाप्त होते ही उसे सल्तनत का सेनापति-पद प्रदान किया जायेगा। लालच बुरी बला होती है। दाऊद खां ने आव न देखा ताव गुजरात में ही मोर्चाबन्दी कर दी। अग्रगामी दल ने हुसेन को शत्रु की सूचना दी। हुसेन का मन वीर भाव से भर गया और तलवार म्यान के अन्दर मचल उठी। उसकी चाल में बिजली की—सी गति आ गई। पड़ाव-पर-पड़ाव लाँघता वह दाऊद के मोर्चे पर जा डटा। दोनों एक स्वभाव के थे; दोनों रक्त के प्यासे थे। दाऊद ने समझा था कि हुसेन के साथ थोड़ी-सी सेना है, तोपों की पहली मार में ही मैदान साफ हो जायेगा। और हुसेन अपने सामने शक्तिशाली—से-शक्तिशाली शत्रु को भी भुनगे के समान समझता था। किसी भी शत्रु को परास्त करने के लिए वह विशेष तैयारी की आवश्यकता समझता हीन था; और फिर, दाऊद जैसे मामूली सूबेदार को कुचलने के लिए उसे किस तैयारी की आवश्यकता थी! लम्बी यात्रा की थकान की बिना चिन्ता किए हुए हुसेन ने शत्रु-शक्ति को सामने देख अपने सरदारों को ललकारा। दाऊद भला कब चुप बैठने वाला था; उसकी तोपों ने भी

आग उगलनी प्रारम्भ कर दी। शत्रु के तोपों की मार देख याकूब खाँ ने, जो हुसेन खां का अच्छा सहयोगी समझा जाता था; और जिसकी सलाह पर कभी-कभी हुसेन ध्यान भी देता था; सोचता विचारता था, कहा—"अपनी तोपें किस वक्त के लिए हैं हुजूर?"

"भगाने के लिए कहीं तोपों की जरूरत होती है?" चुटकी बजा कर हुसेन बोला—"यों मसल कर रख दूँगा गुस्ताख को; अभी होश ठिकाने किए देता हूँ।" कहते ही हुसेन ने घोड़े को एड़ लगाई और घोड़ा बरसते गोलों के बीच धँस गया। स्वामिभक्त सेवक भला कब पीछे रहने वाला था; उसने हुसेन का अनुसरण किया। दाऊद की तोपें आग बरसा रहीं थीं; हुसेन के सैनिक भुँज रहे थे; फिर भी हुसेन के संकेत पर आगे बढ़ रहे थे। हजारों वीरों को यम-लोक पहुँचाकर तोपों ने अग्नि वर्षा बन्द की। हुसेन पीछे हटना या देखना तो जानता ही न था उसने यह जानने की कोशिश भी न की कि उसके वीर उसका अनुसरण कर रहे हैं अथवा नहीं। नङ्गी तलवार हाथ में लिए वह शेर सा टूट पड़ा दाऊद पर। दाऊद ने दूर से ही हुसेन को बढ़ता देख लिया था, चुने-चुने सैनिक उसने आगे बढ़ा दिए। हुसेन की बिजली-सी तलवार जिस शत्रु पर गिरी, वह हुसेन को दाऊद ही लगा। भू-पात होते ही हुसेन चिल्ला उठा—"यह मारा।"

तब तक दूसरा सैनिक सामने था। हुसेन उसे देख अचम्भे में आ गया। समक्ष खड़े सैनिक की यमलोक पहुँचे हुए सैनिक की सूरत से इतनी अधिक मिलती-जुलती थी कि हुसेन ने पृथ्वी की ओर इस सन्देह के निवारणार्थ देखा कि कहीं वही ती उठकर नहीं खड़ा हो गया है, पर उसका सिर कटा धड़ तड़प रहा था। हुसेन की दृष्टि ठीक से समक्ष प्रस्तुत सैनिक की ओर उठने भी न पाई थी कि उसकी तलवार गिरी हुसेन पर। हुसेन की इह लीला समाप्त हो गई होती यदि उसका अश्व पीछे न हट गया होता, बस अब क्या था! हुसेन की तलवार

मचल उठी। सक्रोध भरपूर वार किया जिससे वह विरोधी अपनी रक्षा न कर सका और घोड़ा सहित कट गया। उसके समाप्त होने की जैसे अन्य प्रतीक्षा ही कर रहे थे। एक-साथ तीन वीर उसी शकल के हुसेन को दृष्टिगत हुए। हुसेन का आश्चर्य चरम सीमा पर था। प्रत्येक का वेश दाऊद का सा था। किसी भी तरह अविश्वास नहीं किया जा सकता था कि अभी तक सामने आये वीरों में से एक भी दाऊद नहीं था; पर सभी तो साऊद हो नहीं सकते थे, इस धारणा के सत्य होते हुए भी हुसेन प्रत्येक को दाऊद समझ टूट पड़ा उन पर। चारों ओर घमासान युद्ध जारी था। अस्त्र-शस्त्र झनझना रहे थे: घोड़े हिन हिना रहे थे; हाथी चिग्घाड़ रहे थे; और वीरों की हुंकार वायु मण्डल को प्रध्वनित कर रही थी। हुसेन अपने को अकेला समझ लड़ रहा था: पर उसकी रक्षार्थ उसके दो सौ स्वामिभक्त वीर ढाल बन हुसेन के चारों ओर शस्त्र संचालन कर रहे थे। याकूब खां लड़ तो रहा ही था: पर अधिक तर वह शत्रु की गति विधि देख रहा था। उसे दिखाई दिया कि एक व्यक्ति, जो अपने ही शकल के अनेकों वीरों से घिरा खड़ा है, वीरों को आदेश दे रहा है। याकूब खां को समझते देर न लगी कि दाऊद खाँ वही व्यक्ति है। अन्तर केवल इतना था कि सबके घोड़े काले थे और उसका सफेद। याकूब खां ने आगे बढ़ हुसेन के निकट जा कहा—"हुजूर, दाऊद सफेद घोड़े पर है; इनमें से एक भी दाऊद नहीं है।" सुनते ही हुसेन की आँखें सफेद घोड़े को खोजने लगीं। दृष्टि को विशेष व्यायाम न करना पड़ा। श्वेत अश्व दृष्टिगत होते ही हुसेन लक्ष्य की ओर अग्रसर होने के लिए मार्ग के व्यवधानों को साफ करने लगा। दाऊद के विश्वास में अभी तक तनिक भी अन्तर न आने पाया था कि शत्रु उसे पहचान भी सकता है। याकूब खाँ हुसेन का तीसरा हाथ बन आगे बढ़ रहा था। दाऊद की असावधानी का थोड़ा ही लाभ उठा पाये थे दोनो कि दाऊद के मन में पहचाने जाने के सन्देह का बीज अंकुरित हो गया।

सम्हला वह और लपकी तलवार उसकी। श्वेत अश्व आगे बढ़ा। हुसेन अपनी अभीष्ट वस्तु को निकट आता देख शक्ति भर हुंकारा। पैर के संकेत पर अश्व उछला और पलक मारते ही दाऊद खाँ के अति निकट जा पहुंचा। ऊपर से कूदते हुए अश्व को देख श्वेत अश्व कुछ सहमा; पर, रहा अडिग।

दाऊद खां तक पहुँचते-पहुँचते हुसेन के सौ से अधिक स्वामिभक्त साथी सहस्त्रों शत्रुओं को सदा के लिये सुला वीर गति को प्राप्त हो चुके थे। याकूब खां स्वामी की रक्षा में अनेक प्रहार अपने शरीर पर झेल चुका था, जिसके परिणाम स्वरूप अश्व सहित उसका वेश रक्त वर्ण हो रहा था; फिर भी वह छाया की भाँति हुसेन के साथ था। दाऊद का प्रथम प्रहार हुसेन के अश्व पर हुआ। हुसेन को अश्व रहित होते देर न लगी। श्वेत अश्व हुसेन को अपनी टापों से विदीर्ण करने के अभिप्राय से दो पिछले पैरों पर खड़ा हो हिन हिनाया। उसके अगले पैर हुसेन पर गिरने भी न पाये थे कि याकूब का भाला अश्व के पेट में धँस गया जो घोड़े के भार के कारण आर-पार जा निकला और दाऊद को उछाल कर नीचे ला पटका। दाऊद बेचारा कहाँ सम्हलने पाया था कि हुसेन की तलवार उसके सीने के पार हो गई। हुसेन उसकी आँखों में झांक ही रहा था कि आवाज सुनाई पड़ी कि—"अभी दाऊद जिन्दा है; ले सम्हल।"

हुसेन ने सिर उठाया तो दिखाई दिया दि दाऊद खाँ की तलवार याकूब खां की तलवार से टकरा रही है। हुसेन ने दाऊद को भरपूर दृष्टि से देख पूर्व निर्मित परिचय के आधार पर मिलान किया तो वही ६ फुट ५ इंच का लम्बा सशक्त शरीर; बड़ी-बड़ी आँखें; चौड़ी पेशानी की बाईं ओर चार इंच लम्बे घाव का निशान; बिच्छू के डंक की भाँति दोनों ओर की ऐंठी हुई मूंछें और लालिमा धारण किए हुए लम्बी दाढ़ी दिखाई दी। वास्तविक दाऊद के होने में कोई भ्रम न

रहा। भ्रम—निवारण होते ही हुसेन लपका; पर उसके प्रहार करने के पूर्व दाऊद खां के सशक्त प्रहार ने याकूब खाँ की तलवार के दो टुकड़े कर डाले और याकूब खाँ की दाहिनी भुजा को शरीर से अलग कर दिया। अन्य प्रहार से बचने के लिए याकूब ने अपनी दूसरी तलवार बायें हाथ में सम्हाली; पर हुसेन के प्रहारों से रक्षा में दाऊद इस कदर व्यस्त हो गया कि याकूब पर प्रहार करने का अवसर ही न मिल सका उसे। क्रुद्ध सिंहों की भांति दोनों वीर परस्पर प्रहारों का आदान-प्रदान करने लगे। अप्रतिम योद्धाओं का अद्भुत दृश्य था वह। प्रत्येक प्रहार अन्तिम प्रतीत हो रहा था; पर अनुपम था रण कौशल दोनों का। प्रहार-पर-प्रहार हो रहे थे। तलवारें टकराकर झनझनातीं और अलग हो जातीं थीं। शनैः-शनैः प्रतिशोधाग्नि में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही थी। हुंकारें भर-भर कर टूट रहे थे दोनों एक दूसरे पर; पर मजाल क्या थी कि कोई दबता प्रतीत हो। एक-से-एक बढ़कर शूर वीर थे दोनों। एक क्षण ऐसा आ पहुँचा कि दोनों ने एक ही कोण से प्रहार किया; परिणामस्वरूप तलवारें इतनी जोर से टकराईं कि दोनों के दो टुकड़े हो गये और हाथों में आधा-आधा भाग शेष रह गया। दाऊद ने बायें हाथ से दूसरी तलवार निकालने की कोशिश की ही थी कि कटार सीधी आकर उसकी दाहिनी आँख में आ घुसी, बाएं हाथ की तलवार वहीं छूट गयी और कटार को पकड़ बाहर निकालने का प्रयास किया। यही तो अवसर था जब शत्रु लाभ उठा सकता था; और हुसेन न चूका। दूसरी तलवार हाथ आ चुकी था। उसका ऐसा प्रहार हुआ कि दाऊद खाँ की आँते बाहर निकल आईं। दाऊद खां का गिरना था कि उसके दल में भगदड़ मच गई।

आकूब खां का इतना अधिक रक्त निकल चुका था कि वह खड़ा न रह सका; पर हुसेन की बलिष्ट बाहों ने उसे धराशायी भी न होने दिया। फौरन पालकी लाने की आज्ञा दी गई। हुसेन याकूब को गोद में

से वहीं बैठ गया। याकूब ने आँखें खोल हुसेन की ओर देखा और अस्फुट स्वर में रुक-रुक कर कहा—"हुजूर की गुलाम····से ···जो खिदमत····हो····सकी, क··र··ता··रहा । गुलाम ···को दी····हुई—··कटार।" याकूब खाँ ने बायें हाथ से कटार की खाली म्यान सामने कर कहा—"अ····ल···· वि····द अ अ अ अ।"

स्वामिभक्त याकूब खाँ की पेशानी को हुसेन खाँ ने चूमा और सामने रखी पालकी में निर्जीव शरीर को रख दिया।

१६

हुसेन अली और मीरजुमला के दिल्ली से दूर होने पर नामर्दों, हिजड़ों, हाँ-हुजूरों और चापलूसों की बन आई। अराजकता-अत्याचारों का बोलबाला हो गया। न किसी की सम्पत्ति सुरक्षित समझी जाती थी, न इज्जत। किस समय कौन किसके किस अत्याचार का शिकार बन जाय, अननुमानित था। सम्राट फर्रुखसियर और सैय्यद अब्दुल्ला खाँ सुरा और सुन्दरियों में अकण्ठ डूबे हुए थे। दोनों के महलों में दिन-रात चहल-पहल रहती थी। नित नवीन सुन्दरियों को लाया जाता था, उनका मनचाहा उपभोग होता था और अवसरवादी अपना उल्लू सीधा करते थे। यदि एक ओर रतनचन्द हुसेन खाँ को हर तरह से प्रसन्न कर अपने तहखाने भर रहा था तो दूसरी ओर बादशाह की सेवा में अहर्निश उपस्थित रहने वाले चापलूस, षड्यन्त्रकारी, खवास-खवासिनें अपनी अतृप्त आकांक्षाओं की पूर्ति से उत्पन्न आनन्द की सरिता में निमग्न हो स्वर्ग-सुख की अनुभूति कर रहे थे।

चिन्ता और सतर्कता यदि किसी में देखने को मिलती थी तो वह थी लक्ष्मी। लक्ष्मी कहीं भी स्थिर चित्त हो टिकने न पाती थी। किस वक्त कहाँ होगी, कहा नहीं जा सकता था। दोनों ओर से उसे पूरी स्वतन्त्रता थी। चापलूसों मुसाहिबों आदि द्वारा अत्यधिक समझाये-बुझाये तथा विरुद्ध बातों द्वारा भड़काये जाने पर भी बादशाह और अब्दुल्ला खाँ लक्ष्मी का अविश्वास न कर पाते थे; उसकी किसी भी सूचना में किसी चाल का सन्धान अनुभव न कर पाते थे; कारण, लक्ष्मी का स्वाभाविक आचरण। शनैः शनैः लक्ष्मी की यह स्थिति हो

गई कि उसके द्वारा प्राप्त जिन सूचनाओं की पहले खोज-बीन की जाती थी वह भी बन्द हो गई। इसका परिणाम यह हुआ कि दोनों दल दोनों की गतिविधियों से पूर्णतया अवगत रहने लगे; पर दोनों को इस बात का ज्ञान न था। प्रत्येक लक्ष्मी को अपना समझता था। लक्ष्मी थी भी अपनी समझी जाने योग्य।

जब से सेठ रतनचन्द ने लक्ष्मी को अब्दुल्ला को सौंपा था, लक्ष्मी की ओर से उदासीन हो गया था वह पर,एक दिन एक असाधारण घटना ने रतनचन्द का ध्यान लक्ष्मी की ओर आकर्षित किया। रतनचन्द ने यह अधिकार प्राप्त कर लिया था कि किसी भी समय किसी भी अवसर पर वह अब्दुल्ला खां से मिल सकता था। उस दिन अब्दुल्ला खाँ लक्ष्मी के साथ बैठे हुए कुछ विचार-बिमर्ष कर रहे थे कि रतनचन्द आ टपका और नित्य की भाँति कक्ष-पर--कक्ष पार करते उस कक्ष के द्वार पर जा खड़ा हुआ, जिसमें खाँ साहब और लक्ष्मी उपस्थित थे। कुछ क्षणों के उपरान्त परिचारिका से बोला—"तू अभी तक खड़ी है?"

"इस वक्त कोई अन्दर नहीं जा सकता।"

"क्यों; क्या मुझे नहीं पहचानती?"

"सेठ जी को कौन नहीं जानता; पर, इस वक्त हुजूर की खिदमत में लक्ष्मी है।"

"लक्ष्मी ···कौन लक्ष्मी?" कुछ सोचकर—"वह माली की लड़की!" भौहों पर बल डाल परिचारिका से कहा—"जा—जा, हुजूर को सूचित कर दे जाकर कि मैं आ रहा हूँ।"

"कनीज हुक्म अदूली नहीं कर सकती।"

"रतनचन्द का हुक्म है।" सेठ झुंझला कर बोला जिससे उसकी आवाज कुछ असाधारण तीव्र हो गई।

अन्दर से स्वर सुनाई दिया—"कौन है बदतमीज?"

"हुजूर आपका गुलाम रतनचन्द।" सेठ ने बाहर से ही अपने

स्वर को अत्यधिक मृदुल बना कहा।

"जाओ, फिर किसी वक्त आना।"

सेठ ने समझा कि कदाचित अब्दुल्ला ने उन्हें पहचाना नहीं; इसी-लिए सेठ ने तनिक और ऊँचे स्वर में कहा—"सरकार मैं हूँ, रतन-चन्द--रतनचन्द।"

"क्यों बिलावजह गधे की तरह चिल्ला रहा है? जा, भाग जा।" यह फटकार सय्यद अब्दुल्ला की थी।

अपने प्रति अब्दुल्ला खाँ का अप्रत्याशित आचरण अनुभव कर सेठ को लक्ष्मी के अन्दर होने पर विश्वास नहीं हुआ। कुछ क्षण मौन रह परिचारिका से प्रश्न किया—"लक्ष्मी की शकल-सूरत कैसी है?"

यद्यपि सेठ का स्वर साधारण था, पर इतना मन्द न था कि अन्दर तक प्रवेश न कर सके। सेठ के स्वर को व्यवधान अनुभव करते ही अब्दुल्ला खाँ के दिमाग का पारा गरम हो गया; वह क्रोध में झुंझला कर चीखे--"इस सुअर के बच्चे को धक्का देकर बाहर निकाला क्यों नहीं जाता?"

बस, अब्दुल्ला का स्वर सुनना था कि रतनचन्द दुम दबा कर भागा; हवेली के बाहर खड़ी पालकी में बैठने पर ही सांस ली। पालकी बड़ी तेजी के साथ हवेली की ओर अग्रसर हो रही थी; पर सेठ का मन-मस्तिष्क लक्ष्मी के पास था। उसके कर्ण-कुहरों में लक्ष्मी का स्वर गूंज रहा था; दृष्टि के सम्मुख लक्ष्मी की सूरत नाच रही थी।

रतनचन्द के अनुमान के परे था कि लक्ष्मी, जिसे उसने बेजुबान भेड़-बकरी की भाँति अब्दुल्ला के कदमों में डलवा दिया था, उसे इतना बेचैन कर देगी! सेठ का आराम हराम हो गया। बस, एक ही धुन थी कि किसी तरह लक्ष्मी से मिलना है। न कोई काम सुहाता, न स्वार्थ। सब कुछ त्याग वह लक्ष्मी के पीछे पड़ गया। प्रति क्षण उसकी

डोली उधर से उधर डोलने लगी। भूख-प्यास हरण कर ली थी लक्ष्मी ने। निरन्तर बड़ी कोशिश और दौड़-धूप के पश्चात सेठ लक्ष्मी से साक्षात्कार करने में उस वक्त समर्थ हुआ जब कि वह बादशाह के महल से अब्दुल्ला की हवेली की ओर अग्रसर हो रही थी। सेठ के चन्द सिक्कों ने कहारों को डोली रोकने को बाध्य कर दिया। डोली ऐसी जाली से ढकी थी कि अन्दर से तो सब कुछ देखा जा सकता था; पर बाहर से अन्दर के विषय में कुछ भी जानना सम्भव न था। डोली के निकट सेठ को देख लक्ष्मी अप्रत्याशित आशंका से सिहर उठी। वह अभी अपने आचरण के विषय में निर्णय भी न कर पायी थी कि सेठ का स्वर सुनाई दिया—"बेटी लक्ष्मी !"

सेठ रतनचन्द इतने अधीर थे कि लक्ष्मी के उत्तर की बिना प्रतीक्षा किये ही कह उठे—"अपने बापू से नाराज हो क्या, लक्ष्मी बेटी ?"

सेठ का इतना कहना था कि परदा एक ओर खिसक गया और सजल नेत्रों से सेठ की ओर देखते हुये करुण स्वर में लक्ष्मी ने प्रश्न किया—"कहाँ हैं बापू ?"

"क्या मुझे तुम बापू नहीं कहा करती थीं ?"

परदा पूर्ववत हो गया और अन्दर से स्वर फूटा—"चलो।"

डोली उठी और हिलती-डुलती आगे बढ़ने लगी। सेठ डोली के साथ-साथ पैदल दौड़ने-सा लगा। डोली की गति शनैः-शनैः द्रुततर होती जा रही थी। सेठ भी पालकी की गति के साथ डोलते हुये कह रहा था—"लक्ष्मी बेटी, सुनो तो, जरा ठहरो !"

पर डोली न रुक रही थी। डोली आगे बढ़ने लगी, सेठ पीछे छूटने लगा। सेठ के भारी भरमक शरीर से पसीना छूट आया था; अपनी असमर्थता जनित नैराश्यपूर्ण स्वर में अंतिम अस्त्र का प्रयोग किया—"लक्ष्मी बिटिया! तुम्हारे बूढ़े बाप ने तुम्हारे लिए दिन-रात रो-रो अपनी आँखें ······।"

पालकी रुकती—सी प्रतीत हुई । सेठ वाक्य पूर्ण किए बिना ही लपका आगे ।

परदा सरका। लक्ष्मी का मुँह दिखाई दिया । सेठ ने करुणा प्लावित सविनय स्वर में कहा—"बापू से तो एक बार मिल लो लक्ष्मी बिटिया ।"

"मेरे बापू जिंदा हैं ? अविश्वास भरा प्रश्न था लक्ष्मी का ।

"हां लक्ष्मी बिटिया ।"

"कहां हैं ?" चरम औत्सुक्यपूर्ण स्वर था लक्ष्मी का ।

"कोठी में ।"

कुछ सोच लक्ष्मी ने सहमति व्यक्त की—"चलिये ।"

आगे बढ़ सेठ ने सफलताजनित उमंग भरे स्वर में कहारों को आज्ञा दी—"कंचन कुटी चलो ।"

लक्ष्मी की डोली सेठ की हवेली 'कंचन कुटी' की ओर बढ़ने लगी। सेठ की डोली तो साथ थी ही ; सेठ के सवार होते ही वह लक्ष्मी की डोली के आगे बढ़ने की कोशिश करने लगी ।

'कंचन-कुटी' पहुँचने पर सेठ ने लाख कोशिश की कि लक्ष्मी से कुछ बातें हो सकें ; पर, लक्ष्मी ने सेठ की एक भी न सुनी । आखिर-कार सेठ को बाध्य हो लक्ष्मी के कथनानुसार उसे उसके बापू से मिलाने ले चलना पड़ा । सेठ और लक्ष्मी चलते-चलते हवेली के उस भाग में जा पहुँचे थे जिस भाग के अस्तित्व से लक्ष्मी सर्वथा अपरिचित थी। एक मोड़ पर खड़े हो सेठ ने दीवाल पर बने आले से प्रज्वलित दीपक उठाया और गहन अन्धकार की ओर पैर बढ़ाया । दो-चार कदम आगे बढ़ने के उपरान्त सेठ ने पीछे मुड़ कर देखा तो लक्ष्मी साथ न थी । पुन: पीछे लौट दीपक तनिक ऊपर कर प्रकाश में लक्ष्मी के भयभीत चेहरे को देख सेठ ने कहा—"बापू से नहीं मिलना चाहती हो ?"

"पर, आप जा कहाँ रहे हैं ?"

"जहाँ तेरे बापू हैं ।"

"इस अँधेरे में बन्द कर रखा है मेरे बापू को ?"

"जैसा रास्ता है वैसी वह जगह नहीं हैं जहां तेरे बापू हैं ।"

"तो फिर कैसी है ?"

"स्वयं देख लो न चल कर ।"

लक्ष्मी ने सेठ की ओर देखा । सेठ को लक्ष्मी की दृष्टि में अविश्वास की झलक मिली । सेठ ने आश्वासन दिया--"विश्वास करो लक्ष्मी , तुझे तेरे बापू के पास ही लिये चल रहा हूँ ।"

"चलिये ।" लक्ष्मी ने स्वीकृति के साथ पैर भी आगे बढ़ा दिए ।

काफी देर तक चलनें के उपरान्त दीपक के प्रकाश की आवश्यकता कम प्रतीत होने लगी । कुछ ही दूर चलने के बाद खुले स्थान का प्रकाश दृष्टिगत हुआ । सामने विशाल उद्यान था । भाँति-भाँति के पेड़-पौधे रंग-बिरंगे पुष्पों से युक्त सुरभि बिखरे रहे थे । लक्ष्मी ने चारो ओर दृष्टि दौड़ाई । सेठ उद्यान में प्रवेश कर चुका था । लक्ष्मी सेठ का अनुसरण कर रही थी । संगमरमर निर्मित स्वच्छ जल से पूर्ण जलाशय के बाईं ओर से सेठ आगे बढ़ा ही था कि लक्ष्मी की दृष्टि दाहिनी ओर एक पौधे के निकट काम करते रामदास पर पड़ी । सेठ का साथ छोड़ लक्ष्मी अपने बापू की ओर लपकी और जोर से बापू को अपनी बाहों से कस लिया । लक्ष्मी को पहचानते ही रामदास ने संतान-प्रेम से अभिभूत हो पुत्री को अंक में समेट लिया । दीर्घकालीन विछोह जनित वेदनासिक्त स्वर फूटा "बापू ।"

"बिटिया ।" रामदास ने हृदय का सम्पूर्ण वात्सल्य उड़ेल दिया ।

कुछ क्षणों तक उसी स्थिति में बने रहने के उपरान्त लक्ष्मी को देखने के अभिप्राय से तनिक अलग-सा करते हुये पूँछा--"कैसी

हो लक्ष्मी ?"

"बापू, रोटी रोज बना लेते हो न?"

"सेठ जी की कृपा से भूखा नहीं रहता है तुम्हारा बापू ।" रामदास ने दूर खड़े रतनचन्द्र की ओर दृष्टि-संकेत किया।

लक्ष्मी ने सेठ की ओर ऐसी दृष्टि से देखा कि रामदास का आश्चर्य भाव व्यक्त हो गया-"ऐसे क्या देख रही है बेटी मालिक को।"

"इसी ने बापू हमें तुमसे अलग किया है।" संकुचित आंखों से घृणा-भाव प्रदर्शित करती हुई लक्ष्मी बोली--"कितना मक्कार और धूर्त है यह बापू, तुम नहीं जान सकते इसकी असलियत . . . ।"

"नहीं बेटी, हमारे अन्नदाता हैं ; हमारी कई पीढ़िया इसी खानदान की सेवा करती गुजरी है।"

"और इनकी भी बादशाहों और वजीरों की हाँ-हजूरी करते बीती होगी।"

"सेठ जी के पूर्वजों ने बादशाहों की क्या सेवा नहीं की ! जरूरत पड़ने पर तिजोरियां खोल दीं...... ।"

"बहू-बेटियाँ भी तो मेरी तरह भेंट की होंगी अपनी तिजोरियों को भरने के लिए।"

"यह मत पूछो लक्ष्मी, सेठ जी की जवान बेटी को बादशाह के आदमी बलपूर्वक उठा ले गये थे।"

"और यह फिर भी उन्हीं की चौखट में नाक रगड़ा करता है।"

"बादशाहों का कोई कर ही क्या सकता है। बादशाह के पास मैं तेरे लिए गया था ; न जाने कितनी आरजू-मिन्नत की थी ; पर उनके कान जूँ तक न रेंगी।"

"पर, बापू ; मैं रही ही कहां बादशाह के पास। मुझे तो इस ने बड़े खां साहब की सेवा में अपना उल्लू सीधा करने के लिये भेज दिया था।"

"बादशाह क्या नहीं कर सकते बेटी ! क्या वह तुम्हें खाँ साहब से मुझे नहीं दिला सकते थे ?"

"बादशाह कितना शक्तिशाली है और क्या कर सकता है, यह तो मैं जानती हूँ बापू ; जो काम बादशाह की ताकत के परे है, वह यह सेठ करा सकता है ।"

"तो क्या सेठ जी हमें तुमसे मिलवा सकते थे ?"

"इसके लिए कुछ भी असम्भव न था ।"

लक्ष्मी का इतना कहना था कि रामदास सेठ जी की ओर दौड़ पड़ा और हाँथ जोड़ प्रार्थनापूर्ण स्वर में निवेदन किया—"आप तो मालिक कहते थे कि मुझे लक्ष्मी से नहीं मिला सकते ; पर, लक्ष्मी तो कह रही है कि आप वह कर सकते हैं जो बादशाह भी नहीं कर सकते ।"

"रामदास ! तुम उस समय लक्ष्मी के वियोग में पागल हो रहे थे । लक्ष्मी तुम्हें मिल सकती थी ; मगर, करते क्या लक्ष्मी को लेकर ! बादशाहों-वजीरों के महलों से लौटी बहू-बेटियों को क्या कोई सम्मान पूर्वक रख पाता है ?"

"मालिक, जो किया भला किया ; लक्ष्मी खुश तो है ; तन पर अच्छे कपड़े और गहने तो हैं। भगवान आपका भला करें, मालिक । रामदास ने घूम वहीं से आवाज दी—"लक्ष्मी ! यहाँ आओ बिटिया । सेठ जी बुला रहे हैं ।"

लक्ष्मी धीरे-धीरे नत सिर वहाँ आई जहाँ दोनों खड़े थे । रतन चन्द ने लक्ष्मी की उसके पिता के सामने प्रशंसा की—"रामदास ! अब तुम्हारी बेटी इस राज्य में वह कर सकती है जो न बादशाह कर कर सकते हैं ; न वजीर कर सकते हैं और न मैं

"नहीं मालिक ! आप अपने मुँह से तो ऐसा न कहिये, कोई कुछ कर सके या न कर सके, पर आप वह जरूर कर सकते हैं जो बिटिया

लक्ष्मी भी नहीं कर सकती ।" सेठ की बीच में ही टोक रामदास ने दास-भाव व्यक्त किया ।

"नहीं, रामदास ! तुम लक्ष्मी बिटिया की स्थिति नहीं समझ सकते ।"

"नहीं मालिक, बिटिया जो कुछ है वह सब आपकी ही बदौलत है ; आप से ज्यादा भला कभी हो सकती है ?"

"अच्छा-अच्छा रामदास ! सब काम ठीक-ठाक चल रहा है ?"

"अभी आया मालिक ।" सेठ का प्रश्न करना था कि रामदास उस उतरती अवस्था में भी ऐसे दौड़ा जैसे उसका सर्वस्व स्वाहा हुआ जा रहा हो ।

सेठ ने लक्ष्मी को दृष्टिगत कर कहा—"आओ बेटी, कमरे में चलें; मुझे तुमसे कुछ जरूरी बातें करनी हैं ।"

लक्ष्मी ने कोई प्रतिवाद न किया ।

लक्ष्मी सेठ का अनुसरण करने लगी ।

२०

दाऊद के समाप्त होने से हुसेन निर्विवाद दक्षिण का सूबेदार बन गया। दाऊद के शासन काल में जो अव्यवस्थायें फैली थी; उन्हें समाप्त कर सुशासन की स्थापना में हुसेन दत्त चित्त हो जुट गया। सर्व प्रथम उसने हिन्दुओं से वसूल किया जाने वाला जजिया कर समाप्त किया। सम्राट फर्रूखसियर के आदेशानुसार दाऊद ने जो जागीरें हिन्दुओं से छीन ली थीं, उन्हें हुसेन अली ने लौटा दिया। राज्याधिकारियों के मध्य फैले भ्रष्टाचार के उन्मूलन में हुसेन अभी व्यस्त ही था कि अब्दुल्ला द्वारा भेजे गये गुप्तचरों द्वारा सूचना प्राप्त हुई कि सम्राट की ओर से कुछ व्यक्ति मराठा राजा साहू की सेवा में उपस्थित हो उसे भड़काने और विरोधी आचरण के लिये उकसा रहे हैं। इसके पूर्व कि साहू फर्रूखसियर के व्यक्तियों द्वारा की गई प्रार्थना पर विचार कर कुछ निर्णयात्मक कदम उठाने पावे, हुसेन अली स्वयं एक दिन साहू के दरबार में जा उपस्थित हुआ। सहसा बिना पूर्व सूचना के हुसेन अली को अपनी सेवा में उपस्थित पा राजा साहू के आश्चर्य का ठिकाना न रहा; फिर भी मराठा नरेश ने धर्मानुसार आचरण करने का निर्णय किया और हुसेन अली से ससम्मान मिलने की स्वीकृति दे दी। हुसेन को विशेष प्रतिक्षा न करनी पड़ी और सामने उपस्थित हो सम्मान में सिर झुकाया। साहू के समक्ष हुसेन अली के जिस स्वरूप का चित्र खींचा गया था उसके विपरीत हुसेन अली

को पा राजा मुस्कराया और प्रेम पूर्वक आसन की ओर संकेत किया। हुसेन के आसन ग्रहण करते ही राजा साहू ने अपनी धारणा व्यक्त की—"बहुत लोगों द्वारा सुन रक्खा था कि आप जैसा तलवार का धनी मुगल दरबार में दूसरा व्यक्ति नहीं; दक्षिण आते ही दाउद का अन्त कर आपने मेरी धारणा की पुष्टि भी कर दी।"

"सुनने और देखने में बड़ा फर्क होता है राजा साहब। मेरी तलवार का कमाल आपने अभी देखा ही कहां है।" साहू द्वारा व्यक्त प्रशंसा से उमंगित हो हुसेन ने अपना आत्माभिमान व्यक्त किया-"बड़े-बड़े बहादुरों के इसने छक्के छुड़ा दिये हैं।" कमर से लटकी तलवार की ओर संकेत किया।

"मेरे यहाँ के नट भी तलवार चलाने में अपना सानी नहीं रखते।"

"तो फिर हो जाय हमारा उनका मुकाबला।"

"हो जायेगी आपकी इच्छा की पूर्ति किसी दिन।" साहू ने मुस्करा कर कहा।

"किसी दिन क्यों; क्या आज का दिन आपके नटों के मुआफिक नहीं?"

"नहीं ऐसी बात नहीं है खाँ साहब! वास्तव में आप मेरे यहाँ पहली बार पधारे हैं। मैं चाहता हूँ कि आप दो-चार दिन आराम से रहे; विश्राम करें फिर . . ।"

"विश्राम और हुसेन में बड़ा फर्क है राजा साहेब। विश्राम वह करता है जो थकता है। हुसेन कभी थकता नहीं; इसलिए विश्राम का सवाल ही नहीं उठता।" हुसेन बीच में ही बोल पड़ा।

"वास्तव में व्यक्ति हो तो आप जैसा।"

"क्या चीज नापसन्द आई मुझमें?"

"वाह ! खाँ साहब वाह !! आप भी कमाल करते हैं। अरे—यह पूँछिए कि क्या पसन्द नहीं आया।"

"तब तो शायद आप मेरी बातों पर जरूर गौर फरमाने की मेहरबानी करेंगे।"

"क्यों नहीं; खाँ साहब। आपकी हर बात बड़ी दिलचस्प होती है। देखिये न, हर व्यक्ति आपकी बातों को बड़े ध्यान से सुन रहा है।" उपस्थित व्यक्तियों की ओर साहू ने हुसेन अली का ध्यान आकर्षित किया।

हुसेन ने एक-एक कर सब-पर दृष्टिपात किया; पर, सभी चेहरे अपरिचित थे। हुसेन ने साहू की ओर उन्मुख हो हाथ बढ़ा कहा—"तो फिर बढ़ाइये दोस्ती का हाथ।"

साहू का हाथ हुसेन के हाथ में आ रुका। दोनों ने एक दूसरे को शक्ति भर पकड़ा और उसी अवस्था में हुसेन बोला—"राजा साहेब ! आपको तो पता ही है कि मुझे इधर आये हुए थोड़े ही दिन हुये हैं और शायद कुछ ही दिनों में मुझे यह इलाका छोड़ना भी पड़े।"

"क्यों, ऐसी क्या जल्दी है ?"

"दिल्ली दरबार की हालत बड़ी अजीब है राजा साहेब ! किस वक्त क्या हो जाय, कुछ कहा नहीं जा सकता। बड़े भाई साहब वहाँ अकेले हैं। दरबार उनके खिलाफ सरदारों से भरा हुआ है। बादशाह अपनी बेजा हरकतों से बाज आता नहीं। कहीं ऐसा न हो कि मैं यहीं बना रहूँ और भाई साहब पर कोई मुसीबत आ जाय।"

"ऐसी हालत में तो आपको दिल्ली दरबार में ही हाजिर रहना चाहिए।"

"इसी सबब तो आपकी खिदमत में हाजिर हुआ हूँ। मेरी दिली ख्वाहिश है कि जो सूबे मुगल सल्तनत के अन्दर हैं, उनकी चौथ और

सरदेशमुखी आप वसूल किया करें; और अगर आप चाहें तो 'अबवाब' भी वसूल कर सकते हैं।"

"मेरे लिए इससे अधिक प्रसन्नता की बात और क्या हो सकती है कि आप मुझे अपनी सहायता के योग्य समझते हैं। मुझे आपकी हर बात स्वीकार है। मेरी ओर से आप निश्चिन्त रहिए। मगर फर्रुख़सियर की स्वीकृति के बिना यह सम्भव कैसे होगा ?"

"आपने भी इस खुशी के वक्त किस मनहूस का नाम ले दिया ! उसकी परवाह जब मैं नहीं करता तो फिर आपको क्या जरूरत कि उसकी बाबत कुछ सोचें-विचारें।"

"वैसे तो मैं कोई भी जरूरत नहीं समझता, मगर मुझे सिर्फ इस बात का अन्देसा है कि कहीं मेरे मित्र का फैसला गलत न करार दे दिया जाय।"

"उसकी आप फिक्र न करें। हुसेन गलत को भी तलवार की नोंक से सही करना जानता है।"

"तो फिर बात पक्की ?" साहू ने हाथ कड़ा किया।

हुसेन का हाथ उससे भी कड़ा हो गया — 'पक्की।"

"आप निश्चिन्त होकर दिल्ली में रहें।"

"निश्चिन्त तो तब होऊँगा राजा साहेब जब बादशाह के दिमाग ठिकाने लगा दूँगा।"

"वास्तव में अगर हमारी और आपकी मुलाकात कुछ दिन और न होती तो न जाने क्या कदम उठ जाता।"

"मुझे मालूम है कि बादशाह के आदमी आपकी खिदमत में हाजिर हो चुके हैं।"

"वास्तव में बादशाह की चाल अभी तक मैं न समझा था; पर, यह अवश्य सोच रहा था कि अपने ही सेनापति के विरुद्ध मराठों को, जिन्हें मुगल सम्राट सदा अपना सबसे बड़ा शत्रु समझते रहे हैं, क्यों

प्रोत्साहित कर रहा है, अब स्पष्ट हो गया है कि वह कांटे से काँटा निकालना चाहता था। जब तक दक्षिण में मराठा शक्ति जीवित है मुगल बादशाह की एक भी चाल न चलने पायेगी।"

"यही उम्मीद लेकर आया था आपके पास। अब मुझे आज्ञा दीजिए।" हुसैन ने उठने का उपक्रम किया।

"अरे रे रे! दो-एक दिन तो खातिर करने का मौका दीजिए।"

"भाई साहब ने फौरन दिल्ली हाजिर होने को लिखा है। अब मैं आप से मिलकर सीधे दिल्ली जाऊँगा। बेकार में वक्त बरबाद करना नहीं चाहता।"

"मगर, मुझे तो आप कोई मौका दे ही नहीं रहे हैं कि अपने दोस्त के प्रति अपनी बफादारी का सबूत पेश कर सकूँ।"

'मैं अपने दोस्त राजा साहब के दिली जजबातों को ठेस नहीं पहुँचाना चाहता। अगर, राजा साहब वाकई इस वक्त अपनी दोस्ती का सबूत पेश करना ही चाहते हैं तो मेरे साथ कुछ बहादुर मराठा सरदारों को दिल्ली रवाना होने का हुक्म फरमा दीजिए।"

"यह कौन सी बड़ी बात है। दस हजार मराठा सरदार तो हमेशा तैयार रहते हैं।" "आप उन्हें अपने साथ बड़ी खुशी से ले जा सकते हैं।"

"सैय्यद भाई, आप की इस मदद को हमेशा याद रखेंगे।"

"यह भी कोई ऐसी मदद है जो याद रखी जाय। अगर, जरूरत समझियेगा तो वहीं से कहला भेजिएगा, लाखों मराठा सरदार आपकी सहायता के लिए फौरन दिल्ली में हाजिर हो जायेंगे।"

"दरअसल राजा साहेब! आप पहले इन्सान हैं जिसकी दोस्ती पर मुझे तो कम-से-कम उम्र फक्र रहेगा।"

"खाँ साहब! बहादुर इन्सान का दिल कैसा होता है, यह आपको

पा अनुभव किया। जिन बातों के निर्णय में महीनों लगने चाहिये थे, वे चटपट आपने तय कर डालीं।"

हुसेन अली ने राजा साहू को आगे न बोलने दिया; फौरन कहा—"देर काफी हो रही है राजा साहेब।"

"आइये चलें।"

राजा साहू हुसेन का हाथ अपने हाथ में लिए उठ कर चल दिए।

२१

यद्यपि सम्राट फर्रुखसियर और प्रधानमन्त्री सैय्यद अब्दुल्ला खाँ के पास गुप्तचरों का विशाल दल था, तथापि कोई भी षणयन्त्र अथवा योजना गुप्त न रहने पाती थी; और इसके लिए बहुत कुछ उत्तरदायी थी लक्ष्मी। लक्ष्मी द्वारा यह सूचना मिलते ही कि दाऊद को समाप्त कर मराठा सैनिकों से सुसज्जित हुसेन अली दक्षिण से रवाना हो गया है, सम्राट कांप उठा; अपने ही मन के चोर ने उसे इतना भयभीत कर दिया कि चारो ओर सहायकों के लिए दृष्टि दौड़ाने लगा। वह हुसेन से अपनी रक्षा के विषय में विचार कर ही रहा था कि लक्ष्मी ने एक डंक और मारा—"मराठा नरेश साहू ने एक हजार ऐसे बेहतरीन घोड़े भी दिए हैं जो हिन्दुस्तान में कहीं भी नहीं पाये जाते।"

सम्राट की घबराहट और अधिक बढ़ गई। उसकी मुख मुद्रा-देख लक्ष्मी-मन-ही-मन मुस्करा रही थी। कुछ क्षण रुक लक्ष्मी ने हुसेन का निर्णय भी सुना दिया—"हुजूर, यह भी सुनने में आया है कि हुसेन यह फैसला करके रवाना हुआ है कि या तो वह रहेगा या......।"

लक्ष्मी स्वयं चुप हो गई।

सम्राट ने अनुमान तो लगा ही लिया था, फिर भी औत्सुक्य की चरम सीमा ने उसे इतना बेचैन कर दिया कि पूँछ बैठा-"या लक्ष्मी?"

"हुजूर कनीज अपना मुँह आगे कैसे खोल सकती है! हुसेन का

दिल्ली आना खतरे से खाली नहीं है। कोई ऐसा उपाय करिए कि वह यहां तक आने भी न पाये। आपका तो वह जानी दुश्मन मालूम देता है। उससे सबसे ज्यादा खतरा आपको ही है।"

सम्राट ने दीर्घ निःश्वास छोड़ परास्त भावना व्यक्त की—"इसने तो रात की नींद और दिन का चैन हराम कर रखा है। अच्छा खासा सिर दर्द बना हुआ है। मारवाड़िये भी कुछ न बिगाड़ सके इसका और दक्षिण को भेजना तो और भी खतरनाक साबित हुआ। मराठे तो मुगलों के शुरु से ही दुश्मन रहे हैं, पता नहीं हुसेन को उन्होंने फौजी मदद कैसे दे दी।"

कुछ क्षण रुक सम्राट ने ताली बजाई। परिचारिका तत्क्षण आ उपस्थित हुई। सम्राट ने अपनी अभिलाषा व्यक्त की—"हैदरबेग को फौरन इत्तिला दी जाय कि इसी वक्त मा बदौलत याद फरमा रहे हैं।"

आदाब बजाती हुई परिचारिका उल्टे पैरों लौट गई।

हैदरबेग ने सम्राट के कक्ष में प्रवेश किया तो सम्राट को अकेला चिन्ता-ग्रस्त पाया।

"हुजूर ने गुलाम को याद फरमाया?" हैदर ने कहा।

सम्राट के नेत्र खुल गये; मुँह से निकला—"हाँ हैदर, आओ, बैठो।" हैदर ने निर्दिष्ट स्थान ग्रहण कर लिया। सम्राट ने कहना प्रारम्भ किया "यह तो तुम जानते ही हो हैदर कि मीर साहब बिहार में हैं।"

"जी हाँ।"

"और तुम्हारे अलावा दूसरा कोई नजर नहीं आता जिस पर कुछ एतबार किया जा सके।"

"गुलाम, हुजूर की हर खिदमत के लिये हाजिर है।" हैदर ने गरदन झुकाते हुए कहा।

"यही सोचकर तो ऐसे वक्त पर तुम्हें याद किया है ।" कुछ आश्वस्त हो बादशाह ने कहना प्रारम्भ किया—"अभी कुछ देर पहले खबर मिली है कि हुसेन दस हजार मराठा सरदारों के साथ दिल्ली के लिए दक्षिण से रवाना हो गया है । उसने इस बार फैसला कर रखा है कि या तो वह रहेगा या मा बदौलत, हैदर । हुसेन के मिजाज से तो तुम भी वाकिफ होगे, जो फैसला करता है, कर के ही छोड़ता है । बस ! यों समझ लो कि मौत बढ़ती चली आ रही है ।"

सम्राट की मनोदशा का पूर्ण परिचय पा हैदरबेग ने सान्त्वनापूर्ण स्वर में कहा—"हुजूर जरा भी फिक्र न करें । मैं कोई ऐसी तरकीब निकालूँगा कि हुसेन मियाँ यहाँ तक पहुँचने भी न पायेंगे; रास्ते में ही उनका काम तमाम हो जायेगा ।"

हैदर की योजना सुन अपना अविश्वास व्यक्त किया बादशाह ने—"हुसेन को खत्म करने के लिए क्या-क्या नहीं किया गया है अभी तक; मगर, हर बार वह पहले से ज्यादा खूंख्वार और ताकतवर होता गया है । इस बार भी अगर वह जिन्दा बच गया, जो नामुमकिन नहीं है तो फिर क्या होगा ?"

"हैदर के पंजे से बच सकना नामुमकिन है । हुजूर ने अभी तक मीर साहब की कोशिशें देखी हैं; एक मौका इस गुलाम को भी दिया जाय ।"

"मैं रोकता कब हूँ ! तुम्हें जो करना है वह तो तुम करोगे ही. मगर मैं तो उस लहमें को याद करते ही कांप उठता हूं जब हुसेन मे सामने नङ्गी तलवार लिए खड़ा होगा और मैं जिन्दा रहने के लिए गिड़गिड़ा रहा होऊँगा ।"

"हुजूर वह नौबत ही न आने पायेगी ।"

"हर इन्सान अपनी हर कोशिश में कामयाब ही नहीं होता हैदर ।

नाकामयाबी की भी उतनी गुन्जाइश इन्सान को समझनी चाहिए जितनी कामयाबी की। इसे मैं मंजूर करता हूँ कि कोशिश करना इन्सान का फर्ज है। किसी भी ख्वाहिश को पूरा करने के लिए हमें दिल और दिमाग से पूरी कोशिश करनी चाहिए। मगर उन हालातों को भी नहीं भूलना चाहिए जो नाकामयाबी से पैदा हो सकती हैं। मेरे ख्याल में तो किसी कदर जल्दी-से-जल्दी मीर साहब को खबर करना चाहिए। एक से दो बेहतर समझे जाते हैं। मीर साहब और तुम मिलकर शायद इस आफत को खत्म कर सको।"

"जैसी हुजुर की मर्जी।"

"तो फिर फौरन इसी वक्त बिहार के लिए रवाना हो जाओ और बिना रुके मीर साहब को साथ लेकर लौट आओ।"

"जो हुक्म।" हैदरबेग ने सम्राट की योजनानुसार आचरण करने की स्वीकृति दे दी।

२२

अब्दुल्ला खां के विलास कक्ष में पैर रखते ही लक्ष्मी ने देखा कि एक ओर विभिन्न वाद्य-यन्त्रों के वादक मुमधुर सङ्गीत छेड़ रहे हैं, दूसरी ओरखाँ साहब अनेक नव मुकुलित कलियों-सी नवयौवनाओं से घिरे हैं, एक कोमल कर में मदिरा पूरित पात्र है जो अधरों का स्पर्श करने जा रहा है। दो पग आगे बढ़ शिष्टाचार का पालन किया लक्ष्मी ने। लक्ष्मी की उपस्थिति का भान होते ही लगभग समस्त क्रिया-कलाप सहसा ठप्प हो गया। असाधारण स्थिति के अचानक उत्पन्न होने का कारण ज्ञात करने के लिए जैसे ही खाँ साहब ने गर्दन घुमाई, लक्ष्मी सामने अभिवादन करती दृष्टिगत हुई।

"आओ लक्ष्मी।" खां साहब की मुस्कान ने स्वागत किया।

लक्ष्मी कुछ अन्तर पर बैठ गई।

"कहां रही आज सुबह से?"

"हुजूर को फुर्सत ही कहाँ कनीज को देखने की।"

"ऐसी बात नहीं है लक्ष्मी। तुम जैसी तो इनमें एक भी नहीं है।" खां साहब ने बैठी सौन्दर्य की सजीव प्रतिमाओं की ओर संकेत किया।

"मुझ जैसी पसन्द ही कहां आ सकती हैं हुजूर को, इनमें होने का सवाल ही नहीं उठता।"

"ये सब गवाह हैं; पूँछ देखो न; कितनी बार तुम्हें याद कर चुका हूँ।"

"सौभाग्य है मेरा कि हुजूर कभी-कभी याद कर लेते हैं। बादशाह

सलामत तो......।"

बीच में ही खाँ साहब ने संकेत किया। एक साथ सब उठ कर भागीं। कमरे में रह गये केवल खाँ साहब और लक्ष्मी। दृष्टि से दृष्टि टकराते ही खाँ साहब ने कहा—"यहां आकर बैठो।"

लक्ष्मी थोड़ा आगे सरकी।

"वहाँ नहीं, यहाँ।" जिस स्थान की ओर संकेत कर रहे थे खाँ साहब वह उनके अति निकट था, स्पर्श-सुख की अनुभूति के उपयुक्त स्थान था वह।

लक्ष्मी खां साहब का आग्रह न टाल सकी। आगे सरकी वह। खाँ साहब की पकड़ के भीतर पहुँचते ही बलिष्ट हाथों ने लक्ष्मी को घसीट लिया। लक्ष्मी असमर्थ प्राणी की भाँति खिचती चली गई, अपेक्षाकृत और अधिक समीप घसीट लक्ष्मी से खां साहब ने प्रश्न किया—"क्या हाल-चाल हैं वहाँ के ? मीरजुमला आया ?"

"जी हाँ आज, सुबह जब से आये हैं तब से बादशाह सलामत के साथ ही हैं !"

"तब तो खूब बातें हुई होंगी ?"

"इसमें क्या शक है !"

"क्या-क्या बातें हुई ?"

"सारे फसाद की जड़ यही मीर साहब हैं। आते ही आप लोगों का सामना करने के लिये बड़ी-बड़ी तैयारियाँ प्रारम्भ करवा दी है।"

"हम लोगों के सामने की तैयारी की क्या जरूरत पड़ गई उन्हें ?"

"छोटे खाँ साहब आ रहें हैं न ; उन्हीं का खौफ समाया हुआ है उनके दिलों में। उनसे बेइंतिहा डरते हैं सब लोग।"

"मगर उन्हें यह मालूम कैसे हुआ कि हुसेन आ रहा है ?"

"आपकी गुस्ताख कनीज के जरिये।" लक्ष्मी ने सम्पूर्ण अपनत्व

उड़ेल दिया स्वर के द्वारा।

"क्या हम लोगों की बाबत कुछ जानना चाहा था बादशाह ने ?"

"हुजूर तो बादशाह सलामत के लिये खुदा हैं-खुदा ; दिन-रात उनके दिलो—दिमाग पर आपही छाये रहते हैं। एक भी क्षण के लिए तो वह आपको नहीं भूल पाते।"

"तब तो मेरे बारे में तुमसे खूब बातें होती होंगी ?"

"यह तो स्वाभाविक ही है कि ......।"

"मगर तुम मुझे कभी कुछ नहीं बताती हो कि क्या बातें हुआ करती हैं ?"

"बादशाह सलामत की कौन बात हुजूर से छिपी है। हर रोज तो हुजूर को उनकी बाबत कनीज के जरिये मालूम होता रहता है।"

"ये बातें नहीं ; मैं जानना चाहता हूँ वे बातें जो तुम्हारे उनके बीच होती हैं।"

"क्या और भी बातें मुमकिन हैं मेरे और उनके दरम्यान ?"

"क्या वह तुम्हें मोहब्बत की नजर से नहीं देखता ?"

लक्ष्मी बड़े जोरों से खिलखिला कर हँस पड़ी। हास्य को नियन्त्रित कर लक्ष्मी ने कहा—"डरपोक भी कहीं मुहब्बत किया करते हैं। उन्हें यह अच्छी तरह मालूम है कि मैं आपसे भी मिलती हूँ शायद वह मुझसे इसीलिये दूर-दूर रहने की कोशिश करते हैं।"

"तो कहो तुमसे भी डरता है वह ?"

"हो सकता है।"

"फिर भी तैयारियाँ कर रहा है ?"

"मीर जुमला साहब करवा रहे हैं।" जरा अलग-सी हो सम्हल कर बैठते हुये लक्ष्मी ने कहा—"अरे हां, एक बात तो बताना भूल ही गई, मीर साहब ने बादशाह को दूर-दूर से बहुत से लोगों को बुला भेजने की सलाह दी है।"

"किन्हें बुलवा रहे हैं ?"

"अम्बर के राजा जयसिंह, चीन कलीच खां और सर बुलन्द खाँ वगैरह सभी को तो, जो आपके पुराने दुश्मन हैं , बुलाने के लिये आदमी भेजे जा चुके हैं।"

"इसके माने हैं मीर अच्छी-खासी तैयारी करवा रहा है।"

'क्यों न करायें , उन्हें प्रधान बख्शी का पद जो हासिल करना है।"

"इसीलिये मेरा जानी दुश्मन बना हुआ है। देखता हूँ कैसे वजीर बनता है। निजामुल्मुल्क और मुहम्मद अमीन खां को भी नहीं बुलाया गया है।"

निजामुल्मुल्क और मुहम्मद अमीन खां को सैय्यद बन्धु अपना सबसे बड़ा शत्रु समझते थे।

"ये दोनों तो परसों ही आ गये थे।"

"हूँ ; तब तो कोई-न-कोई गुल खिलकर ही रहेगा।"

"हुजूर, मुझे तो डर लग रहा है।"

"तुझे किस बात का डर ?"

"उधर आप के खिलाफ खूब तैयारियां हो रही हैं और आप हैं कि हाँथ-पर-हाँथ धरे बैठे हैं।"

"बादशाह जो यह भीड़ जमा कर रहा है, एक बन्दर घुड़की ही काफी है इन सबको जहन्नुम पहुँचाने के लिये। हुसैन को आ जाने दो, उसके आते ही सब पानी भरने लगेंगे ; एक-एक चौखट पर नाक रगड़ता नजर आयेगा।"

"और, अगर छोटे खाँ साहब के आने से पहले ही कुछ कर उठाया उन लोगों ने तो... .... ?"

"इतनी ही दम होती तो क्या अब तक खामोश बैठे रहते। उन बुजदिलों के किये-धरे कुछ नहीं होने का। मुझे तो इकट्ठा होने

वालों पर तरस आ रहा है कि बिला वजह् बेचारे बेमौत मारे जायेंगे।"

'फिर भी हुजूर को होशियार तो रहना ही चाहिये।"

इसी बीच द्वार पर 'खट' की ध्वनि हुई।

"कौन ?"

परदा सरका और द्वार पर उपस्थित सशस्त्र परिचारिका ने अभिवादन कर निवेदन किया "सेठ जी हुजूर की खिदमत .... ।"

बीच में ही खां साहब बोल उठे—"कह दे फिर किसी वक्त आयें।"

इसके पूर्व कि परिचारिका घूमने पाये लक्ष्मी ने कहा "सेठ जी को क्यों व्यर्थ में निराश कर रहे हैं ; फरियाद सुन लीजिये न।"

"सुन क्या लूँ ; दौलत के अलावा उसके पास कोई बात भी होती है कहने-सुनने को।"

"बड़े सीधे हैं बेचारे। उस दिन बड़ा दुःख हुआ था जब आपने उन्हें लौटा दिया था।"

"मैं कई बार से यह देख रहा हूँ कि जब कभी तुम हमारे पास होती हो, तभी रतनचन्द आ टपकता है।"

"अच्छा तो है, सेठ जी वह मौका ही नहीं आने देते, जब हुजूर का मुझसे मन भर जाये और कह दें—अब जाओ।" बिना खाँ साहब के उत्तर की प्रतीक्षा किये हुये ही लक्ष्मी ने परिचारिका की ओर उन्मुख हो कहा—"सेठ जी को आने दो।"

सेठ रतनचन्द के कक्ष में प्रवेश के पूर्व ही लक्ष्मी अन्य द्वार से बाहर हो चुकी थी।

२३

एक-एक दिन में दो-दो, तीन-तीन पड़ाव लांघता—दुर्गम स्थानों को पार करता हुआ हुसैन ने एक विजेता की भाँति राजधानी में प्रवेश किया। चारो ओर सनसनी फैली हुई थी। जनता की अवस्था असाधारण थी। अनिश्चिन्तता की हालत में जन साधारण कुछ भी निर्णय नहीं कर पा रहा था। सम्राट और सैय्यद बन्धुओं का मन-मुटाव नमक-मिर्च लगा-लगा कर जनता के बीच फैलाया गया था। जनता हुसैन के आगमन की बड़ी व्यग्रता से प्रतीक्षा कर रही थी। कुछ ही देर में हुसैन का ससैन्य प्रवेश दिल्ली की जनता साँस रोके बड़ी औत्सुक्य पूर्ण दृष्टि से देख रही थी। हुसैन के अश्व की गति असामान्य थी। स्वागतार्थ सम्राट की ओर से एक भी कर्मचारी न आया था। हुसैन का कदाचित इस ओर ध्यान भी नहीं गया होगा। वह दनदनाता हुआ बड़े भाई के महल पर जा पहुँचा। अब्दुल्ला खां भाई के स्वागतार्थ प्रमुख द्वार पर ही सेठ रतनचन्द के साथ खड़े थे। हुसैन के घोड़े के नीचे कूदते ही अब्दुल्ला खां ने दोनों हाथ फैला दिये, पर हुसैन ने भाई के भ्रातृ-स्नेह से उमगित हो आलिंगन बद्ध होने की भावना का स्वागत नहीं किया और फौरन प्रश्न किया—"शाही महल पर कब्जा किया या नहीं ?"

"आओ भाईजान, पहले गले तो मिल लो। बहुत दिन बाद मिले हो।"

हुसैन ने भाई का प्रस्ताव पुनः ठुकराते हुये कहा—"बादशाह कैदखाने में है या बाहर ?"

"हुसैन भाई, बादशाह तो शुरू से ही कैदखाने में है, अन्दर तो

चलो ।"

"भाईजान, मैं इस बात का कौल कर चुका हूँ कि आराम तभी करूँगा जब बादशाह को कैदी की शक्ल में देख लूँगा।"

"बादशाह महल में कैद है; कहीं जा नहीं सकता।"

हुसेन अधिक प्रतिवाद न कर भाई के पीछे हो लिया। विश्राम कक्ष में जा बैठे दोनों।

"तुम्हें तो चार दिन बाद आना चाहिये था। क्या रास्ते से खबर भेजवाई थी?"

"नहीं रात में भी चला हूँ।"

"गजब कर दिया। ऐसी भी क्या जल्दी पड़ी थी!"

"क्यों नहीं, जो काम इससे भी पहले हो जाना चाहिये, वह अभी तक नहीं हो पाया है, इसी की मुझे फिक्र थी।"

"हर काम का एक वक्त होता है, हुसेन भाई। कितनी ही कोशिश क्यों न करो, काम तभी होगा जब उसका वक्त आयेगा।"

"बस, आपके इसी यकीन के कारण तो आये दिन खतरों का सामना करना पड़ रहा है। मैं कहता हूँ कि वक्त-बे-वक्त की बातें वे करते हैं जिन्हें खुद कुछ नहीं करना होता; जिन्हें अपने ऊपर भरोसा नहीं होता; जो वक्त की आड़ में अपनी काहिली छिपाने की कोशिश करते हैं। बहादुर इन्सान वह है जो वक्त को अपने मुताबिक बनने को मजबूर करे। वक्त के मुताबिक बन कर हम मौत के मुँह में जाने के अलावा कुछ नहीं कर सकते। आपकी इसी लापरवाही के सबब बादशाह हमलोगों का सिर दर्द बना हुआ है अभी तक।"

"खैर, जो कुछ हुआ, उसे याद करने से क्या फायदा; लेकिन, अब बहुत सोच-समझ कर कोई कदम उठाने की जरूरत है। बादशाह ने हमारे सभी दुश्मनों को जमा कर रखा है।"

"हूँ ; ये सब जमा होते रहे और आप हाथ-पर-हाथ धरे बैठे रहे ?"

"मैं अकेला क्या करता ? तुम्हारा इन्तजार कर रहा था : और खत में भी तो तुमने लिखा था कि मैं तुम्हारा इन्तजार करूं ।"

यहाँ दोनों भाई बैठे परस्पर वार्तालाप कर रहे थे,बाहर राजमार्गों पर मराठा घुड़सवार जनता को आतंकित कर रहे थे । मराठा सैनिकों को आवश्यक निर्देश हुसैन द्वारा मार्ग में ही मिल चुके थे । कुछ सैनिक किले के आस-पास भी जा पहुँचे थे । बादशाह के स्वामिभक्त रक्षकों ने कहीं-कहीं टकराने की कोशिश भी की थी, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें अपनी जान से हाथ धोने पड़े थे ।

बाह्य आतंक को शाही महल के भीतर पहुँचने देर न लगी । खान दौरान भागता हुआ बादशाह के सामने आया ; बोला—"मराठा सिपाही किले के चारो ओर फैले हुये हैं ।"

मुहम्मद अली ने सूचना दी आकर—"हमारे हजारों सरदार मौत के घाट उतार दिये गए हैं ।"

"राजा जयसिंह को अभी-अभी मैंने खां साहब के महल में घुसते देखा है ।" लुत्फुल्ला खां ने राजा अजीतसिंह की वफादारी का भण्डा-फोड़ कर दिया आकर ।

तकर्रुब खाँ ने हाँफते हुये प्रवेश कर सूचित किया—"सैय्यद भाई रवाना हो चुके हैं और किले की ही ओर आ रहे हैं ।"

सुनते ही बादशाह की घबड़ाहट व्यक्त हो गई—"मीरसाहब कहाँ हैं ; फौरन बुलाओ उन्हें ।"

एक साथ कई सेवक दौड़ पड़े । बादशाह के हाथ पैर फूल गये थे । उसकी जबान पर जो आ रहा था, बके जा रहा था । मानसिक अवस्था असामान्य हो गई थी बादशाह की । खान दौरान, जो बादशाह

का मुसाहिब पास रह गया था; बोला—"हुजूर, इस वक्त सिर्फ एक ही रास्ता नजर आ रहा है।"

"वह क्या ?" डूबते हुए को तिनके का सहारा मिला। बादशाह औत्सुक्यपूर्ण दृष्टि से खान दौरान की ओर देखने लगा।

"जैसे ही सैय्यद भाई कमरे में दाखिल हों, आप उठ कर खड़े हो जांय और खजाने की चाभियों का गुच्छा उनकी ओर बढ़ा दें।"

"तब कुछ नहीं करेंगे वे लोग ?"

"शायद।"

भागती–भागती घवड़ाई हुई एक खवासिन आई ; और बोली—"हुजूर, हुजूर....वजीरे आजम....और सिपह ....।"

खवासिन के वाक्य-पूर्ण होने के पूर्व ही सैय्यद बन्धुओं ने भीतर प्रवेश किया। योजनानुसार बादशाह उठ कर खड़ा हो गया और चाभियों का गुच्छा आगे बढ़ा दिया। अब्दुल्ला खाँ ने चाभियों का गुच्छा अधिकृत कर लिया।

हुसेन ने खान दौरान की ओर रोषपूर्ण दृष्टि से देखा भर था कि खान दौरान दुम दबा कर भागा। बादशाह की ओर उन्मुख हो हुसेन ने प्रश्न किया—"मराठा सुल्तान साहू को मेरे खिलाफ तुम्हारे आदमियों ने भड़काया था ?"

" .... ।"

"जवाब देता है या नहीं ?" हुसेन का हाथ तलवार की मूँठ पर जा पहुँचा था।

गिड़गिड़ाते-कांपते हुए बादशाह ने अपराधपूर्ण स्वर में कहा—"मेरा कोई कसूर नहीं है, मीर साहब ने ही आदमी भेजे थे।"

"तेरी मर्जी के खिलाफ ?" हुसेन का भीषण स्वर ध्वनित-प्रध्वनित हो उठा विशाल कक्ष में।

बादशाह बुरी तरह कांप उठा।

हुसेन ने बड़े भाई अब्दुल्ला खाँ की ओर देख कहा—"सुना आपने ऐसा दगाबाज शख्स जिन्दा रहने के काबिल नहीं।" निकल आई तलवार हुसेन की म्यान के बाहर। हाथ उठा ही था कि अब्दुल्ला ने रोक कहा—"इतनी आसान मौत का हकदार नहीं है यह। इसे कुछ दिन तो कैद की तकलीफें भुगतने दो।"

"जैसी आपकी मर्जी।" हुसेन का इतना कहना था कि बाहर संघर्ष रत सैनिकों का कोलाहल कानों में आ पड़ा।

हुसेन तत्काल बाहर की ओर लपका। हुसेन का बाहर जाना था कि दूसरे द्वार से चबेलाराम के नेतृत्व में अनेक सैनिकों ने प्रवेश किया। अब्दुल्ला खां परिस्थिति के अनुकूल तैयार तो हो चुके थे; तलवार म्यान के बाहर हाथ में ही थी; पर, यह अनुमान के परे था कि दूसरे द्वार से भी सम्राट के रक्षार्थ किन्हीं का प्रवेश सम्भव है। बस! कुछ सोचने-विचारने का तो समय था नहीं। सम्राट रक्षकों-हितैषियों की तलवारें चमकने लगीं। अब्दुल्ला की तलवार भी झनझना उठी। अब्दुल्ला को एक साथ कुशल वीरों का सामना करना पड़ रहा था। रक्षार्थ युद्ध के अतिरिक्त, अब्दुल्ला की तलवार किसी को धराशायी नहीं कर पा रही थी। प्राण संकट में थे। चबेलाराम का हर प्रहार प्राण लेवा हो रहा था, पर, अब्दुल्ला बड़े कौशल से अपनी जीवन-रक्षा कर रहे थे। स्थिति अत्यन्त गम्भीर हो चुकी थी। अब्दुल्ला बुरी तरह प्रहार-पर-प्रहार सह रहे थे। चारो ओर से घिरे होने के कारण तनिक भी किसी ओर हट नहीं पा रहे थे। अब्दुल्ला की तलवार विद्युत वेग से चल रही थी। विरोधियों के प्रहार भी कम गतिशील न थे। फैसला होने वाला था कि हुसेन आँधी की तरह प्रविष्ट हुआ और भाई के प्राण संकट में देख शत्रुओं पर पिल पड़ा। किसमें साहस था कि हुसेन की तलवार का सामना करता। कुछ ही क्षणों में अधिकांश कट-कट गिर गए; पर गिरधर की तलवार अब भी अब्दुल्ला के रक्त की प्यासी-

सी लपलपा रही थी। हुसेन का रास्ता साफ हो ही गया था। चवेला-राम की तलवार से हुसेन की तलवार जा टकराई। भीषण झनझनाहट के साथ चवेलाराम की तलवार के दो टुकड़े हो गये। हुसेन के दूसरे ही हाँथ में चवेलाराम का कटा सिर दूर जा गिरा। हुसेन को चवेलाराम से भिड़ते देख अब्दुल्ला खाँ ने सम्राट की खोज में कक्ष त्याग दिया।

बादशाह अवसर पा पहले ही रफूचक्कर हो गया था। वह भाग कर अन्त.पुर के सबसे अधिक सुरक्षित कमरे में जा छिपा था। भीतर से द्वार बन्द कर लिया था; और उस कक्ष तक पहुँचने के मार्ग में अनेक स्थानों पर अब भी सशस्त्र स्त्रियों का पहरा था।

अब्दुल्ला खां फौरन बाहर निकले; चारों ओर दृष्टि दौड़ाई। कहीं-कहीं मराठे सैनिक मुगल सैनिकों से भिड़े हुए थे। अङ्ग-भङ्ग सहस्त्रों सैनिक इधर-उधर कटे पड़े थे। अब्दुल्ला खाँ किंकर्तव्यविमूढ़-से खड़े थे। हुसेन ने पीछे से आकर प्रश्न किया—"बादशाह कहाँ है?"

"भाग गया।"

"अभी पकड़ता हूँ; जायगा कहाँ भाग कर।" हुसेन बाहर की ओर लपका।

"अब्दुल्ला भी हुसेन का अनुसरण करने ही वाले थे कि लक्ष्मी को सामने से अपनी ओर दौड़ कर आते हुये देखा। अब्दुल्ला खाँ ने लक्ष्मी को संकट में समझा, अतः वह उसके रक्षार्थ आगे बढ़े। लक्ष्मी निकट आ हँसते हुये बोली—"आप भागिये यहाँ से। गुप्तद्वार से मीर साहब हजारों सैनिकों को लेकर आ रहे हैं।"

"और तुम?"

"मेरी फिक्र मत करिए; अगर जिन्दा रही तो....।"

"नहीं मेरे साथ आओ।" बीच में ही अब्दुल्ला खाँ ने रक्षा-भावना व्यक्त की।

"आप जाइए ; जल्दी कीजिये ; व्यर्थ की बातों में वक्त बरबाद न करिए। मेरा यहाँ रहना निहायत जरूरी है।"

"तुम घबड़ाना नहीं। मैं हुसेन को लेकर अभी आता हूँ।"

दोनों विपरीत दिशाओं की ओर उन्मुख हो गतिमान हो गए।

अब्दुल्ला खां शाही महल के गुप्त मार्ग से भागते हुए प्रमुख द्वार की ओर अग्रसर हो रहे थे, और अन्तिम द्वार कुछ ही दूर रह गया था कि सामने से तीव्र गति से हुसेन आता हुआ दिखाई दिया। अब्दुल्ला खाँ रुक गये। हुसेन ने निकट आ कहा—"बादशाह को अन्दर ही होना चाहिये ; बाहर नहीं गया है।"

'अन्दर मीर जुमला हजारों सरदारों के साथ गुफिया रास्ते से दाखिल हो चुका है।"

"परवाह नहीं।" तपाक से हुसेन ने कहा—"हुसेन की अकेली तलवार ही काफी है।" आगे बढ़ने का उपक्रम करते हुए हुसेन ने आदेशात्मक स्वर में कहा—"आइये।"

"मालो जी कहां हैं ?"

मराठा सैनिकों का नेतृत्व मालो जी को प्राप्त था।

मालो जी का स्मरण किया जाना था कि मालो जी अश्व दौड़ाते हुए सामने आ उपस्थित हुए। अश्व से नीचे उतरने भी न पाए थे कि मालो जी से हुसेन ने प्रश्न किया—"क्या जान बचाकर भाग आये ?"

"जी नहीं, एक भी शत्रु जीवित नहीं बचा है।'

"इतनी जल्दी ? .. शाबाश ... । तो फिर आओ मेरे साथ।"

मालो जी के साथ आने वाले सहस्त्रों मराठा बीर हुसेन का अनुसरण करने लगे।

मार्ग शत्रु-रहित था। सब-के-सब घुमते चले गए। आगे मैदानी भाग में सैनिक काफी संख्या में दिखाई दिये। हुसेन झपटा। एकत्र

सैनिक मुड़ने को हुए। हुसेन गरजा—"खड़े रहो।"

तलवारें नीची करके सब नत सिर खड़े हो गए।

हुसेन ने निकट जा प्रश्न किया—"मीर जुमला कहाँ है?"

एक नत सिर सैनिक ने उत्तर दिया—"बादशाह सलामत की खोज में गए हैं।"

"किधर?"

सैनिक ने सम्राट के महल के भीतरी भाग की ओर संकेत कर दिया।

"मालो जी।" हुसेन ने मुड़ कर कहा—"आप इन्हें देखिये; एक भी टस-से मस न होने पाये।"

"जो आज्ञा।" मालो जी ने अपनी स्वामिभक्ति को अभिव्यक्ति दी।

हुसेन निर्दिष्ट स्थान की ओर बढ़ने लगा। दूर से सैय्यद भाइयों को आता देख सशस्त्र परिचारिकायें अपने अस्त्र-शस्त्र सम्हालतीं; पर निकट से पहचानते ही अस्त्र-शस्त्र ज्यों-के-त्यों कर लेतीं।

बादशाह ने अन्दर से द्वार बन्द कर रखा था। मीर जाफर द्वार भड़भड़ा कर खोले जाने का आग्रह कर रहा था। उसका मुँह द्वार की ओर था।

"आप क्यों तकलीफ उठा रहे हैं? हम लोग आ गए हैं।" हुसेन की आवाज मीर जुमला के कान में पड़ी।

सुनते ही मीर जुमला मुड़ा और तलवार सम्हाल रक्षार्थ प्रस्तुत हो गया।

हुसेन मीर जुमला को बादशाह से कम अपना शत्रु न समझता था। तलवार सीधी कर दाँत पीस बाज की भाँति झपटा मीर जुमला पर। मीर जुमला सम्हल तो पहले ही चुका था; हुसेन का आघात तलवार पर झेल लिया। भयंकर झनझनाहट उत्पन्न हुई। नीरव वातावरण झन्ना उठा। हुसेन प्रहार कर रहा था और मीर जुमला प्रहारों से अपनी

रक्षा कर रहा था।

पर कौन टिक सका था हुसेन की तलवार के सामने। मीर जुमला कब तक सामना करता! मीर जुमला के हाथ-पैर ढीले तो पहले ही हो चुके थे। हुसेन का हर प्रहार अन्तिम-सा प्रतीत हो रहा था। आखिरकार हुसेन ने तलवार के प्रहार के साथ एक लात भी ऐसी मारी कि मीर जुमला खड़ा न रह सका। बस! देर क्या थी। हुसेन की तलवार मीर जुमला के सीने में प्रवेश कर गई।

आगे बढ़ हुसेन ने द्वार पर एक लात मारी; पर द्वार न खुला। अब्दुल्ला ने भी हुसेन की देखा-देखी लात-पर-लात मारना शुरू किया। द्वार मजबूत था; पर, आघात-पर-आघात पड़ रहे थे। कब तक न टूटता। चरमराया दरवाजा। अगले प्रहार में फट से खुल गया दरवाजा। भीतर यथेष्ट प्रकाश न था। बादशाह किस ओर कहाँ है, दिखाई न दिया। हुसेन ने घुसने का उपक्रम किया पर अब्दुल्ला खाँ ने हाँथ पकड़ रोक दिया और गले से माला उतार रत्न तोड़ फेंकना प्रारम्भ किया। हुसेन के गले में जो माला थी, उसमें बीचों-बीच मणि लटक रही थी। हुसेन ने तत्काल उसे तोड़ भीतर फेंका। उसके प्रकाश में दृष्टि दौड़ाई; पर, बादशाह कहीं भी दिखाई न दिया। हुसेन अधिक खड़ा न रह सका, पैर बढ़ा दिये। आगे बढ़ घूम कर देखा तो द्वार के बगल वाली दीवार से चिपटा बादशाह खड़ा थर-थर-थर काँप रहा था। हुसेन ने लपक कर बादशाह का गला पकड़ा और सामने घसीटा। बादशाह की पगड़ी सिर से लुढ़क कर हुसेन के पैरों में जा गिरी।

"भाई साहब यह रहा, तैमूर का खानदानी बहादुर।" हुसेन ने अब्दुल्ला को बादशाह के अस्तित्व का भान कराया।

अब्दुल्ला ने आगे बढ़ बादशाह के एक लात मारी। बादशाह आघात न सह सका और उसका सुन्दर शरीर फर्श पर लुढ़क गया।

इसी अवस्था में एक लात और मारी अबदुल्ला ने।

हुसैन ने कहा —"भाई साहब ! इसका भला लातों की मार से नहीं होने का। जब तक इसका सिर धड़ से अलग न होगा, यह बेशरम जिन्दा रहेगा।"

"नहीं, हुसैन; इसका जिन्दा रहना अभी जरूरी है।"

"भाई साहब ! कुचला हुआ साँप साबित होगा।"

"जहरीला दांत तोड़ देने से साँप मौत से भी बदतर हो जाता है। अभी इसे अन्धा किए देता हूँ।"

अब्दुल्ला फर्रुखसियर की छाती पर टिहुना मोड़ बैठ गए और इधर-उधर दृष्टि दौड़ाई; मगर कक्ष में ऐसी कोई चीज न दिखाई दी जो वर्तमान आवश्यकता के अनुरूप सिद्ध होती। कक्ष के बाहर द्वार के निकट नतसिर खड़ी लक्ष्मी पर दृष्टि पड़ते ही अब्दुल्ला ने कहा— "तुम्हारे पास है ऐसी कोई चीज जिससे इसकी आँखें फोड़ी जा सकें।"

"वह तो बादशाह सलामत की जेबों में ही मिल जायगी।"

"तो फिर देखो न आकर।" अब्दुल्ला खाँ बादशाह के दोनो हाथों को शक्ति भर दबाए थे।

लक्ष्मी निकट जा बादशाह के वस्त्रों की जेबें टटोलने लगी। पहली ही जेब में सुरमा लगाने की दो सलाइयां मिलीं। लक्ष्मी ने सलाइयाँ निकाल अब्दुल्ला के आगे बढ़ा दीं।

"मैं हाथ पकड़े हूँ, तुम इसकी दोनों आँखें फोड़ दो।"

लक्ष्मी ने सलाई सम्हाल बादशाह की आँखों की ओर देखा तो उसके मन में विचार आया कि इन्हीं आँखों ने सबसे पहले उसे वासनात्मक दृष्टि से देखा था। उसकी प्रतिशोधाग्नि प्रज्वलित हो उठी। चण्डी की मुद्राधारण कर लक्ष्मी ने दोनों सिलाइयाँ एक साथ सम्राट की आँखों में घुसेड़ दीं। सम्राट बड़ी जोर से कराहा, छटपटाया; पर, अब्दुल्ला खाँ ने उसे टस-से-मस न होने दिया। सम्राट की आँखें फोड़ने के

बाद अब्दुल्ला ने कहा-"इनके दोनों कानों में भी ये ही सलाइयाँ घुसेड़ दो।"

लक्ष्मी ने वैसा ही किया।

सम्राट बहुत छटपटाया; मगर, पकड़ से बाहर न हो सका।

"भाई साहब इसकी जीभ भी कलम कर दीजिए।" हुसैन ने सलाह दी।

"इतना ही काफी है हुसैन; अब इसे मरने के लिए सिरोनिया के कैद खाने में डाल दिया जाना चाहिए।"

"जैसी आप की मर्जी।" हुसैन ने अधिक प्रतिवाद न किया। दो-दो लातें और जमाई दोनों भाइयों ने, और बादशाह को वहीं तड़फता छोड़ बाहर निकल आए।

आदेशानुसार सम्राट को कुछ देर पश्चात कैदखाने में डाल दिया गया।

२४

मानव-इतिहास ऐसी-ऐसी घृणित घटनाओं से भरापड़ा है, जिन्हें पढ़ या जानकर आश्चर्य हुए बिना नहीं रहता। महत्वाकांक्षी प्राणियों ने क्या-क्या अत्याचार और अमानवीय कार्य नहीं किये हैं। शक्ति-संपन्न होना मानव-स्वभाव है। शक्ति-अर्जन के लिए भाई ने भाई को, पिता ने पुत्र को, पुत्र ने पिता को, भाई ने बहन को, बहन ने भाई को, किन अत्याचारों का शिकार नहीं बनाया है। किसी भी सम्राट के वंशजों को यदि एक ओर-साम्राज्य सुख की गोद में जीवन यापन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है तो दूसरी ओर उन्हें कैदखानों की शरण भी जाना पड़ता हैं और एक साधारण कैदी से भी अधिक दुर्व्यवहार के शिकार हुये हैं।

मुगल शासकों के सम्बन्धी सबसे अधिक अत्याचारों के शिकार रहे हैं। हुमाऊँ को अपने भाइयों से प्रताणित होना पड़ा; विद्रोही सलीम ने अपने पिता अकबर को नाकों चने चबवाये ; जहांगीर ने अपने बेटे ख़ुसरो की आंखें निकलवा कैदखाने में डलवा दिया था; खुर्रम ने अपने सगे भाई खुसरो का कत्ल करवा दिया था। औरङ्गजेब ने अपने पिता शाहजहाँ को कैद खाने में डालकर ऐसे-ऐसे अमानवीय अत्याचारों का शिकार बनाया था कि शाहजहाँ जीवन की अंतिम घड़ियों तक पुत्र को कोसता रहा; और उसने अपने भाइयों के साथ क्या अनुचित व्यवहार नहीं किया; औरङ्गजेब को भी अपने विद्रोही पुत्रों और पुत्रियों के आचरणों का कम सामना नहीं करना पड़ा; और जहाँदरशाह तो अपने छोटे भाई अजीमुश्शान को मार कर बादशाह बना ही था, साथ ही एक-एक सम्बन्धी को खोज-खोज कर कैदखानों में घृणित जीवन

व्यतीत करने के लिए डाल रखा था। औरङ्गजेब के पश्चात मुगल शाहजादों, जिनके सम्राट बनने की तनिक भी आशा न की जा सकती थी, का तभी तक आराम और सुख का जीवन समझा जाता था, जब तक मा के गर्भ में रहते थे। खुली हवा में सांस लेते ही उनके जीवन की कोई प्रत्याभूति न समझी जाती थी। किसी भी क्षण उन्हें इस संसार से कूंच करने पर बाध्य होना पड़ता था। मुगल सम्राटों ने कैदखाने भी ऐसे विचित्र बनवा रखे थे जिनमें निवास करने वाला पहरेदारों के बिना बताये रात-दिन का अन्तर नहीं अनुभव कर सकता था। दुर्गन्ध और सड़ाँध इतनी तीव्र होती थी कि भोजन ले जाने वाला भी अपनी नाक पर इत्र से डुबोया हुआ वस्त्र रखकर जाता था। भोजन सदा विष युक्त होता था और उस श्रेणी का होता था जिसे शाही घोड़े तक सूंघ कर छोड़ देते थे। जहरीले कीड़ों-मकोड़ों के अतिरिक्त अन्य जीव शाहजादों के सहचर न बन पाते थे। जल का इतना अधिक अभाव रखा जाता था कि दैनिक क्रियाओं से निवृत्त होने तथा स्वच्छ होने के लिए शरीर पर धारण किये वस्त्रों में से ही टुकड़े फाड़ने पड़ते थे। अवधि की कोई सीमा न होती थी। प्रायः कैदखाने के जीवन की अवधि जीवन की अन्तिम घड़ी सिद्ध हुआ करती थी; पर ऐसी भयंकर यातनाओं में साँस लेने वालों का कभी-कभी भाग्योदय भी हुआ करता था। एक ऐसे ही शाहजादे को राज-कर्मचारियों ने लाकर सैय्यद भाइयों के सामने खड़ा कर दिया। दीर्घ काल तक कैदखाने का निवासी रहने के कारण शाहजादे का शरीर अति दुर्बल हो गया था। चेहरा पीलापन लिए हुए झुर्रियों से युक्त था। हाथ-पैर अशक्त थे। कमर धनुषाकार हुई जा रही थी। गड्ढों में धँसी हुई ज्योति हीन आँखों, पिचके गालों, अन्दर धँसी हुई छाती वाले शाहजादे के नीचे से ऊपर तक देख अब्दुल्ला खां ने सन्देह निवारणार्थ प्रश्न किया—"कौन है यह ?"

एक कर्मचारी ने उत्तर दिया—"रफीउश्शान का शाहजादा रफी-उद्दर्जात।"

एक बार पुनः अब्दुल्ला खां ने रफीउद्दजात को आपाद मस्तक देखा और उसकी वर्तमान दशा देख दयार्द्र हो उठा। गले से मोतियों की माला उतार अब्दुल्ला खाँ ने आभूषणहीन शाहज़ादे के गले में डाल दी। माला के बोझ से क्षयी शाहज़ादे की गर्दन तनिक झुक गई।

हुसेन ने अपनी तलवार आगे बढ़ा कहा—"लो, इसे रखो अपने पास।"

शाहज़ादे ने क्षीण दृष्टि से हुसेन की ओर देख अशक्त हाथ आगे बढ़ा दिया। तलवार और आगे बढ़ी और शाहज़ादे के हाथ में आश्रय पाने की अतृप्त अभिलाषा लिये ही फर्श पर गिर पड़ी। साथ ही शाह-ज़ादा भी मुंह के बल गद्दों में धंस गया। कदाचित वह तलवार का अति हलका धक्का भी नहीं सह सका था अथवा इतने समय तक खड़े रहने का यह पहला ही अवसर था। अब्दुल्ला के संकेत पर दो कर्म-चारियों द्वारा शाहज़ादा कन्धे पकड़ कर उठाया गया। सीधे बैठते ही अब्दुल्ला ने प्रश्न किया--"किसी चीज की ख्वाहिश हो तो फरमाइये।"

मन्द स्वर फूटा शाहज़ादे का--"पानी।"

तत्काल शहज़ादे की अभिलाषा पूरी की गई। पहला घूंट पीते ही उसकी आँखों में चमक आ गई। मुर्दा चेहरे पर प्रसन्नता की लालिमा आभासित हो उठी। गिलास खालीकर कहा-"और।"

सुराही खाली गिलास को भरने के लिये पहले से ही प्रस्तुत थी। गिलास-भरते ही शाहज़ादे ने पूर्व की अपेक्षा इस बार शीघ्र खाली कर पुनः भरे जाने के लिए आगे बढ़ा कहा—"अब्बाजान पिया करते थे ऐसी शराब।"

तीसरा गिलास खाली कर शाहज़ादे ने गिलास फर्श पर छोड़ दिया।

"और लीजिए।" अब्दुल्ला ने शाहज़ादे के चेहरे पर होने वाले परिवर्तनों को लक्ष्य कर कहा।

"बस; इतनी ही काफी है।" आश्वस्त हो शाहजादे ने अपने भाग्योदय का कारण जानना चाहा—"आप लोगों ने यह मेहरबानी क्यों की है मेरे ऊपर ?"

"हम आपको हिन्दुस्तान का बादशाह बनाना चाहते हैं।" अब्दुल्ला खां ने शाहजादे की जिज्ञासा शान्त की।

"ना बाबा!" दोनों हाथों को नचा-नचा कर शाहजादा बोला—"मैं बादशाह-वादशाह कुछ नहीं बनूंगा।"

हुसेन को यह तो तनिक भी सह्य न था कि कोई उससे या उसके बड़े भाई की बात काटे अथवा उनकी इच्छा के प्रतिकूल आचरण करने की अभिलाषा तक प्रकट करे। हुसेन की शाहजादे की बात सुन भौंहें तन गईं; शासक के स्वर में डांटा—"जो हम चाहेंगे, तुम्हें बनना होगा।"

हुसेन का सशक्त स्वर सुन शाहजादे के होश फाख्ता हो गए; वह गिड़गिड़ाता हुआ बोला—"बड़ी मेहरबानी होगी, अगर आप लोग मुझे उसी कैदखाने में भेज दें।"

इसके पूर्व कि कोई कुछ बोल सके, अब्दुल्ला ने हमदर्दी व्यक्त की —"आखिर आप क्यों उसी कैद में वापस जाना चाहते हैं ?"

"कैदखाने जैसा आराम बाहर कहां ? वहां दोनों वक्त खाना मिल जाता है; और दिन-रात आराम से पड़े-पड़े सोया करते हैं। न कोई चिन्ता, न फिकर। बाहर की डांट सहने से कैद की जिन्दगी बेहतर है।"

"कुछ नहीं; तुझे बादशाह बनना होगा।" हुसेन ने अपना अन्तिम निर्णय व्यक्त कर दिया।

अब्दुल्ला तक छोटे भाई हुसेन का रुख देख बात करते थे। किसी को कुछ न कहते देख शाहजादे ने भर्राये स्वर में प्रश्न किया—

"मुझे किसी जङ्ग में तो न जाना पड़ेगा ?"

"नहीं।"

"दरबारे-आम में बैठ कर रियाया की फरियादें तो नहीं सुननी होंगी ?"

"वह सब हम कर लेंगे ?"

"तब मैं बादशाह बनने को तैयार हूँ।"

शाहजादे द्वारा स्वीकृति व्यक्त होते ही उसके सिर पर ताज रख दिया गया। अब्दुल्ला की आवाज गूंजी—"शहंशाहे-हिन्दुस्तान....।"

सरदारों का समवेत स्वर फूटा—"जिन्दाबाद।"

२५

रफी उद्दर्जात सैय्यद भाइयों के हाथों की कठपुतली मात्र था। उन्हीं के संकेत पर बादशाह को आचरण करना पड़ता था। कभी दरबारे आम में फरियाद सुननी पड़ती थी तो कभी दरबारे-खास में बैठ कर गोपनीय समस्याओं पर विचार-विमर्श करना होता था। यद्यपि वह सभी कार्य-क्रमों में निष्क्रिय-सा रहता था तथापि सैय्यद भाइयों के निर्णयों के समर्थन में गर्दन तो हिलानी ही पड़ती थी। इतना भी क्षय-रोग से पीड़ित बादशाह के लिए असाध्य था। जहाँ तक सम्भव होता था विश्राम कक्ष को वह न त्यागता था; और अब्दुल्ला खाँ भी विशेष सम्राट को परेशान न करते थे। सम्राट की सम्पूर्ण शक्ति अब्दुल्ला के हाथों में थी। हुसैन तो सिर्फ युद्ध-संधि आदि बातों में ही विशेष संबन्ध रखता था।

किले और महलों पर अब्दुल्ला खाँ का निर्द्वन्द्व अधिकार था: कोई भी हस्तक्षेप करने वाला न था। सल्तनत की प्रत्येक सुन्दर वस्तु को अब्दुल्ला अपनी समझते थे। शाही महलों तथा खजानों में जो भी बहुमूल्य हीरे-जवाहरात मिले, अब्दुल्ला खाँ के खजाने की शोभा बढ़ाने लगे थे। रफीउद्दर्जात को बादशाह बनाने के बाद अब्दुल्ला खाँ ने अपनी दृष्टि शाही हरम की ओर घुमाई। शाही हरम में एक-से-एक सुन्दर स्त्रियाँ थीं। फर्रुखसियर को कुछ ही बातों का तो शौक था, उनमें स्त्री भी थी। अब्दुल्ला ने जिसे चाहा, वही उनके महल में पहुँचा दी गई। अब्दुल्ला असंख्य सुन्दर युवतियों को पाकर उनमें ऐसा खो गया कि दिन-पर-दिन बीत जाते, वह महल के बाहर दिखाई ही न देते।

शाही हरम खाली होता गया, और अब्दुल्ला खां का महल भरता गया। अब्दुल्ला के भोजन के बाद का समय नयी लाई गई सुन्दरी से साक्षात्कार के लिये नियत था। नवागता का परिचय आयशा ही कराया करती थी। आयशा ने एक अत्यन्त खूबसूरत युवती को अब्दुल्ला के सामने कर कहा—"खिदमत में हाजिर है।"

अब्दुल्ला ने दृष्टि उठा देखा तो देखते ही रह गये। कुछ देर देखने के बाद उनके मुँह से निकला—"खूबसूरत–निहायत खूबसूरत बे मिशाल हुश्न।" आयशा की ओर दृष्टि घुमा पूँछा-"आयशा तुम्हारा क्या ख्याल है? मुमकिन है ऐसा हुश्न दुनियां में दूसरा . ?"

"इससे बेहतर हुजूर। यह तो उनकी खिदमत बजाती थी।"

"कौन है वह?"

"बेगम इनायत बानू।"

"तुमने अभी तक क्यों नहीं बताया आयशा?"

"हुजूर को फुर्सत ही कहाँ मिली अभी तक। अब शाही हरम में बेगम को छोड़ एक भी हसीन औरत नहीं बची है।"

अपने गले से मोतियों की माला उतार आयशा से गले में डालते हुए प्रश्न किया—"तो फिर कब तक बेगम के बिना तड़फाओगी?"

"हुजूर का हुक्म हो तो अभी दौड़ी जाऊँ।"

"हाँ, आयशा; अभी जाओ और मेरी तरफ से यह अँगूठी नजर कर देना।" अँगूठी उतार करआयशा को देते हुए अब्दुल्ला खाँ ने कहा।

आयशा उठ कर चली गई। अब्दुल्ला खाँ ने नत मस्तक खड़ी सुन्दरी को अपनी दृष्टि का केन्द्र बिन्दु बनाया।

आयशा के शाही महल में प्रवेश करते देर न लगी। वह सीधी बेगम इनायतबानू के कक्ष की ओर बढ़ी। कक्ष में प्रवेश के पूर्व ही

अन्दर से आता हुआ बेगम का स्वर सुनाई दिया—"वह जुलेखा को भी ले गई, और तुम सब खड़ी देखती रहीं।"

"हम सब कर ही क्या सकती थीं जब जुलेखा खुद जाने को तैयार थी।"

"हूँ, तो आयशा ने मेरी कनीजों को भी बरगलाना शुरू कर दिया है। देखती हूँ, अब कैसे वह महल में पैर रखती है। अगर कहीं आस-पास दिखाई दे तो मेरे पास पकड़ लाना। बदजात जब तक बादशाह सलामत की खिदमत में रही, नाक में दम किये रही, यहाँ से जाकर भी सिर दर्द बनी हुई है।"

आयशा बेगम की पूरी बात सुनने का लोभ संवरण न सकी। इतनी ध्यानावस्थित हो गई थी कि उसे पता ही न चला कि वह परिचारिकाओं द्वारा घिर गई है। पकड़ लाने का आदेश पा कुछ परिचारिकायें कक्ष के अन्य द्वारों से बाहर निकल आई थीं। इधर-उधर जाते हुए उनकी दृष्टि आयशा पर पड़ी, आयशा को पकड़ घसीटने लगीं अन्दर की ओर। विरोध का प्रयत्न व्यर्थ समझ आयशा बेगम के सामने ला खड़ी कर दी गई। बेगम ने दृष्टिपात कर आयशा की उपस्थिति में आश्वस्त हो आदेश व्यक्त किया—"जाओ तुम सब।"

केवल बेगम और आयशा ही कक्ष में रह गईं।

"बैठ जा।" बेगम का रूखा स्वर फूटा।

आयशा जहाँ खड़ी थी, वहीं बैठ गई।

"जुलेखा कहाँ है?"

"बड़े खाँ साहब की खिदमत में।"

"तू क्यों ले गई उसे वहाँ?"

"उसने खुद जाने की ख्वाहिश जाहिर की थी।"

"और यह हार उसे किसने दिया था?"

जुलेखा को अपने द्वारा दिया हुआ हार आयशा बेगम के हाथों में

देख सन्न रह गई, कुछ क्षण तक अपलक निहारती रही हार की ओर वह।

आयशा को शान्त पा बेगम नाटकीय स्वर में बोली—"शायद पहचान नहीं पा रही हो।" हार आयशा के मुँह पर फेंक बेगम तनफनाई "आयशा तू जानती है कि किससे टकराने की कोशिश कर रही है?"

आयशा शान्त स्वर में बोली—"बेगम साहिबा कनीज को गलत समझ रही हैं।"

"सो तो मेरे हाथ भी तुझे एक बार गलत समझने की समझदारी कर चुके हैं। मैं जानती हूँ कि तूने अपनी उसी बेइज्जती का बदला लेने के लिए यह स्वाँग भरा है; और, वह सब करने पर उतारू हो गई है जो तुझे नहीं करना चाहिए; पर याद रख, मैं सिर्फ बेगम ही नहीं मारवाड़ नरेश अजीतसिंह की पुत्री भी हूँ। मेरी रगों में राजपूती रक्त अभी इतना ठंडा नहीं हुआ है कि तेरा मैं कुछ न बिगाड़ सकूँ। यह जानती हूँ कि तेरे खिलाफ मेरे किसी हुक्म की तामील न होगी; पर, तुझे जहन्नुम पहुँचाने के लिए मैं ही काफी हूँ। खां साहब का पल्ला पकड़ कर तूने बादशाह सलामत के साथ जो नमक हरामी की है, उसकी सजा तुझे एक दिन जरूर मिलेगी। जा, आंखों से दूर होजा; और, फिर कभी इस ओर पैर बढ़ाने की कोशिश न करना।"

आयशा कुचली हुई नागिन-सी बाहर से मृतप्राय और भीतर भभकती हुई प्रतिशोधाग्नि लिए बाहर निकल चिर परिचित मार्ग पर अग्रसर होने लगी।

सैय्यद अब्दुल्ला खां बिना छत्र के राजा थे। शक्ति का आवश्यकता से अधिक गर्व था उन्हें। फूट-फूट कर रोती हुई आयशा के मुँह से बेगम की गर्वोक्तियाँ सुन कर वह आपे में न रहे; और तत्काल बेगम का दिमाग ठिकाने लगाने के अभिप्राय से शाही महल की ओर चल दिये।

लगभग चार महीने होने आ रहे थे, एक बार भी खां साहब को शाही महल में न देखा गया था। जो भी देखता आश्चर्य चकित हो निकटस्थ व्यक्ति का ध्यान आकृष्ट करने की चेष्टा करता। खां साहब के मार्ग में उपस्थित रक्षक शस्त्र झुका नत मस्तक हो जाते थे। विरोध हीन मार्ग ने खां साहब को बेगम इनायत बानू के कक्ष के द्वार पर ले जा खड़ा किया। जिन सशस्त्र रक्षिकाओं को बिना बेगम की आज्ञा किसी भी पुरुष के प्रवेश पर शस्त्र उठाने का आदेश प्राप्त था, वे सब खां साहबको देख दो-दो कदम पीछे हट प्रस्तर प्रतिमायें-सी स्तब्ध होती चली गईं। खाँ साहब ने द्वार पर दस्तक दी। भीतर से ध्वनि आई—"कौन ?"

खां साहब ने मुँह से एक भी शब्द निकाले बिना भीतर पैर बढ़ा दिये। संध्या का आगमन हो चुका था। प्रदीप प्रकाश बिखेर रहे थे। तीव्र आलोक में खां साहब ने बेगम को अपनी ओर देखते देखा। खाँ साहब को पहचानते ही बेगम उठ कर खड़ी हो गईं। "ओह ! आप।" बेगम के मुँह से सहसा नैसर्गिक स्वर फूटा।

बेगम के बदन पर अति आवश्यक वस्त्रों के अतिरिक्त वस्त्र न थे। बेगम पहले तो सकपकाई और पारदर्शी वस्त्रों से आवृत अङ्गों को छिपाने का व्यर्थ उपक्रम किया, पर, खां साहब को अपलक दृष्टि से अपनी ओर निहारते देख सहसा क्रुद्ध स्वर में तड़पी—"आप बगैर इजाजत अन्दर कैसे घुस आये ?"

खां साहब का ध्यान बेगम का प्रश्न आकर्षित नहीं कर सका; वह पूर्ववत बेगम के बदन पर दृष्टि गड़ाए रहे। बेगम को खाँ साहब की दृष्टि तीर की तरह चुभती—सी प्रतीत हो रही थी, तिलमिला कर वह बोलीं—"इस तरह घूर-घूर कर क्यों देख रहे हैं ?"

फिर भी खाँ साहब अप्रभावित ही बने रहे।

बेगम ने संदेह के निवारणार्थ एक बार अपने उन अङ्गों पर दृष्टि

डाल, जो खां साहब की दृष्टि के केन्द्र-बिन्दु बने हुए थे, खां साहब की ओर गरदन को झटका देकर पूर्व की अपेक्षा अधिक रोषपूर्ण स्वर में कहा-"आपको शर्म नहीं आती,इस तरह किसी औरत को घूरते हुए?"

"औरत कभी इतनी खूबसूरत नहीं हो सकती, जरूर तुम, जन्नत की हूर हो। आदशा ठीक ही कह रही थी ; यह हुश्न बेमिशाल।"उसी तरह खाँ साहब ने सौन्दर्य-सागर में निमग्न होते हुए कहा।

तड़पी बेगम-"खां साहब ! होश से बातें करिए। मेरी बेइज्जती करने का आपको कोई हक नहीं।"

"बेइज्जती नहीं ; तारीफ कर रहा हूँ बेगम-तारीफ ; हुश्न की बेइज्जती तो तब है जब उसे भर नजर देखा न जाय, उसकी कीमत न आँकी जाय।"

"जबान सम्हाल कर बोलिए खां साहब।" खाँ साहब को बेगम की फुफकार सुनाई दी।

खाँ साहब बेगम के सौन्दर्य से इतने अभिभूत थे कि सम्मान के विरुद्ध बेगम की अभिव्यक्ति सुन कर भी मुस्कराये जा रहे थे, और खाँ साहब की मुस्कान बेगम की क्रोधाग्नि में आहुति सिद्ध हो रही थी।

"फौरन बाहर निकल जाइए।" विद्युत-सी बेगम तड़पीं।

फिर भी खाँ साहब ने मुस्करा कर उत्तर दिया—"इस काली-काली घटाओं जैसे बालों की . . . .।"

बीच में ही बेगम के मुँह से निकला—"उफ ! इन बालों की वजह से कितनी बार बेइजज्त नहीं होना पड़ा है।" लपक कर बेगम ने पलंग के सिरहाने तकिये के नीचे रखी कटार उठाई और बालों को दूसरे हाथ से पकड़ काट कर खां साहब के मुँह पर फेंक कर मारते हुये कहा—"जा, ले जा बालों को।"

खां साहब बेगम के अप्रत्याशित आचरण को विह्वल-विमुग्ध दृष्टि

से देखते रह गये। बेगम के कटे बाल खाँ साहब के चेहरे से टकरा कर फर्श पर आ गिरे।

विद्युत-चालित यन्त्र की भाँति कटार युक्त हाथ से द्वार की ओर संकेत कर बेगम गरजीं—"जाइये।"

कटार युक्त हाथ के हिलाते ही खाँ साहब सहमें, पर आशा के विरुद्ध कटार को हाथ में ही देख आश्वस्त हो बोले—"क्यों बिला वजह बेगम नाखुश हो रही हो?"

"खाँ साहब, मैं कहती हूँ, फौरन चले जाइये, वरना....।"

"वरना क्या करोगी बेगम?"

"तो आप नहीं जायेंगे यहाँ से?"

"नहीं बेगम; 'वरना' का इन्तजार जो है।"

"खुदा के लिए चले जाइये खाँ साहब, वरना......।"

"बस! बेगम, यही 'वरना' पूरा कर दो, तुम्हारी कसम....।"

खाँ साहब का वाक्य पूरा भी न होने पाया था कि बेगम ने कटार वाला हाथ अपने सीने पर दे मारा। कटार पूरी सीने के आर-पार हो गई। बेगम मुँह के बल फर्श पर गिर पड़ी।

"बेगम...बेगम। यह क्या किया तुमने।" [illegible] खाँ साहब ने; मगर बेगम-बेगम हो तो जवाब दे, वह तो राजपूत बाला की निर्जीव काया बन चुकी थी।

२८

यद्यपि सम्राट फर्रुखसियर के पतन में लक्ष्मी ने सक्रिय भाग लिया था, और किसी सीमा तक प्रतिशोधाग्नि के शमन में समर्थ भी हुई थी, पर, उस घटना का लक्ष्मी पर कुछ ऐसा प्रभाव हुआ कि वह एकान्त-वासिनी बन गई। खाँ साहब के यहाँ आना-जाना भी कम हो गया। रतनचन्द, जो लक्ष्मी की शक्ति से परिचित हो चुका था, सदा लक्ष्मी से मिलने के लिए आतुर रहा करता था और लक्ष्मी के लिए वे सभी साधन जुटाने का भरसक प्रयास किया था जो लक्ष्मी को रतनचन्द पर कृपा के लिये बाध्य कर सकते थे। लक्ष्मी की अपनी आलीशान कोठी हो गई थी। अनेक कर्मचारी सदा आज्ञा शिरोधार्य कर तदनुकूल आचरण के लिए हाथ बांधे सेवा में प्रस्तुत रहते थे। वस्त्राभूषण इत्यादि के ढेर लगे रहते थे। रामदास के ठाठ निराले थे। वह भड़कीले वस्त्र धारण कर पालकी पर सवार हो अपने वैभव का प्रदर्शन किया करता था। आये दिन नाते-रिस्तेदारों को उत्तमोत्तम भोजनादि कराया करता था रामदास। लक्ष्मी बाप को प्रसन्न देख आँखे बन्दकर सन्तोष की साँस लिया करती थी; पर, एकान्त प्रियता में किसी भी प्रकार कभी न आने पा रही थी। प्रारम्भ में तो कभी-कभी रतनचन्द से मिल वार्तालाप कर भी लिया करती थी, बाद में बाहर निकल बाग तक में टहलना बन्द कर दिया था।

लक्ष्मी के इस आचरण से सबसे अधिक चिन्ता सेठ रतनचन्द को हुई। खाँ साहब तो शाही महल की सुन्दरियों में ऐसे खोये थे कि

लक्ष्मी के पास उनका सन्देशा एक बार भी न आया था। सेठ रतनचन्द ने अपनी योजना पर पानी फिरते अनुभव कर एक दिन रामदास को आ पुकारा। रामदास कहीं जाने की तैयारी में था। सेठ का चिर-परिचित स्वर सुन नंगे पैर ही दौड़ा बाहर चला आया और कृतज्ञतापूर्ण स्वर में बोला "सेठ जी ! आइये-आइये।" सेठ रामदास के साथ हो लिये।

सेठ को सम्मानपूर्वक बैठा हाथ जोड़ विनम्रवाणी में बोला रामदास—"मालिक ने तकलीफ क्यों उठाई, किसी से बुला भेजा होता ?"

"कोई बात नहीं रामदास। मैं आया, या तुम आये; एक ही बात है।" अन्दर की ओर दृष्टि डाल चिन्ता व्यक्त की "आज लक्ष्मी बिटिया नहीं दिखाई दे रही है। कहीं गई है क्या ?"

"नहीं मालिक; लक्ष्मी बिटिया कहीं आती-जाती ही कहाँ। अन्दर है; अभी बुलाता हूँ मालिक।" रामदास ने वहीं से भीतर की ओर पैर बढ़ाते हुए पुकारा "लक्ष्मी! ओ बिटिया लक्ष्मी ....!"

"क्या है बापू ?" भीतर से लक्ष्मी का स्वर आया।

"यहां तो आ बेटी ! देख आ न, कौन आये हैं।"

"कौन हैं बापू ?" लक्ष्मी ने बाहर आ प्रश्न किया और सेठ पर दृष्टि पड़ते ही हाथ जोड़ दिये।

"जीती रहो बेटी। तबियत तो ठीक रहती है न अब ?" सेठ ने आत्मीयता व्यक्त की।

"बस मालिक आप की कृपा है सब।" रामदास का स्वर सेठ के उपकारों के बोझ से बोझिल-सा था।

"सुन कर बड़ी खुशी हुई। अब तो बेटी बाहर आना-जाना शुरू कर दो।"

"हम तो लक्ष्मी बिटिया से न जाने कितनी बार कह चुके हैं कि कोठी में पड़े-पड़े तबियत कभी ठीक नहीं होने की। बाहर निकला

करो; दो बोल अपने लोगों से बोल लिया करो। मालिक आपसे क्या कहूं, न जाने कितनी दूर दूर के कौन-कौन रिस्तेदार मिलने दौड़े चले आते हैं, मगर बिटिया को न जाने क्या सनक सवार है कि किसी से नीके बात तक नहीं करती।"

"लक्ष्मी! बापू ठीक तो कहते हैं; बड़े-बूढ़ों का कहना मानना बच्चों का धर्म होता है। देखो न बापू तुम्हें कितना चाहते हैं।"

"और है ही कौन मालिक हमारे। यही एक तो जिन्दगी का सहारा है। इसी को दिन-रात देख सन्तोष कर लेता हूँ।"

"पिछले जन्म में बड़े पुण्य किये होंगे जो इस जन्म में लक्ष्मी जैसी बिटिया का बाप बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है तुम्हें।"

"सब आप बड़े लोगों की कृपा है मालिक। हम घास-फूस बीनें बाले क्या जाने बिटिया की कीमत।"

लक्ष्मी चुपचाप खड़ी सुन रही थी। सेठ ने लक्ष्मी को लक्ष्य कर कहा—"लक्ष्मी बेटी! कोई कष्ट है क्या?"

"नहीं सेठ जी।"

"कोई बात हो तो बताओ न। देखो, मालिक तुम्हारा हाल-चाल जानने इस धूप में दौड़े चले आये हैं।"

हां, बेटी, अगर कोई ऐसी बात हो तो निःसंकोच कहो। तुम्हारे लिये जैसे रामदास वैसे हम, क्यों रामदास?"

"वाह, मालिक! मालिक हो तो आप जैसा। नौकर के बच्चों को भी अपना बच्चा समझते हैं।"

वेदना भरी दीर्घ साँस छोड़ सेठ बोला—"मन की क्या बतायें राम-दास। बस, इतना जान लो कि लक्ष्मी बिटिया हूबहू किशोरी जैसी दिखाई देती है मुझे। किशोरी का हाल तो तुमसे छिपा है ही नहीं।"

"क्या बतायें मालिक, अगर वश चलता तो बादशाह का मुँह नोच लेता। कैसे जबरदस्ती उठवा मगाया था; कैसी बिलखती जा रही

थी किशोरी बिटिया । याद करके कलेजा मुँह को आता है ।" उमंगित हो—"मगर मालिक ! बादशाह की भी दुरगति कोई कम नहीं हुई है; कर्मों का फल पा गया है ।"

"लक्ष्मी बेटी ! कुछ तो बोलो । हमारा सब कुछ तुम अपना समझो । हम हर तरह से तुम्हारी मदद को तैयार हैं । क्या खां साहब ने कुछ कह दिया है ?"

"नहीं ।" लक्ष्मी बोलकर शान्त हो गई ।

'छोटे खां साहब की निगाह तो नहीं पड़ गई ।"

लक्ष्मी ने सेठ की ओर ऐसी दृष्टि से देखा कि वाक्य अधूरा ही रह गया । रतनचन्द कच्चे खिलाड़ी न थे; समय की आवश्यकतानुकूल आचरण करना भली-भांति जानते थे और अधिक ठहरना उचित न समझ सेठ ने उठते हुए कहा—"शायद लक्ष्मी के सिर में दर्द हो रहा है । अब मैं चलता हूँ रामदास । तुम वैद्य जी को लाकर दिखा देना ।" कदम बढ़ाते हुए सेठ ने कहा—"और, अगर कोई जरूरत हो तो निःसंकोच चले आना ।"

सेठ को द्वार तक भेज रामदास ने लौट कर लक्ष्मी को देखा तो लक्ष्मी न थी वहाँ । रामदास लक्ष्मी के कमरे में गया । लक्ष्मी वहां भी न थी । अज्ञात आशंका से कांप उठा रामदास । द्रुत गति से इधर उधर के कमरों में देखा; पर जब लक्ष्मी कहीं भी दिखाई न दी तो वह सीधा बगीचे की ओर दौड़ा । लक्ष्मी उद्यान के मध्य निर्मित जलाशय के किनारे शान्त बैठी थी । निकट आ रामदास ने कहा—"क्यों बिटिया, बूढ़े बाप को परेशान करती हो ?"

"क्या हो गया बापू ?"

"क्यों बिना बताये हमको वहाँ से इतनी जल्दी यहाँ चली आई ?"

"देखो लक्ष्मी ! हमको तुम्हारा यह रङ्ग-ढङ्ग पसन्द नहीं।"

लक्ष्मी की दृष्टि प्रश्न चिन्ह बन रामदास के चेहरे पर अटक कर रह गई।

"सेठ जी से क्यों तुम अच्छी तरह नहीं बोली ?"

"क्या बोलती बापू ! वह बोलने लायक आदमी भी है?"

"लक्ष्मी ! और किसी को चाहे कुछ कहो, मगर हमारे मालिक को कभी कुछ न कहना। चिराग ले कर ढूढ़ोगी तो भी ऐसा मालिक नजर नहीं आयेगा। बड़े भाग से ऐसा मालिक मिलता है। यह हवेली, यह सब कपड़ा-जेवर उन्हीं का तो दिया है।"

"बापू तुम सेठ की चाल को नहीं समझते। सेठ जी एक भी पैसा वहाँ खर्च नहीं कर सकते जहाँ घाटे की तनिक भी गुन्जाइश होती है?"

"तो हमसे भी उनका कोई फायदा हो सकता है ?"

"कुछ नहीं बापू, सेठ जी को हमसे बहुत फायदा हो सकता है। और क्या सेठ ने हम से कम फायदा उठाया है ?"

"क्या कहती हो बिटिया ? मालिक को भला हमसे क्या फायदा हुआ है ?"

"बापू आज सेठ जी बड़े खां के दाहिने हाथ कहे जाते हैं। जानते हो किसकी बदौलत ?"

रामदास ने नकारात्मक सिर हिला अज्ञानता व्यक्त की।

"मेरी बदौलत। मुझे खाँ साहब को सौंप कर अपने लिए खाँ साहब के दिल में यह जगह बना पाये हैं। और यही जगह बादशाह के दिल में भी किशोरी को सौंप बनाने की कोशिश की थी, मगर, मीर साहब के कारण सफलता न मिली। बस ! बादशाह के विरोधी बन बैठे और खाँ साहब की चौखट में नाक रगड़ने लगे।"

"मालिक को भी नाक रगड़नी पड़ती है ?"

"और नहीं तो क्या तहखाने होंगे जवाहरातों से ऐसे ही भरे हैं?"

"लानत है ऐसे धन पर जिसके लिए इन्सान की हत्या करनी पड़े। आग लगे ऐसी दौलत में। आज ही छोड़ दें यह हवेली। हम किसी के बगीचे में पानी दे के पेट भर लेंगे; हमें नहीं चाहिए ऐसे पापी की कृपा।"

"बापू, तुम चिन्ता न करो; सेठ जी को ठिकाने लगाने के लिए मैं ही काफी हूं।"

"तो क्या मालिक को नुकसान पहुँचाने की बात सोचे हो?"

"बापू! सेठ ने जो हमारे साथ व्यवहार किया है, उसकी सजा उसे मिलनी ही चाहिए।"

"ना बिटिया! भगवान खुद ही उनको उनकी करनी का फल दे देगा।"

"न बापू! भगवान ऐसे को सजा कभी नहीं देता। भगवान भी उन्हीं को सताता है जो सेठ जैसों द्वारा सताये हुए होते हैं।"

"ऐसा न सोचा करो बिटिया। भगवान के घर देर है अन्धेर नहीं। जरूर एक-न-एक दिन भगवान फैसला करेगा। अब तुम जाकर आराम करो, हम अभी वैद्य जी को बुलाये लाते हैं।" उठते हुए रामदास ने कहा।

"वैद्य जी की कोई जरूरत नहीं है बापू

"तुम्हारे सिर में दरद जो हो रहा है?"

"हमारे सिर में कोई दरद-वरद नहीं है।"

"सच?" प्रसन्नतासूचक स्वर में रामदास ने पूछा।

"हाँ बापू! मैं भली-चङ्गी हूँ। तुम कोई चिन्ता न करो।"

"तो फिर थोड़ी देर के लिए जरा मंगलू से मिल आऊँ।"

"जाओ, मगर बहुत रात न करना बापू; चिराग-बत्ती तक लौट आना।"

"उससे भी पहले आ जाऊँगा बेटी।" कह कर रामदास चल दिया वहाँ से।

लक्ष्मी जलाशय में इधर-उधर दौड़ती, डूबती-उतराती रङ्ग-बिरङ्गी मछलियों की ओर देख सोचने लगी--"खाँ साहब के महल के अन्तःपुर में भी इसी प्रकार विभिन्न रङ्गों के परिधानों में आवृत असंख्य सुन्दरियाँ इधर-से-उधर घूमती फिर रही होंगी।"

२७

इस ओर पहले ही संकेत किया जा चुका है कि रफी उद्दौला क्षय का रोगी था ; और, रोग ने उसे इतना अशक्त बना दिया था कि हाथ पैर डुलाना भी कष्टकर था उसके लिए। सम्राट उसे इच्छा के विरुद्ध बनाया गया था। सम्राट के जीवन से कैदखाने का जीवन उसे अधिक रुचिकर था। सम्राट के रूप में कुछ-न-कुछ तो करना ही पड़ता था। एक दिन अत्यधिक तङ्ग आकर वह डोली में गाव तकिये के सहारे लेटा-सा सैय्यद अब्दुल्ला खाँ के महल में जा पहुँचा ; क्योंकि, अब्दुल्ला खाँ से इधर लगभग एक महीने से सम्राट की भेंट न हो सकी थी। और उसमें इतना साहस न था कि वह अपने वजीर को अपने समक्ष उपस्थित होने की आज्ञा प्रसारित कर सकता। खाँ साहब अपने विलास कक्ष में थे। सम्राट के आगमन की सूचना उन तक पहुँचना असम्भव था ; फलतः सम्राट की डोली प्रतीक्षा गृह के द्वार पर ही रख दी गई। अब्दुल्ला खाँ के कर्मचारियों ने सम्राट से प्रतीक्षा गृह में, विश्राम करने की प्रार्थना की ; पर, सम्राट जहाँ था, वहाँ से उठ कर अन्दर तक जाने का कष्ट नहीं उठाना चाहता था। वहीं वह उस घड़ी की प्रतीक्षा करने लगा जब खाँ साहब को उसके आगमन से अवगत कराया जा सके और खाँ साहब सम्राट से मिलना स्वीकार करें।

कुछ देर बाद अपनी चिर-परिचित डोली को खाँ साहब के द्वार पर देख लक्ष्मी ने कौतूहलवश वाहकों से प्रश्न किया—"कौन आया है ?"

"बादशाह सलामत।" उत्तर मिला एक वाहक द्वारा।

डोली पर पर्दा पड़ा हुआ था। बादशाह को कभी लक्ष्मी ने देखा न था। देखने की अभिलाषा के वशीभूत हो लक्ष्मी बोली—"क्या खाँ साहब से मिलने गए हैं ऊपर?"

"नहीं।" वाहक ने संकेत द्वारा सम्राट के पालकी में ही होने का ज्ञान करा दिया।

लक्ष्मी ने खाँ साहब के कर्मचारियों पर दृष्टि डाल एक को निकट बुला पूँछा—"क्या खाँ साहब नहीं हैं?"

"हैं।"

"क्या नीचे ही आ रहे हैं?" लक्ष्मी ने समझा था कि सम्राट के आगमन की सूचना दे दी गई होगी खाँ साहब को और वह सम्राट से मिलने नीचे ही आ रहे होंगे।

"जी नहीं।"

"क्या अभी सूचना नहीं दी गई?"

"वहां किसी को जाने की इजाजत ही नहीं है।"

तत्काल परिस्थिति स्पष्ट हो गई लक्ष्मी को। "अभी मैं सूचित करती हूँ जाकर।" कहते हुए लक्ष्मी ने डोली पर दृष्टि डाल आगे बढ़ने की चेष्टा की।

लक्ष्मी और कर्मचारी के मध्य होने वाली वार्ता से सम्राट ने अनुमान लगा लिया था कि लक्ष्मी अवश्य ही खाँ साहब पर अधिकार रखती है। परदा सरका कर उसने लक्ष्मी की ओर देखा। लक्ष्मी को अपनी ओर देखते पा करुण स्वर में प्रार्थना की—"जरा खाँ साहब को नीचे ही लाने की कोशिश करियेगा।"

सुनी हुई बातों के आधार पर ही सम्राट का चित्र लक्ष्मी ने अपने कल्पना लोक में खींचा था उसका किञ्चित आभास पा सम्राट से दो

बातें करने का लोभ संवरण न कर सकी और बोली—"हुजूर ने अब इतनी दूर तक तशरीफ़ लाने की तकलीफ़ उठाई है तो ऊपर चलने में ही क्या हर्ज है ?"

"मुझे ऊपर चढ़ने में ही तकलीफ़ होगी, मैं उसे बरदाश्त नहीं कर सकूंगा।"

"शायद हुजूर की तबियत कुछ ज़्यादा नासाज़ है ?"

सम्राट ने लक्ष्मी के प्रश्न की उपेक्षा कर पूछा—"खाँ साहब से कितनी देर में मुलाकात करा सकोगी ?"

"हुजूर का हुक्म हो तो बिल्कुल देर न लगे ; मगर मेरी तो ख्वाहिश है कि हुजूर ऊपर ही तशरीफ़ ले चलें। हुजूर को चढ़ने की तकलीफ़ नहीं उठानी पड़ेगी, डोली आसानी से ऊपर जा सकेगी।"

"मगर डोली के चढ़ने-उतरने के धक्के तो जिस्म में लगेंगे ही।"

"हुजूर फिक्र न करें, ऐसे रास्ते से हुजूर को ले जाया जायेगा कि हुजूर महसूस भी न करेंगे कि ऊपर चढ़ रहे हैं।"

अधिक प्रतिरोध में अपने को असमर्थ अनुभव कर सम्राट को बाध्य हो कहना पड़ा—"जैसी तुम्हारी मर्जी।"

सम्राट की डोली उस रास्ते से ऊपर चढ़ाई जाने लगी जिसमें सीढ़ियाँ न थीं। वह अति दीर्घ मार्ग घोड़ों के लिये था।

लक्ष्मी सम्राट को ऊपर ले आने का आदेश दे संक्षिप्त मार्ग से ऊपर जा पहुँची। लक्ष्मी काफी दिनों बाद दिखाई दी थी। जो भी देखता था, देखता ही रह जाता था। लक्ष्मी ने नख-शिख शृङ्गार भी अद्भुत कर रखा था। लक्ष्मी को खाँ साहब तक पहुँचने से रोकने का किसमें साहस था। समस्त व्यवधान दूर होते चले गये। बिना किसी सूचना के लक्ष्मी परदा हटा कक्ष के द्वार पर जा खड़ी हुई। खाँ साहब की दृष्टि एक ऐसे प्राकृतिक सौन्दर्य पर टिकी थी कि हटने का नाम ही न ले रही थी। उसी सौन्दर्य—प्रतिमा ने संकेत द्वारा खाँ साहब को

लक्ष्मी की उपस्थिति का भान कराया। खाँ साहब ने गरदन घुमाई तो चिर-परिचित लक्ष्मी को दृष्टि के समक्ष पाकर भी ऐसी सम्भ्रम-विह्वल दृष्टि से देखने लगे जैसे सहसा कोई अपरिचित आ उपस्थित हुआ हो। लक्ष्मी ने झुक कर अत्यन्त मोहक ढङ्ग से अभिवादन किया और मुस्करा दी। लक्ष्मी की मन्द, मृदुल और मोहक मुस्कान ने प्रत्युत्तर में खाँ साहब को मुस्कान बिखेरने के लिए बाध्य कर दिया। खाँ साहब के स्वर में स्वागत-भाव व्यक्त हुआ—"आओ लक्ष्मी, वहाँ क्यों खड़ी रह गईं?"

"बादशाह सलामत तशरीफ लाये हैं।"

"कहाँ हैं?"

"बाहर।"

"क्या साथ आए हैं तुम्हारे?"

"नहीं सरकार, वह मेरे आने के बहुत पहले से ही आपका इन्त-जार कर रहे थे"

"लेकिन मुझे तो कोई इत्तला नहीं?" लक्ष्मी के साथ-साथ आगे बढ़ते हुये खाँ साहब ने कहा।

"आप तक कोई पहुँच ही कैसे सकता था?"

"तुम्हारी तरह।"

"तो शायद मेरी जगह बहुतों ने ले रखी है।"

"कोई एक इतना काबिल भी तो नहीं है।"

"तब तो हुजूर को एक-एक काम के लिये अच्छी-खासी फौज को हुक्म देना पड़ता होगा।"

"फिर भी अफसोस इस बात का है कि काम उस खूबी से नहीं हो पाता है........।"

बीच में ही लक्ष्मी बोल पड़ी—"मगर हुजूर ने कनीज को कभी

याद नहीं फरमाया ?"

"रतनचन्द से तुम्हारी बीमारी का हाल-चाल मिल जाया करता था। अब तबियत कैसी है ?"

पहले तो लक्ष्मी के मन में आया कि कह दे कि वह बीमार ही कहाँ थी, मगर इच्छा के प्रतिकूल कहा—"आपके सामने हूँ।"

लक्ष्मी की ओर खाँ साहब ने देखते हुए कहा—"अब तो भली-चंगी दिखाई दे रही हो।"

"हुजूर की मेहरबानी है सब।"

वह कक्ष आ गया था जिसमें सम्राट के बैठाए जाने की उम्मीद थी। दोनों के कक्ष में प्रवेश करते ही सम्राट ने स्वागतार्थ उठने का अभिनय भर किया। खाँ साहब ने निकट बैठते हुए पूछा—"हुजूर ने कैसे तकलीफ उठाई ?"

लक्ष्मी भी खाँ साहब के पीछे कुछ बगल हट कर बैठ गई थी।

सम्राट ने निरीह दृष्टि से खाँ साहब की ओर देख प्रार्थना की—"खुदा के लिए अब मुझे आजाद कर दीजिए। निहायत मेहरबानी होगी आपकी।"

"मतलब ?" खाँ साहब ने स्पष्टीकरण चाहा।

"बादशाहत की कैद से आजिज आ गया हूँ मैं। मुझे मेरे उसी कैदखाने में भेज दीजिए।"

बादशाह की बात सुन खाँ साहब ने लक्ष्मी की ओर मुस्कान भरी दृष्टि से देखा। लक्ष्मी ने उस दृष्टि में पढ़ा—"सुना भी है कभी ऐसे बादशाह के विषय में जो बादशाहत को कैद अनुभव करता हो और कैदखाने को विश्राम गृह।"

लक्ष्मी की मुस्कान में खाँ साहब ने अनुभव किया—"भूतो न भविष्यत।"

खाँ साहब ने बादशाह की ओर मुड़ कर कहा—"मगर आपको तकलीफ ही क्या है ?"

"यही तकलीफ कौन कम है कि मैं बादशाह हूँ ?"

"इस बादशाहत को हासिल करने के लिए तो आपके बुजुर्गों ने खून की नदियां बहाई हैं।"

"खून की नदियां बहाने वाले एक लहमें के लिए भी कभी आराम की जिन्दगी नहीं गुजार सके हैं। दिन-रात उन्हीं नदियों में अपनी बादशाहत के बहने के ख्वाब देख-देख परेशान रहे हैं। परेशान इन्सान की जिन्दगी भी कोई जिन्दगी है।"

"मगर हुजूर को तो इस किस्म की कोई परेशानी नहीं है।"

"मगर मुझे ही आप क्यों बादशाहत की गाड़ी में जोते हुए हैं ? मेरे और तमाम भाई-बन्द तहखानों में ऐश कर रहे हैं, उनमें से किसी एक को क्यों नहीं मेरी तरह तख्त पर बैठा देते हैं ? मेरे लिये उठना-बैठना तक मुश्किल हो रहा है। सुबह से रात तक हजारों शख्सों की ओर आँख उठा देखना पड़ता है। मुझसे यह तवालत नहीं उठाई जाती।"

खाँ साहब और लक्ष्मी ने एक दूसरे की ओर देखा और मुस्करा दिए। लक्ष्मी ने खाँ साहब की कुछ क्षण तो प्रतीक्षा की ; पर जब उन्होंने कुछ न कहा तो उसने सम्राट का पक्ष लिया—"जब हुजूर को बादशाहत कुबूल नहीं है, बादशाहत बोझ-सी मालूम दे रही है, तो क्यों नहीं मुक्त कर देते आपको ?"

"हुसेन से बात कर देखूँगा।"

लक्ष्मी को बादशाह की स्थिति पर इतना अधिक तरस आ रहा था कि और अधिक सशक्त शब्दों में सहायक बनना पड़ा—"हुजूर से मेरी भी गुजारिश है कि बादशाह सलामत को आजाद कर दें।"

"मालूम दे रहा है कि बादशाह सलामत तुम्हें अपनी सिफारिश के लिए साथ ले आये हैं।" मन्द स्मित के साथ खां साहब ने कहा।

"इन्हीं की मेहरबानी से तो आपसे मुलाकात हो सकी है।" बाद-शाह ने कृतज्ञता व्यक्त की।

लक्ष्मी इससे अत्यधिक प्रभावित हुई और भावावेश में आकर बोल गई—"जाइये, आपको आज से हुज़ूर ने आज़ाद कर दिया।" कह तो गई लक्ष्मी पर बात समाप्त होते ही वह शंका भरी दृष्टि से खां साहब की ओर देखने लगी।

"बहुत-बहुत शुक्रिया। आप का यह अहसान मैं ताउम्र याद रखूंगा।" बादशाह ने अपनी प्रसन्नता व्यक्त की।

"शायद हुज़ूर को मेरी बेवक़ूफ़ी ने नाराज़ कर दिया?" लक्ष्मी के मन का चोर व्यक्त हो गया।

"नहीं लक्ष्मी, यह तो होना ही था।" परिवर्तन को अधिक महत्व न देते हुए खां साहब ने कहा—"किसी दूसरे शहज़ादे को तहखाने से निकाल लिया जायेगा।"

लक्ष्मी ने सन्तोष की सांस ली।

रफी उद्दर्जात ने अपने को पूर्ण मुक्त अनुभव किया। सम्भवत: यह सोच कर कि फिर कहीं न फांस लिया जाऊँ, शहज़ादे ने वहां से खिसकना चाहा—"तो फिर मुझे इजाज़त दीजिए।" अपने गले से वही हार उतार खाँ साहब के सामने रख दिया जो बादशाह बनते समय खां साहब द्वारा पहनाया गया था।

"इसे पहने रहिए न।" खां साहब ने कहा।

"जब बादशाहत से हुज़ूर ने आजाद कर दिया तो फिर इसी का बोझ क्यों लादे रहूँ? किसी और के काम आयेगा।"

रफी उद्दर्जात की निर्लिप्त भावना को देख दोनों के आश्चर्य की सीमा न रही। पुन: लक्ष्मी और खाँ साहब की दृष्टियाँ टकरा कर विहँस उठीं।

दूसरे ही दिन किले के तहखानों की खोजबीन की जाने लगी। जिस तहखाने का ताला खोला जाता उसी का मुगल वंशज या तो सोता मिलता या ऊँघता। लक्ष्मी ने अनेक से बात करने की चेष्टा की और अपनी कसौटी पर कसना चाहा, पर एक ने भी ठीक-ठीक उत्तर न दिए। बादशाह बनने की क्षमताएँ एक में भी न मिल पा रही थीं। अगर किसी-किसी के मन और मस्तिष्क ठीक प्रतीत होते तो अवस्था उनकी इतनी कम होती कि लक्ष्मी को निराश होना पड़ता। परन्तु, अभी तो अनेक तहखाने देखने शेष थे। आगे बढ़ एक तहखाने का ताला खोला गया। कर्मचारी पहले प्रवेश करते थे अन्दर। तत्पश्चात लक्ष्मी को अन्दर जाने की सूचना दी जाती थी। लक्ष्मी के प्रवेश करने पर शाहजादे का परिचय दिया गया।

"आप जन्नतनशीन औरङ्गजेब के शाहजादे शहंशाह बहादुरशाह के तीसरे शाहजादे फर्रुखसियर के दूसरे शाहजादे रफीउद्दर्जात के बड़े भाई शाहजादा रफीउद्दौला साहब हैं।"

परिचय पा लक्ष्मी ने परिचित रफीउद्दर्जात की आकृति को ध्यान में ला शाहजादे की ओर देखा। काफी समानता थी; पर, रफीउद्दौला उतना अशक्त न प्रतीत हुआ। अपनी ओर लक्ष्मी को देखता देख

रफीउद्दौला ने प्रश्न किया—"आप इस तरह मेरी ओर क्या देख रही हैं? जाइये-जाइये, आपकी मेरी कभी मुलाकात नहीं हुई।"

एक कर्मचारी बीच में ही बोल उठा—"आपको लेने आई हैं आप।"

"मुझे लेने? मुझे लेकर आप क्या करेंगी?"

"आप बादशाह बनना चाहते हैं?" लक्ष्मी ने प्रश्न किया।

"आप भी कमाल कर रही हैं। बादशाह कहीं बनाये जाते हैं!"

क्षीण मुस्कान के साथ शाहजादे ने कहा-"बादशाह बनने की तमन्ना की वजह से तो यहाँ साल भर से कैद हूँ। न जहाँदरशाह के खिलाफ बगावत की होती, न यह जिन्दगी गुजारने पर मजबूर होना पड़ता।"

"पर, अब अगर आप बादशाह बनना चाहें तो बन सकते हैं।"

"किसके खिलाफ तलवार उठानी होगी?"

"किसी के खिलाफ नहीं।"

"बिना जङ्ग के बादशाहत हासिल हो जायगी?"

"जी हाँ।"

"नामुमकिन। आज तक बिना जङ्ग के किसी को बादशाहत हासिल भी हुई है या मुझे ही होगी। जाइए, आप लोग बिना वजह मेरा मजाक उड़ाने आ गये।" शाहजादे ने कहकर दृष्टि नीची कर ली।

"आप यकीन भी तो करिए। आपके भाई साहब ने बादशाहत से इस्तीफा दे दिया है।"

झुँझलाकर रफीउद्दौला टेढ़ी गरदन कर बोला—"मेरा कोई भाई

याई नहीं है। भाई ने ही मेरे साथ दगा न की होती तो आज यह नौबत क्यों आने पाती ?"

"बड़े अफसोस की बात है कि आपके भाई की वजह से आपको इतने दिन यह जिन्दगी गुजारनी पड़ी। अब आप मेरे साथ आइए; तख्ते ताऊस आपका इन्तजार कर रहा है।"

"एक तो वैसे ही मैं तकदीर का मारा हूँ, ऊपर से आप...... ....।"

बीच में ही लक्ष्मी बोल उठी-"निहायत अफसोस है कि आपको मेरी हमदर्दी बनावटी लग रही है। आप एक दफा तो यकीन कर देखिए ......।"

"क्या एक पेट से पैदा भाई से भी ज्यादा किसी पर यकीन किया जा सकता है ?"

"यह तो वक्त–वक्त की बात होती है। और फिर आप को तो मालूम ही होगा कि आपके ही खानदानी बुजुर्गों में एक भाई ने दूसरे भाई का गला काटा है। बादशाहत हासिल करने के लिए एक ही मा के पेट से पैदा शाहजादों ने एक दूसरे पर क्या जुल्म नहीं किये ? आज भी सल्तनत के एक-एक शख्स की जुबान पर उन जुल्मों की दास्ताँ मौजूद है जो औरङ्गजेब ने अपने बड़े भाई दारा के ऊपर किये थे।"

"इसी वजह से किसी पर यकीन करने का मन नहीं होता।"

"पर आपको यह न भूलना चाहिए कि यकीन पर ही दुनियाँ कायम है। जिस दिन यकीन न रहेगा उस दिन यह खुदाई नहीं होगी। आपको क्या इस बात पर यकीन नहीं करना चाहिए कि अगर हम लोग किसी किस्म का नुकशान पहुँचाने के मतलब से आये होते तो क्या सबके हाथ खाली होते ? क्या यह बात काबिलेयकीन नहीं है कि आप के साथ हम बाइज्जत पेश आ रहे है और बड़ी अजीजी के साथ गुजा-

रिश कर रहे हैं कि एक तख्तेताऊस की रौनक बढ़ाएँ चलकर।"

"चलिए, ज्यादा-से-ज्यादा जिन्दगी से ही तो हाथ धोना पड़ेगा। इस जिन्दगी से तो मौत बेहतर है।" विश्वासघात के भयंकरतम परिणाम का सामना करने को कटिबद्ध हो रफीउद्दौला चलने को प्रस्तुत हो गया।

तहखाने का दरवाजा खुला पड़ा था।

सशस्त्र पहरेदारों की दृष्टियाँ एक दूसरे से पूछ रही थीं—"हम किधर चलें?"

सैय्यद भाई दरबार में रतनचन्द तथा अन्य इष्ट-मित्रों, शुभचिंतकों तथा हाँ-में-हाँ मिलाने वाले खुशामदियों के साथ बैठे नये बादशाह के लाये जाने की प्रतीक्षा कर रहे थे । काफी देर तक प्रतीक्षा करना हुसैन अली के स्वभाव के विरुद्ध था । वह ऊब कर बोला—"आप भी बैठे बैठे एक-न-एक बेकार का काम किया करते हैं । फिजूल में वक्त बरबाद हो रहा है ।"

भाई की हल्की झिड़की सुनकर भी अब्दुल्ला खाँ ने मुस्कराकर थोड़ी देर और प्रतीक्षा करने की बात कही—"बस आता ही होगा ।"

"यह तो कई बार सुन चुका हूँ, मगर इन्तजार की भी एक हद होती है । तहखाने का शाहजादा न हो गयाकब्र में गड़ा मुर्दा हो गया, जिसे लाने में इतना वक्त लग गया ।"

हुसैन का कथन समाप्त ही हुआ था कि कर्मचारियों के आगे--आगे आते हुए शाहजादे पर सभी उपस्थित दरबारियों की दृष्टि पड़ी । भावी सम्राट की उपस्थिति ने सबको खड़ा कर दिया । सबको खड़े होते देख हुसैन को भी खड़ा होना पड़ा ।

अब्दुल्ला खाँ ने आगे बढ़कर रफीउद्दौला को मोतियों की माला पहना स्वागत किया, सिर पर ताज रखा और रत्नजड़ित तलवार हाथों में थमा सम्राट बना दिया । बादशाह की जय–जयकार से दरबार ध्वनित-प्रध्वनित हो उठा ।

रफीउद्दौला ने ताज धारण कर गौरवपूर्ण दृष्टि उपस्थित दरबारियों पर डाली। दृष्टि घूमती हुई हुसेन अली पर आ टिकी, क्योंकि हुसेन अली अपने स्थान पर बैठने के लिए मुड़ चुका था। हुसेन को अपने बैठने के पूर्व बैठते देख बादशाह का माथा ठनका। यद्यपि रफीउद्दौला तहखाने से बाहर निकाल कर सम्राट के पद पर बैठाया गया था, तथापि आवश्यक शिष्टाचारों से अनभिज्ञ न था। हुसेन द्वारा उसे अपना अपमान असह्य हो उठा, पर अपनी दुर्बल स्थिति के कारण क्रोध व्यक्त करना उचित न समझा और अपमान के प्रतिशोध का अनूठा ढङ्ग निकाला; दाहिना पैर हुसेन के आगे बढ़ा बादशाह ने कहा—"पैर के नाखून में बड़ी खुजली मच रही है, जरा मोजा तो उतार दीजिए।"

हुसेन अली इस अप्रत्याशित स्थिति के लिए तैयार न था। उठकर तो हुसेन खड़ा हो गया; मगर बादशाह का पैर पकड़ मोजा उतारना उसके स्वभाव के विरुद्ध था। हुसेन की झिझक को ताड़ अब्दुल्ला ने कहा—"बादशाह जमीन पर दूसरा खुदा होता है हुसेन भाई।"

"बादशाह की बेइज्जती खुदा की बेइज्जती होती है।" रतनचन्द ने अब्दुल्ला खाँ की बात का समर्थन किया।

हुसेन अली किंकर्तव्य विमूढ़-सा खड़ा मान–अपमान की भावना-तरङ्ग के साथ तरङ्गायित हो रहा था।

"बड़ों की इज्जत करने में ही हमारी इज्जत है। खुदा की खिदमत करने में कोई छोटा नहीं हो जाता।" अब्दुल्ला ने हुसेन की झिझक दूर करने की कोशिश की।

रतनचन्द का तो अब्दुल्ला की हां–में-हां मिलाना काम ही था, वह बोला—"दूसरों की खिदमत करने वाला ही खुदा को सबसे ज्यादा प्यारा होता है।"

खाँ साहब और रतनचन्द के कथनों का कुछ ऐसा सामूहिक प्रभाव

पड़ा हुसैन अली पर कि हुसैन का हाथ बादशाह के पैर की ओर बढ़ गया। हुसैन का हाथ बादशाह के पैर को भली भाँति स्पर्श भी न कर ने पाया था कि बादशाह ने पैर पीछे खींचते हुये कहा—"रहने दीजिए, खुशी खत्म हो गयी।"

सय्यद हुसैनअली अपमान का घूँट पीकर अपनी जगह पर धम्म से बैठ गया।

अब्दुल्ला खाँ ने बादशाह को सम्बोधित कर कहा—"हुजूर थक गये होंगे, अब जाकर आराम फरमायें।"

रफीउद्दौला उठ कर चला गया।

बादशाह का जाना था कि हुसैन तनफनाया—"मुझे यह बेहूदगी जरा भी पसन्द नहीं। आप भी न जाने कैसे जाहिलों की गुलामी करना पसन्द करते हैं।" अब्दुल्ला को सम्बोधित कर कहा जा रहा था--"पैर के जूते को सिर पर रखना कोई अक्लमन्दी नहीं है। गधों को इज्जत बख्शने से खुदा खुश कभी नहीं हो सकता।"

"हुसैन भाई हमेशा अक्खड़पन से काम नहीं चलता; कभी-कभी तो अक्ल का सहारा लिया करो।"

"तो आप मुझें बेवकूफ समझते है?" हुसैन की आँखों से क्रोध प्रकट होने लगा था। स्वर में तेजी थी। हाथ तलवार की मूँठ पर जा पहुँचा था।

परिस्थिति की गुरुता को ध्यान में रख अब्दुल्ला ने आवश्यकता से अधिक विनम्र स्वर में कहा—"भाई हुसैन, हर वक्त जोश से काम नहीं लेना चाहिए। दरबारी अदबकायदों के मुताबिक सुलूक करना चाहिए। गल्ती तुम्हारी थी हुसैन, बादशाह के बैठने के पहले बैठने की गल्ती की थी। तुमने तख्तनशीनबादशाह की इससे ज्यादा बेइज्जती क्या हो सकती थी। कुछ देर बाद अगर अपनी गल्ती मालूम हो जाय तो मान लेने में कोई शान में फर्क नहीं आता।"

"मैं इन सब बातों का आदी नहीं हूँ; बादशाह को समझा दीजिए-गा, आइन्दा फिर कभी ऐसे पेश न आएं मेरे साथ।" हुसैन [illegible] दे दरबार से चल दिया।

लक्ष्मी परदे के पीछे सांस रोके भाइयों के वाद-विवाद के परिणाम की प्रतीक्षा कर रही थी। हुसैन के वास्तविक स्वरूप का परिचय प्राप्त कर लक्ष्मी मन-ही-मन सोच रही थी—"लक्ष्य प्राप्ति अति सरल है।"

३०

रफीउद्दौला समझदार था, महत्त्वाकांक्षी था ; पर, अफीम की मात्रा इतनी अधिक बढ़ चुकी थी कि वह अफीम के बिना एक क्षण भी नहीं रह सकता था। तहखाने के निवास के दिनों में पहरे पर एक अफीमची नियुक्त कर दिया गया था। उसी अफीमची ने शहजादे रफीउद्दौला को अफीम का इस सीमा तक गुलाम बना दिया था कि एक दिन नशे की झोंक में सैय्यद भाइयों को अनाप-सनाप बक डाला। कुछ खुशामदी पास बैठे बादशाह को पानी पर धरते रहे और मन-ही-मन खुश होते रहे।

अब्दुल्ला तक को बादशाह द्वारा व्यक्त बातों से अवगत होते देर न लगी। हुसेन भी उस समय अपने भाई के साथ उपस्थित था जब गुप्तचर सम्राट की स्वेच्छाचारिता का परिचय दे रहा था। हुसेन ने तड़प कर कहा—"मैं कहता हूं, आप इस अफीमची को ठिकाने क्यों नहीं लगा देते ?"

"अफीम उसे खुद ठिकाने लगा रही है।"

"दूसरों का सहारा बुजदिल लेते हैं। मैं खुद अभी जाकर....

उठते हुए हुसेन का हाथ पकड़ अब्दुल्ला ने गुप्तचर की ओर देख कहा— 'अफीम की मात्रा काफी बढ़ा दी जाय।"

"जो हुक्म।" गुप्तचर तत्काल आवश्यक शिष्टाचार व्यक्त करता हुआ चला गया।

"आप वक्त की कीमत नहीं जानते। जो काम एक लहमें में हो

सकता है, उसके लिए आप महीनों वक्त बरबाद करते हैं।"

"सल्तनत के झंझट ऐसे ही होते हैं हुसैन भाई। इनके लिए काफी समझ से काम लेना पड़ता है।"

"आप अपनी समझदारी अपने पास ही रखिये। बिना वजह वक्त बरबाद करना मुझे कतई पसन्द नहीं।"

इसी समय रतनचन्द के आगमन की सूचना मिली। रतनचन्द के प्रवेश की अनुमति अब्दुल्ला द्वारा व्यक्त होते ही हुसैन ने उठते हुए कहा—"आज शाम तक पहुँच जाना चाहिए।"

रतनचन्द अगर बगल न हो जाता तो हुसैन की टक्कर खाये बिना वह न रहता। रतनचन्द ने मुस्कराते हुए प्रवेश किया और सम्मान व्यक्त कर आसन ग्रहण करते हुए प्रश्न किया—" क्या पहुँचाना है हुजूर को?"

"जवाहरात।"

"जवाहरात!" सुन कर चौंक पड़ा रतनचन्द—"छोटे खां साहब को जवाहरातों का शौक कब से हो गया?"

"यही तो मैं भी काफी देर से सोच रहा हूँ कि यह सनक कहां से सवार हो गई इसे?"

"हुजूर, अगर बुरा न मानें, तो अर्ज करूँ?"

"कहो रतनचन्द, तुम्हें भी कुछ कहने-सुनने के लिए इजाजत की जरूरत है?"

"दरअसल बात यह है हुजूर कि लक्ष्मी के रङ्ग-ढङ्ग इधर कुछ मेरी समझ में नहीं आ रहे हैं।"

"क्यों, ऐसा कौन-सा कदम उठाया है उसने?"

अभी तो नहीं उठाया है शायद, मगर नामुमकिन नहीं है।"

"क्यों; लक्ष्मी के बारे में ऐसी बात क्यों आई तुम्हारे दिमाग

में ?"

"शायद, हुजूर ने गौर फरमाया हो कि लक्ष्मी पहले तो काफी दिनों तक बीमार होने का बहाना किए रही........।"

"बीमार होने का बहाना किये रही ?" बीच में ही अविश्वास-सा प्रकट किया खां साहब ने।

"जी हाँ, वह बीमार-बीमार कुछ न थी, सिर्फ बहाना था उसका वह सब।"

"पर तुम्हीं तो मेरे पूछने पर उसकी बीमारी की खबर दिया करते थे ?"

"जी हाँ, जो मैं देखता था, हुजूर के सामने बयान कर देता था।"

"क्या बीमारी की बाबत कभी जानकारी हासिल करने की कोशिश नहीं करते थे ?"

"पूछने की कोशिश तो बहुत करता था, मगर वह मगरूर न जाने अपने को क्या समझे बैठी थी, कभी सीधे मुंह बात ही न करती थी।"

"तो उसके बात न करने का मतलब तुमने उसका बीमार होना लगा लिया था ?"

"बीमारी में ही तो इन्सान का बात करने का मन नहीं करता।"

"और इन्सान उससे भी बात नहीं करना चाहता जिस पर वह खफा होता है।"

वस्तुस्थिति स्पष्ट होते ही रतनचन्द चौंका—"तो क्या लक्ष्मी मुझ पर खफा है ?"

"हो सकता है।"

"मगर क्यों ?"

"यह तो दरियाफ्त करने पर ही जाना जा सकता है।"

"तो फिर हुजूर, इस गुलाम के लिए इतनी तकलीफ जरूर उठाइये। और हां, कोई ऐसी तरकीब निकालियेगा कि दिल खोल कर रख दे हुजूर के सामने।"

"कोशिश तो करूँगा ही, मगर लक्ष्मी बड़ी नेक औरत है। आप उसकी बावत अपने दिल से मलाल निकाल दीजिए।"

"इसी का तो सख्त अफसोस है कि हुजूर मैं लक्ष्मी को अपनी बेटी की तरह मानता हूँ; और वह है कि मुझे फूटी आखों भी नहीं देखना चाहती।"

"ऐसी धारणा तुमने उसकी बावत कैसे बना ली।"

"उसी के शब्द तो हुजूर के सामने पेश कर रहा हूं।"

"ऐसा कहा है लक्ष्मी ने ?"

"जी हां, आज सुबह ही तो मैं उससे मिलने गया था। मैंने बहुत कोशिश की कि एक सगे बाप की तरह उसका हाल-चाल जानूँ; मगर, उसने मेरे एक भी सवाल का ठीक से जवाब न दिया। जैसे-जैसे मैं अपनापन जाहिर करने की कोशिश कर रहा था, उसका दिमाग सातवें आसमान पर चढ़ता चला जा रहा था, और आखिर में उसने यहाँ तक कह दिया कि उसे मेरी शक्ल से सख्त नफरत है; मुझे वह फूटी आखों भी नहीं देखना चाहती।"

"ऐसी वह मालूम तो नहीं देती कि आप के साथ इस कदर बेजा पेश आये। खैर, आप फिक्र न कीजिए, मैं उसे समझा दूँगा।"

"जरा कुछ ऐसी डांट बताइयेगा कि अपनी असलियत का अहसास एक बार उसे हो जाय।"

खाँ साहब ने, अनुभव किया कि लक्ष्मी ने काफी बुरा-भला कहा होगा रतनचन्द को सहानुभूति व्यक्त की—"सख्त अफसोस है

जो वह आपके साथ ऐसे पेश आई ; बस, उसे आने भर दीजिए, ऐसी खबर लूँगा कि दिमाग ठिकाने आ जायेंगे।"

बड़ी राहत मिली रतनचन्द को ; चिन्ता-मुक्त हो अपनी सामान्य धारणा व्यक्त की—"हुजूर, जमाना इतना खराब आ गया है कि जिसे अपनाने की कोशिश करो, वही काटखाने को दौड़ता है ; जिसे दूध पिलाओ, वही अस्तीन का सांप साबित होता है ; जिसकी दु:ख में मदद करो, वही आखें दिखाता है ; जिस किसी पर विश्वास करो, वही जड़ काटने पर उतारू हो जाता है। हुजूर, समझ में नहीं आता, इस दुनिया का क्या होगा।"

"रतनचन्द, यह दुनियाँ हमेशा से ऐसी ही रही है। हर जमाने के लोग तुम्हारी ही तरह शिकायत करते रहे हैं। अपने जमाने को कोसना और गुजरे जमाने की तारीफ करना इन्सान का स्वभाव है। जमाने की बावत ज्यादा सोचना-विचारना फिजूल है। हर इन्सान की अपनी-अपनी डफली है, अपना-अपना राग है। किस-किस के लिए रोते फिरेंगे ? जिस पर निगाह डालियेगा, वही अजीब नजर आयेगा। खुदा की खुदाई बड़ी अजीबो-गरीब है रतनचन्द। अपने को देखो—अपने को पहचानो—बस, यही खुदा चाहता है ; और बन सके तो किसी के दिल को न दुखाओ।"

"इसी का ख्याल करते-करते तो यह नौबत आ पहुँची है कि लोगों की बद्दुआयें मिल रही हैं।"

"लक्ष्मी को आप उसी नजर से देखते रहे; आइन्दा कभी बेजा पेश नहीं आने पायेगी।"

पूर्णतया आश्वस्त होने के उपरान्त सेठ ने नत सिर हो कृतज्ञता व्यक्त की—"हुजूर की सिर्फ नजरे इनायत चाहिये गुलाम को।"

३१

लक्ष्मी को बाहर जाने के लिए तैयार होता देख रामदास ने टोका
'कहाँ चली सुबह-सुबह ?"

"थोड़ी ही देर में आ जाऊँगी बापू ।" वस्त्र धारण करने के उपरान्त आभूषण उठा अपने को अलंकृत करते हुए लक्ष्मी ने उत्तर दिया ।

"यह तू हमेशा कह कर जाती है, पर, आजकल तेरा दिन—दिन भर पता नहीं रहता; न जाने कहाँ रहती है, न खाने की सुध, न आराम की फिकर । इतनी मेहनत करेगी तो जरूर एक-न-एक दिन बीमार पड़ जायेगी ।"

"तुम भी तो बापू, दिन-दिन भर इस उम्र में भी मेहनत करते-रहते हो, बीमार नहीं पड़ जाओगे ?" कानों में हीरे के कुण्डल पहनते हुए लक्ष्मी ने कहा ।

"गरीब भी कहीं बीमार पड़ता है ? बीमारी को चाहिए आराम और बढ़िया—बढ़िया खाना, गरीब के पास यह सब कहाँ ?"

"बापू ! तुम्हारी लक्ष्मी को तो कोई गरीब कहता नहीं; तुम अपने को गरीब क्यों समझते हो ?" सबसे सुन्दर और बहुमूल्य हार को हाथ में ले दृष्टिगत करते हुए कहा ।

"बेटी ! हर बाप गरीब ही होता है । बाप और गरीबी का चोली दामन का सम्बन्ध है । कभी बेटी का कोई गरीब बाप भी कहीं

अमीर बन सका है ?"

रामदास के कथन में निहित गम्भीर सत्य से अनुप्राणित हो लक्ष्मी बापू के पास जा नेत्रों में झाँकते हुए अत्यन्त स्नेहसिक्त वाणी में बोली —"बापू ! कभी-कभी कितनी मार्मिक बात कह डालते हो।"

रामदास ढीली चारपाई को कस रहा था । रस्सी हाथ से छोड़ खड़े हो चाहा कि बेटी को सीने से लगा जी भर प्यार कर ले; मगर इस भय से पीछे हट गया कि कहीं लक्ष्मी के वस्त्र न गन्दे हो जाँय। बाप को झिझकते देख लक्ष्मी ने पूछा - "क्या हो गया बापू ?"

"कुछ नहीं बिटिया; सोचा, कहीं तेरे कपड़े न खराब हो जाँय।"

"बापू।" कहकर लक्ष्मी बापू के सीने से कस कर चिपट गई। बाप के शरीर को अपनी बाहों में कसे हुए ही मुँह ऊपर उठा कहा — "बापू।"

"क्या है लक्ष्मी ?"

"अब तुम मेरे सिर पर हाथ फेर कर प्यार नहीं करते ?"

रामदास का हाथ बिना प्रयास किये ही लक्ष्मी के सिर पर जा पहुँचा। हल्के-हल्के बालों के अनुकूल हाथ फेरते हुए रामदास बोला "बाप बेटी को प्यार करना कभी नहीं छोड़ता; हाँ बेटी जरूर कभी-कभी बाप को पराया समझने लगती है।"

इधर लक्ष्मी कई दिनों से इतनी व्यस्त रहती थी कि किसी-किसी दिन तो सुबह की निकली काफी रात गये लौटती थी; और, एक रात तो लौट भी न सकी थी। बापू के वाक्य में निहित प्यार भरे उलाहने की सत्यता को अनुभव कर अपराधपूर्ण स्वर में बोली " बापू फिर कभी इतनी देर न होगी।"

लक्ष्मी को देर भी तो हो रही थी; शीघ्र पहुँचना था। परिणाम जानने की उत्सुकता इतनी प्रबल थी कि रात भर ठीक से सो न

सकी थी। स्नेह भरी दृष्टि से रामदास को देखती हुई दूर होने लगी। जाती हुई लड़की को दृष्टि से ओझल होने के पूर्व ही रामदास ने कहा —"मैं यहीं पर तुम्हारा इन्तजार करूंगा लक्ष्मी।"

"अच्छा बापू।" दूर से आवाज आई।

सवारी पहले से ही तैयार खड़ी थी; लक्ष्मी को ले चल दी।

हुसेन खां कपड़े पहन चुका था, कमर में तलवार बांधी जा रही थी। लक्ष्मी को अभिवादन करता देख हुसेन ने रूखे स्वर में प्रश्न किया · "फिर आ गई तू?"

"हुजूर, शायद कहीं जाने की तैयारी में हैं?"

"हां, तेरा मतलब?"

"कुछ नहीं, यों ही रतनचन्द की बाबत कुछ इत्तिला देनी थी हुजूर को ·····।"

"क्या कहना है?"

"हुजूर को जवाहरात तो मिल ही गये होंगे?"

"नहीं; वही तो वसूल करने जा रहा हूं।" स्वर में कठोरता थी हुसेन के।

"इसमें रतनचन्द का हाथ है।"

"मतलब?"

समझाया लक्ष्मी ने—"खां साहब तो जवाहरात हुजूर की खिदमत में भेजने को तैयार थे; मगर सेठ रतनचन्द ने ही उन्हें वैसा करने से रोक दिया है।"

"नामुमकिन; रतनचन्द, तो खुद ही एक दिन बहुत से जवाहरात देने आया था। वह क्यों रोकने लगा भाई साहब को?"

लक्ष्मी अभी तक सोचती थी कि रतनचन्द केवल बड़े खां साहब को ही खुश करने की चेष्टा करता है, हुसेन अली के पास नहीं आता; पर रतनचन्द से हुसेन को भी प्रभावित समझ एक क्षण के लिए लक्ष्मी सहमी और स्वनिर्मित षड्यन्त्र में स्वयं फंसती अनुभव कर परिणाम

की कल्पना से सिहर उठी। हुसेन पूर्णतया तैयार हो चुका था, सिर्फ अपने कथन की प्रतिक्रिया लक्ष्मी द्वारा सुनने के लिये रुका था। तत्काल अपने को प्रकृतिस्थ कर लक्ष्मी ने स्वाभाविक स्वर में कहा—"हुजूर, सेठ की चाल से अभी वाकिफ नहीं हैं। वह नहीं चाहता कि उसके और खाँ साहब के बीच में तीसरा कोई आये। वह खाँ साहब को अपनी मुट्ठी में भर कर अपनी हर बात मनवाना चाहता है।"

"मगर इससे जवाहरातों का क्या ताल्लुक ?"

हुसेन के छोटे से प्रश्न से लक्ष्मी को फिर झकझोर दिया। जब कोई उत्तर समझ में न आया तो लक्ष्मी ने कह दिया—"हुजूर तो जा ही रहे हैं, कुछ ही देर में सेठ की चाल से हुजूर खुद-ब-खुद वाकिफ हुए बिना न रहेंगे।"

"और अगर तेरी बात गलत साबित हुई तो····· ?"

हुसेन के कथन के पूर्ण होने के पूर्व ही गरदन झुका लक्ष्मी ने कहा 'सिर हाजिर है।"

"जब तक मैं वापस न आऊँ, तू यहीं रह।"

हुसेन का घोड़ा बाहर तैयार खड़ा था। हुसेन के सवार होते ही घोड़ा सरपट राज मार्ग पर दौड़ने लगा।

सैय्यद अब्दुल्ला खाँ के जीवन में तो सिर्फ दो ही काम रह गये थे, मदिरा पान करना और सुन्दरियों के मध्य विहार करना। हुसेन के आगमन का समाचार प्राप्त होते ही कक्ष की सारी रौनक सहसा गायब हो गई। भाई के स्वागतार्थ खाँ साहब सम्हल कर बैठ गये। हुसेन ने प्रवेश करते ही सवाल किया—"जवाहरात नहीं भेजवाये आपने ?"

"जवाहरात नहीं मिले ··· ?"

"आपने भेजे थे ?"

"रतनचन्द से तो कह दिया था।"

"हूँ, तो यह सब उस बनिये के बच्चे की कारस्तानी है।" लक्ष्मी

के कथन की सत्यता की अनुभूति हुई हुसेन को। बिगड़ कर बोला वह —"देखिये, भाई साहब, आपने उसे जरूरत से ज्यादा मुँह लगा रखा है, मगर मैं यह कतई बरदास्त नहीं कर सकता कि वह मेरे और आपके दरम्यान आये। सूरज डूबने के पहले ही दो मन जवाहरात मेरे पास पहुँच जाने चाहिए।"

रात भर में ही जवाहरातों की माँग दूनी सुन जवाहरातों का मोह अब्दुल्ला के स्वर में फूट पड़ा—"क्या करोगे इतने जवाहरात लेकर····· ?"

"भाड़ झोकूँगा। जवाहरातों के लिए मुझे दुबारा न आना पड़े" अन्तिम आदेश दे हुसेन कक्ष के बाहर हो गया।

लक्ष्मी जीवन और मृत्यु के हिंडोले में बैठी डोल रही थी। तरह-तरह के विचार उसके मस्तिष्क में आ–जा रहे थे। हुसेन के आगमन का संकेत पा उसके भय मिश्रित आश्चर्य की सीमा न रही। खाँ साहब के महल तक इतनी देर में जा काम समाप्त कर कोई वापस भी आ सकता है, लक्ष्मी की कल्पना के परे था। सांस रोक हुसेन के प्रवेश की प्रतीक्षा करने लगी। सहसा कानों में स्वर ने प्रवेश किया—"जा भग ! जा।"

हुसेन की ओर विना देखे ही झुक कर सलाम बजाती हुई कक्ष के बाहर निकल लक्ष्मी ने साँस ली। ऐसा अनुभव हुआ जैसे मौत के मुँह में जा लौट आई हो। तत्काल लम्बे-लम्बे डग रखते हुए डोली की ओर इस भय से बढ़ो कि कहीं फिर पुकार न ली जाय।

३२

अफीम ने अपना काम दिखाया और रफीउद्दौला इस संसार से उठ गया। सिंहासन को खाली पड़े रहने का प्रश्न ही न उठता था जब तहखाने उत्तराधिकारियों से भरे पड़े थे। इधर रफीउद्दौला का मरना था, उधर तहखानों में चहल-पहल शुरू हो गई। किसी को पदध्वनि ने सचेत किया तो किसी को कंठस्वरों ने। कोई-कोई तो धक्का देने पर भी बिना आंख खोले ही 'ऊँ' कर रह गये। काफी देर तक खोज-बीन होती रही, पर दल के नेता दिलावरखाँ को कोई भी शाहजादा उपयुक्त न जँचा। वह खाली हाथ लौट आया और खाँ साहब की उपस्थिति में सूचित किया—"हुजूर, एक भी शाहजादा बादशाह बनने के काबिल नहीं है।"

सहसा खाँ साहब का पारा गर्म हो गया। उन्होंने कहा—"काबिल ही होते तो क्या तहखानों में सड़ते? जाओ, किसी को भी पकड़ ले आओ।"

दिलावर खाँ का दल पुनः तहखानों में जा पहुँचा। दिलावरखाँ सरदार था। खाँ साहब की अपेक्षा उसे हुसेन की कृपा दृष्टि अधिक प्राप्त थी। वह न जानता था कि सैय्यद बन्धुओं का अयोग्य बादशाह के गद्दी पर बैठने में ही हित है। परिचय तो सबका प्राप्त हो ही चुका था। उन्हीं में से प्रत्येक को बादशाह की कसौटी पर कसता हुआ एक तहखाने में प्रवेश किया उसने। औरंगजेब के पुत्र बहादुरशाह के चौथे पुत्र जहांनशाह के पुत्र रौशन अख्तर से दिलावर खाँ ने निवेदन किया—"चलिये, आपको खां साहब ने याद फरमाया है।"

"रफीउद्दौला जिन्दा है या मर गया?"

"वह तो सुबह ही खुदा के प्यारे हो गये।"

"तो फिर चलो।"

रौशन अख्तर उन शाहजादों में था जो बाहरी गतिविधियों की भी खबर रखने का प्रयास करता था। रौशन अख्तर अठारह वर्ष का नौजवान शाहजादा था। रगों के खून में ताजगी और गर्मी थी। अन्य शाहजादों की भाँति किसी अहितकर वस्तु का गुलाम भी न था वह। तहखानों में रह कर भी उसने अपना अध्ययन जारी रखा था। पिता जहांनशाह की वीरता भी उत्तराधिकार में प्राप्त की थी उसने। खूबसूरत नौजवान को आपादमस्तक देख खाँ साहब ने कहा—"खूब! क्या नाम है?"

"रौशन अख्तर।"

"शराब का शौक है?"

"नहीं।"

"अफीम का?"

"नहीं।"

"तलवार कभी पकड़ी है?"

"यह क्या तलवार लटक रही है।" कमर से लटकती तलवार की ओर संकेत किया रौशन ने।

"चलाना भी जानते हो इसे?"

"जी हाँ।" कहते ही तलवार म्यान से बाहर निकल आई—"है कोई बहादुर, जो....।"

"बहादुर हो—बहादुर हो, रख लो तलवार म्यान में।"

रौशन की तलवार म्यान में चली गई। खाँ साहब ने उठकर वही हार, जिसने दो शाहजादों को बादशाह बनाया था, रोशन के गले में डाल दिया और गर्वोक्ति प्रकट की—"आज से आप हिन्दुस्तान के अबुलफजल, नसीरुद्दीन, मुहम्मदशाह, बादशाह गाजी हुये।"

शहंशाहे हिन्द" की जय-जयकार से वातावरण ध्वनित-प्रध्वनित होने लगा।

शाहजादा अख्तर को मुहम्मद शाह के नाम से सम्राट के पद पर आसीन करा अब्दुल्ला अपनी दिनचर्या में डूब गये।

हुसेन खाँ को यद्यपि दो मन जवाहरात प्राप्त हो गये थे, पर, उसके कहने पर सेठ रतनचन्द को न तो किसी प्रकार की सजा दी गई थी और न अब्दुल्ला खाँ ने सम्बन्ध ही विच्छेद किया था। रतनचन्द के खाँ साहब के महल में पूर्ववत् आने-जाने का समाचार दिलावर खाँ द्वारा हुसेन को मिलता रहा। हुसेन ने बड़े भाई से मिलना-जुलना छोड़ अपने ही महल में आराम करना प्रारम्भ कर दिया था। अब्दुल्ला खाँ अपने छोटे भाई को एक अक्खड़ सिपाही के अतिरिक्त कुछ समझते न थे। इधर शान्त स्थिति चल रही थी। अब्दुल्ला को हुसेन की कोई विशेष आवश्यकता भी न थी।

फर्रुखसियर के पतन के साथ ही, जो सैय्यद बन्धुओं के विरोधी इधर-उधर खिसक गये थे या निष्क्रिय जीवन बिता रहे थे, मुहम्मदशाह के सम्राट बनते ही सक्रिय हो उठे। इनमें प्रमुख थे निजामुल्मुल्क, मुहम्मद अमीन खाँ, इतमादुद्दौला, सआदत खाँ, अम्बर नरेश जयसिंह और जोधपुर के राजा अजीत सिंह।

अठारहवीं शताब्दी के मुसलमान मुख्यतः तीन भागों में विभक्त थे—(१) मुगल, (२) अफगान (३) हिन्दुस्तानी।

मुसलमान के उस वर्ग को जिसे हिन्दुस्तानी मुसलमान समझा जाता जाता था, सैय्यद बन्धुओं का नेतृत्व प्राप्त होने के कारण विशेष शक्तिशाली समझा जाता था। इस वर्ग को सामान्य जनता की सद्भावना प्राप्त थी। सर्व साधारण जन मुगलों तथा अफगानों की भाँति इन्हें विदेशी नहीं समझते थे।

सैय्यद बन्धु अपने को अब्दुलफराह का वंशज बतलाते थे, जो

मेसोपोटामिया में वसीत आदि का निवासी था। फराह निर्भीक, साहसी तथा महत्वाकांक्षी सैय्यद था। कई शताब्दी पूर्व आकर वह पटियाला में बस गया था। सैय्यद भाइयों के पिता सैय्यद अब्दुल खाँ मियाँ औरङ्गजेब के शासन-काल में बीजापुर तथा अजमेर का सूबेदार रहा था। औरङ्गजेब के मीर बख्शी रुहुल्लाह खां की सैय्यद मियाँ पर विशेष कृपा दृष्टि रहती थी। सैय्यद मियाँ ने अपनी सेवा, लगन और योग्यता के बल पर शाही मनसब प्राप्त कर लिया था। और शहजादा मुहम्मद मुअज्जम शाह आलम की व्यक्तिगत सेवा में आ गया था। सैय्यद मियाँ के दोनों पुत्र हसन और हुसैन ने पिता के संरक्षकत्व में अपनी शारीरिक और बौद्धिक शक्ति का विकास करना प्रारम्भ कर दिया था। यदा-कदा अवसर पड़ने पर दोनों अपनी-अपनी क्षमताओं का परिचय देने में भी न चूकते थे। एक बार शाह आलम ने हसन के बौद्धिक चातुर्य से प्रसन्न होकर उसे 'अब्दुल्ला खाँ' की उपाधि से विभूषित किया। बस, तभी से हसन अब्दुल्ला खां के नाम से जनप्रिय होते गये।

दोनों भाई अति महत्वाकांक्षी थे। १६९७ में अब्दुल्ला को खान देश में फौजदार का पद प्रदान किया गया था। कुछ दिन बाद वह इसी पद पर औरङ्गाबाद भेज दिये गये। छोटा भाई हुसेन अभी इसी पद पर अजमेर तथा आगरे के प्रान्तों में साम्राज्य की सेवा करता रहा। १८ जून १७०७ में इन दोनों भाइयों ने जाजऊ के युद्ध में शाहजादा मुअज्जम की ओर से युद्ध किया और इन्हें ३००० तथा २००० का पद प्राप्त हो गया। साम्राज्य के प्रति अटूट सेवा के परिणामस्वरूप अजीमुश्शान ने आगे चलकर १७११ ई० में अब्दुल्ला खाँ को इलाहाबाद और हुसेन खां को बिहार का प्रान्तपति नियुक्त कर दिया। तत्पश्चात् दोनों भाइयों ने फर्रुखसियर को भारत का सम्राट बनने में सहायता की।

इस दीर्घ कालीन, 'साम्राज्य-सेवा' ने उन्हें भारतीय आत्मा को समझने का विशेष अवसर प्रदान किया था। हिन्दुओं पर मुगल शासकों के अत्याचारों ने उनके हृदयों में हिन्दू प्रजा के प्रति करुणा का बीज बो दिया था, जो अनुकूल वातावरण पाते ही सद्भावना के रूप में अंकुरित हो उठा। हिन्दुओं पर लगाए गये घृणित जजिया आदि करों को समाप्त कर दिया, जिससे मुसलमानों का वह वर्ग, जिसे भारतीय जनता अब भी विदेशी मुगल समझती थी, सैय्यद भाइयों से अत्यधिक नाराज था। उस वर्ग का नेतृत्व प्राप्त था मुहम्मद अमीन खाँ को। मुहम्मद अमीन खाँ सैय्यद भाइयों का परम विरोधी था; और सदा वह ऐसे अवसरों की ताक में रहता था, जो सैय्यद के विरोधी हों और उनके पतन के कारण सिद्ध हो सकें।

फर्रुखसियर की यद्यपि मुहम्मद अमीन खाँ ने भरसक सहायता की तथापि फर्रुखसियर का पतन हो ही गया और सैय्यदों की शक्ति और चातुर्य के समक्ष वह दाँत पीसता–हाथ मलता रह गया। फर्रुखसियर के पश्चात् सम्राट के पद को ग्रहण करने वाले दो शासक इतने दुर्बल और आकांक्षाहीन थे कि मुहम्मद अमीन चाह कर भी कुछ न कर सका। मुहम्मद शाह के सम्राट बनते ही मुहम्मद अमीन खाँ ने, अपने अनुकूल 'कुछ कर' सकने का अवसर समझा। एक तो मुहम्मद शाह शरीर से स्वस्थ, दृढ़ निश्चयी, अदम्य उत्साही और महत्वाकाँक्षी शाहजादा था; और, दूसरे मुहम्मदशाह की मा मुहम्मद अमीन की रिस्ते में बहिन लगती थीं।

दीर्घ काल से जिस अवसर की प्रतीक्षा में वह था, उसे उपस्थित समझ वह सक्रिय हो उठा।

निजामुल्मुक की सैय्यदों से पहली टक्कर शाहजादा मुअज्जम के समय हुई थी। निजामुल्मुल्क मुअज्जम का मुँह चढ़ा सरदार था

पर शहजादे को सैय्यदों से प्रभावित होते ही उसका शाहजादे की दृष्टि में वह महत्त्व न रह गया; परिणामतः सैय्यद उसकी आँखों में खटकने लगे। उसके बाद दोनों में काफी तनाव बढ़ता चला गया। तनाव का चरम रूप अजीमुश्शान के शासन काल में देखने को मिला। दरबार में सम्राट के ही समक्ष निजामुल्मुल्क और सैय्यद भाइयों की तलवारें म्यान के बाहर निकल आई थीं और शक्ति का निर्णय होने ही वाला था कि अजीमुश्शान की चोट ने वह तूफान पैदा नहीं होने दिया, जिसकी कल्पना मात्र से दरबारी कांप उठते थे। अजीमुश्शान ने दोनों को ही दूर-दूर के प्रान्तों का शासक बना दरबार से दूर कर दिया था। फर्रुखसियर के शासन काल में निजामुल्मुल्क ने दिल्ली आने की भरसक चेष्टा की; पर सैय्यदों की चाल के सामने उसकी एक भी न चली और मालवे में ही पड़ा रहना पड़ा। मालवे में पड़ा रहना उसके स्वभाव के विरुद्ध था। महत्वाकांक्षी व्यक्ति के लिए अपने स्वभाव के विपरीत आचरण करना मृत्यु के समान होता है; फलतः तथा कथित सम्राटों की अनुमति के विरुद्ध ही उसने दक्षिण के लिए कूच कर दिया। निजामुल्मुल्क के दक्षिण प्रस्थान की सूचना पा सैय्यदों ने अपने विश्वासी सेनापति दिलावर खाँ को स्वेच्छाचारी निजामुल्मुल्क की प्रगति रोकने के लिए भेजा। दिलावर खाँ पड़ाव-दर-पड़ाव लांघता निजामुल्मुल्क के रास्ते में चट्टान बन अड़ गया जाकर। पर, निजामुल्मुल्क की शक्ति का वेग इतना प्रबल था कि दिलावर खाँ टुकड़े-टुकड़े हो बिखर गया।

दिलावर खाँ के पराजित होने का समाचार पाते ही हुसेन अली तनफनाता हुआ भाई के महल पर आ धमका और भाई की अदूरदर्शिता के परिणाम से परिचित कराते हुए कहा—"सुना आपने; निजामुल्मुल्क ने दिलावर खाँ को मार डाला। मैं कहता था आपसे कि मुझे जाने दीजिए; पर, आप कोई कम जिद्दी थोड़े ही हैं जो

मेरी बात मान जाते।"

"दिलावर खाँ के मारे जाने का निहायत अफसोस है मुझे; मगर दिल्ली छोड़ना तुम्हारा न तो तब खतरे से खाली था और न अब है। तुम्हें तो बता ही चुका हूँ कि बादशाह की मा से मिलकर मुहम्मद अमीन खां बादशाह को हमारे खिलाफ भड़का रहा है और आज सुबह ही खबर मिली है कि औरङ्गजेब के चौथे शहजादे मुहम्मद अकबर बड़े शाहजादे नकूसियार ने आगरे में शाही हुकूमत के खिलाफ बगावत का एलान कर दिया है।"

"आगरे आप और किसी को भेज दीजिये। मैं दक्षिण के लिये आज ही रात कूँच करना चाहता हूँ।"

"दक्षिण की फिक्र फिलहाल तुम न करो। मैं आलिम अली को लिखे दे रहा हूँ, वह तुम्हारे बीबी-बच्चों की हिफाजत करता रहेगा और निजामुल्मुल्क को भी ताकत भर शिकस्त देने की कोशिश करेगा। आगरे तुम्हारा जाना निहायत जरूरी है, वरना बादशाह मुहम्मद अमीन खाँ को भेज देगें।"

"भेजने दो अमीन खां को, निजामुल्मुल्क को जहन्नुम पहुँचाये बिना मैं चैन से नहीं बैठ सकता।"

"कुछ ही दिनों की तो बात है हुसेन भाई। तुम पहले आगरे चले जाओ; वहाँ काफी बड़ा खजाना है पुरानी दौलत भरी पड़ी है उसमें। मुझे डर है कहीं वह खजाना मुहम्मद अमीन के हाँथ न लग जाय।"

बड़े भाई का प्रार्थनापूर्ण स्वर सुन हुसैन ने अपना निर्णय परिवर्तित कर आगरे जाने की स्वीकृति दे दी—"अच्छा; पहले आगरे ही जा रहा हूँ।"

अब्दुल्ला ने प्रसन्न हो भाई को छाती से लगा लिया।

३२

इस बीच एक अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना घट गई । रतनचन्द जो लक्ष्मी को अपने उद्देश्य-पूर्ति का साधन बनाने की चेष्टा कर रहा था; पर लक्ष्मी थी कि ज्यों-ज्यों रतनचन्द द्वारा बन्धन में फँसाई जा रही थी त्यों-त्यों रतनचन्द के प्रति घृणा से उसका मन भरता जा रहा था । अपने प्रयासों को असफल होता देख रतनचन्द को लक्ष्मी पर क्रोध भी कम न आता था; पर उसके द्वारा लाभान्वित होने की काल्पनिक सुखानुभूति लक्ष्मी के प्रतिशोध की भावनाओं को उभरने भी न देती । लक्ष्मी की उपेक्षा रतनचन्द का सम्पूर्ण ध्यान अपनी ओर आकर्षित किये थी । लक्ष्मी की प्रत्येक गति विधि की जानकारी रखने लगा रतनचन्द । दो-तीन दिन तक निरन्तर पीछा करने के उपरान्त रतनचन्द को ज्ञान हो पाया कि लक्ष्मी हुसेन के पास भी जाती है । पहले तो रतनचन्द को विश्वास नहीं हुआ अपने गुप्तचरों की सूचना पर; पर जब लक्ष्मी को हुसेन अली की हवेली से बाहर आता देखा तो अविश्वास की तनिक भी गुंजाइश न रही । फौरन कई घटनायें मस्तिष्क में विद्युत की भाँति कौंध गई । उसके और अब्दुल्ला खाँ के मध्य में होने वाली गुप्त बातों से हुसेन के परिचित होने का साधन लक्ष्मी को ही निर्धारित कर रतनचन्द सक्रोध लक्ष्मी की ओर लपका और वाहकों को सम्बोधित किया—" रोक दो डोली ।"

डोली का बढ़ना रुक गया । रतनचन्द को सभी पहचानते थे ।

"रख दो जमीन पर ।'

रतनचन्द के दूसरे आदेश पर डोली जमीन पर वाहक रखने ही जा रहे थे कि लक्ष्मी ने अन्दर से ही आदेशात्मक स्वर में कहा-"आगे बढ़ो।"

वाहक डोली कन्धों पर सम्हाल डोलने ही वाले थे कि चारों के सिरों पर लाठियाँ टूट पड़ीं। डोली जमीन पर आ गिरी। लक्ष्मी अप्रत्याशित स्थिति देख घबरा उठी। बाहर वाहकों और सेठ के सहा— यकों के मध्य मारकाट मची हुई थी। वह कुछ भी निर्णय न करने पायी थी कि परदे के भीतर सेठ की गरदन समेत हाथ घुसा। लक्ष्मी के मन में क्षणिक विचार आया कि वह अपनी कटार से सेठ का काम तमाम कर दे; पर विचार को कार्यान्वित कर सकी निकट ही भीषण पुरुष-स्वर सुनकर—"कौन हो तुम लोग ? क्यों लड़ रहे हो ?"

तीन वाहक धराशायी हो चुके थे; केवल एक अब भी सेठ के आठों सहायकों का वीरता पूर्वक सामना कर रहा था। सहसा अप-रिचित अश्वारोही के स्वर के साथ ही उसकी तलवार के बीच में चमक उठने से सबके हाथ जहाँ-के—तहाँ रुक गये। सेठ भी आगन्तुक के स्वर की ओर आकर्षित हो चुका था। रात्रि दो घड़ी बीत चुकी थी। तारों के प्रवेश में इतनी क्षमता थी नहीं कि सेठ दूर से ही घुड़सवार को पहचान सकता; निकट जा पहचानते हुए बोला —"हैदर !"

"ओह ! सेठ रतनचन्द, आप यहां क्या कर रहे हैं ?"

"कुछ नहीं; आप अपना रास्ता पकड़िये।"

हैदरबेग दुर्धर्ष योद्धा था। हुसेन अली से भी दो-दा हाथ निपटने की दम रखता था। वह भला सेठ रतनचन्द की बन्दर घुड़की में कहां आने वाला था। तलवार तो म्यान के बाहर आ ही चुकी थी। पक्षियों में वह बाज सा टूट पड़ा। सेठ के आगे सहायक जैसे तैयार ही खड़े थे उस स्थिति का सामना करने के लिए। उनकी तलवारें हैदर की तल-वार से टकराईं हैदर को अपने आदमियों में उलझा देख सेठ लक्ष्मी की

ओर फिर उन्मुख हो लपका। लक्ष्मी की हालत विचित्र थी। अनेक बार अनेक संकल्प-विकल्प कर चुकी थी वह; पर कार्यान्वित उनमें से एक भी न कर पाई थी कि पुन: सेठ को अपनी ओर आता देखा। बीच में ही किसी संघर्ष रत-व्यक्ति का मर्मान्तक भीषण स्वर कानों में पड़ा। सेठ ने मुड़ देखा, अश्वारोही विद्युत गति से प्रहार-पर-प्रहार कर रहा था। अपने व्यक्तियों में से एक के मारे जाने का विचार आया ही था कि तब तक दूसरा भी उसी भीषण चीत्कार के साथ धराशायी होता दिखाई दिया। सेठ की घबराहट चरम सीमा पर थी। सेठ ने पालकी के भीतर हाथ डाल लक्ष्मी को पकड़ बाहर खींचना चाहा कि लक्ष्मी का ऐसे ज़ोर का धक्का लगा कि सेठ गिरते–गिरते बचा। लक्ष्मी के प्रतिरोध ने सेठ को क्रोधोन्मत्त कर दिया। पालकी में सिर डाल सेठ ने किटकिटा कर लक्ष्मी को पकड़ने का उपक्रम किया; पर, लक्ष्मी पालकी के दूसरी ओर खड़ी थी। असफल प्रयास सेठ की क्रोधाग्नि में आहुति सिद्ध हुआ। बाहर निकल पालकी के बाहर निकले डंडे के नीचे से दूसरी ओर निकल लक्ष्मी को सेठ ने पकड़ लिया। गजब की फुर्ती आ गई थी उस क्षण सेठ की गति में। सेठ ने जिस हाथ से लक्ष्मी को पकड़ अपनी ओर घसीटने का उपक्रम किया था उसी हाथ पर लक्ष्मी की कटार का प्रहार हुआ। चीत्कार के साथ सेठ की पकड़ छूट गयी और लक्ष्मी भागी। हैदर अभी सेठ के शेष चार व्यक्तियों के साथ युद्ध कर रहा था। बीच-बीच में सेठ की ओर भी देख लिया करता था। सेठ की चीत्कार ने सहसा उसके ध्यान को आकृष्ट किया तो लक्ष्मी भागती दिखाई दी। घोड़ा मोड़ हैदर ने लक्ष्मी का पीछा किया। लक्ष्मी विशेष दूर न जा पाई थी कि हैदर की आवाज उसके कान में पड़ी –"रुक जाओ; कौन हो तुम ?"

लक्ष्मी ने रुक हैदर की ओर देखा। हैदर ने पहचान लिया लक्ष्मी को

"ओह ! लक्ष्मी घोड़े पर आ जाओ ।"

लक्ष्मी कुछ निर्णय न कर सकी ।

विलम्ब देख हैदर ने फिर कहा—" सेठ के आदमी पीछा कर रहे हैं ।"

बिना पीछे देखे ही लक्ष्मी ने हैदर की बात पर विश्वास कर लिया और ऊपर चढ़ने के लिए हाथ बढ़ा दिया । हैदर ने लक्ष्मी को अपने आगे बैठा घोड़े के एड़ लगाई । घोड़ा शक्ति भर दौड़ने लगा । लक्ष्मी की मानसिक अवस्था ऐसी भयाक्रान्त थी कि वह कहाँ जा रही है, ध्यान ही न दे पा रही थी । घोड़ा आकर जब एक ऊँची हवेली के सामने रुका तो लक्ष्मी चौंकी—"यहाँ कहाँ आ गई मैं ?"

"आइये; मेरा घर है यह ।" आपका इस वक्त अपने घर जाना खतरे से खाली नहीं है ।" हैदर का आत्मीयता भरा स्वर सुन लक्ष्मी अनुसरण करने को बाध्य हो गयी ।

हैदर ने लक्ष्मी को एक विशाल सुसज्जित कक्ष में ले जा खड़ा कर दिया; और पलंग की ओर संकेत कर कहा—"आप तब तक यहीं आराम करिए, मैं उन लोगों को······ ।"

लक्ष्मी इतनी भयभीत थी कि बीच में ही अपनी वास्तविक स्थिति से परिचित करा दिया —"आपके बिना अकेली मैं नहीं रह सकती ।"

"यहाँ किसी तरह का खतरा नहीं है । बाहर से मैं बन्द कर दूँगा । आप घबराइये नहीं । मैं अभी आता हूँ ।" कह कर हैदर ने बाहर के लिए मुड़ने का उपक्रम किया ही था कि लक्ष्मी आ लिपटी हैदर के शरीर से और बड़े ही दयनीय स्वर में कहा-"मुझे अकेली छोड़ कर मत जाइये ।"

"लेकिन········।"

"नहीं, मैं मर जाऊँगी, आप यहीं रहिये।" लक्ष्मी हैदर के मुह की ओर देख कह रही थी।

हैदर ने भय-विह्वल लक्ष्मी की दृष्टि में झाँककर देखा तो समर्पण की भावना अनुभव कर अपनी सबल भुजाओं का सम्बल प्रदान कर दिया। सुरक्षात्मक अवलम्ब पा लक्ष्मी ने अपने को सौंप दिया।

३४

हुसेन अली को नकूसियार को परास्त कर दिल्ली लौटने में अधिक दिन नहीं लगे। दिल्ली आ उसने आगरे का सम्पूर्ण खजाना अपनी हवेली में डाल लिया और दक्षिण प्रस्थान की सूचना देने बड़े भाई के पास पहुँचा हुसेन। अब्दुल्ला सेठ रतनचन्द के साथ बैठे तत्कालीन स्थिति पर विचार कर रहे थे। सहसा हुसेन को अपने समक्ष देख हुसेन भ्रातृ-प्रेम से उमंगित हो स्वागतार्थ उठ खड़े हुए और हुसेन को अंक में भरते हुए प्रश्न किया—"कब लौटे आगरे से ?"

"सीधा चला ही आ रहा हूँ।"

"क्या नकूसियार भाग खड़ा हुआ ?"

"नहीं डटकर मुकाबला हुआ, और नकूसियार मारा गया।"

"तब तो आगरे का सारा खजाना हाथ लगा होगा ?"

"जी हाँ।"

"कहाँ है वह ?"

"मेरी हवेली में ?"

"तुम्हारी हवेली में क्यों, यहाँ क्यों रख आये ?"

"यहाँ का खजना आपने अपने कब्जे में कर रखा है; वहाँ का मैंने अपने कब्जे में कर लिया।"

"फिर भी उसमें से आधा तो मुझे मिलना ही चाहिए ?"

"आपने शाही खजाने की आधी दौलत मुझे दी थी ?"

"मगर तुमने मांगी ही कब थी ?"

"तो फिर आपको भी नहीं मांगना चाहिए ।"

"लेकिन आगरे की दौलत शाही खजाने से कहीं ज्यादा है ।"

"मेरे पास बेकार की बातों के लिए वक्त नहीं है । मैं सिर्फ आपको इस बात की इत्तिला देने आया हूँ कि आज ही मैं दक्षिण के लिए रवाना हो रहा हूँ ।"

आगरे के खजाने में बेशुमार दौलत भरी पड़ी है, यह अब्दुल्ला ने बहुतों के मुँह से सुन रखा था । अगरे के खजाने के विषय में जो-जो स्वप्न संजो रखे थे, पल भर में ही उन्हें धूल धूसरित होते अनुभव कर अब्दुल्ला बौखला उठे—"दौलत का बगैर बटवारा किये तुम हरगिज दक्षिण के लिए रवाना नहीं हो सकते ।"

चेतावनी भरे स्वर में हुसेन ने कहा—"सुन लीजिए, भाई साहब! आप की हर गलत-सही बात अभी तक मैं मानता चला आया हूँ । आपके हर फैसले को हमेशा मैंने सिर-आँखों पर लिया है; कभी भी आपकी मर्जी के खिलाफ मैंने एक लफ्ज तक नहीं निकाला है अपनी जुबान से । मगर, अब कान खोल कर सुन लीजिए,न तो आपको आगरे के खजाने से एक कानी कौड़ी मिलेगी और न अपनी मर्जी के खिलाफ एक भी बात सुनूँगा ।"

"हुसेन !" तड़पे खां साहब—"तुम्हें आगरे की आधी दौलत मुझे देनी ही पड़ेगी ।"

"हरगिज नहीं ।" हुसेन पावस कालीन मेघों की भांति गरजा—"कोई भी ताकत मुझसे आगरे की दौलत नहीं ले सकती ।" हुसेन का हाथ तलवार की मूँठ पर था ।

"मेरी तलवार ले सकती है ।" अब्दुल्ला की तलवार हुसेन की तलवार से जा टकराई ।

तलवार की टक्कर से उत्पन्न झन झनाहट से सेठ रतनचन्द कांप उठा । अनर्थ की आशंका से भर रतनचन्द शक्ति भर ऊँचे स्वर में

बोला—"यह क्या कर रहे हैं आप लोग; अपने ही हाथों अपने पैरों कुल्हाड़ी मार रहे हैं। आपस में लड़कर क्या फायदा उठायेंगे ? जिसे जितनी दौलत चाहिए, मुझसे लीजिए ।"

सेठ के हस्तक्षेप ने दोनों का ध्यान आकर्षित किया। तलवार एक क्षण के लिए रुक गई। अपने प्रयास को सफल देख सेठ ने दूने उत्साह से समझाना शुरू किया—"आप भाई-भाई भी किस चीज के लिए लड़ रहे है। दौलत आप लोगों के लिए क्या महत्व रखती है ! मन चाही दौलत के लिए सिर्फ आपके एक इशारे भर की देर है। जो सुनेगा, क्या कहेगा ? दुश्मनों के सिरों को धड़ से अलग करने वाली तलवारें भाई के खून की प्यासी हो उठीं ।"

"खामोश रह सेठ के बच्चे ! तुझे दो भाइयों के बीच में दखल देने का कोई हक नहीं।" हुसेन की तलवार फिर उठी।

"दौलत के लिए भाई के हाथों भाई की गरदन नहीं कटने दूंगा।" सेठ ने आगे बढ़ कर अपनी गरदन झुका दी।

हुसेन ने अब्दुल्ला की ओर देखा। अब्दुल्ला की तलवार झुकी हुई थी। हुसेन सोच-विचार में पड़ गया। सेठ ने तलवार को अपनी गरदन पर गिरते न अनुभव कर सिर उठा कहा—"मेरे सब तहखाने आप लोगों के लिये खुले पड़े हैं; जितनी मर्जी हो दौलत निकलवा मँगाइये ।"

"मुझे तेरी दौलत की कतई दरकार नहीं।" हुसेन की तलवार नीची हो गई।

"मेरी आप लोगों से प्रार्थना है कि आपसी मनमुटाव भूल कर उन दुश्मनों का सामना करने की कोशिश करिए जो दिन-रात आपके खिलाफ अपनी ताकत बढ़ा रहे हैं।"

"निजामुल्मुल्क का तो नामोनिशान तक मिटा कर दम लूंगा।"

"हुजूर का दुश्मन सिर्फ निजामुल्मुल्क ही नहीं है, और भी तमाम नये-नये दुश्मन सिर उठा रहे हैं ।"

"क्या और किसी ने शाही ताकत के खिलाफ बगावत का एलान किया है ?"

"शाही ताकत खुद हुजूर के खिलाफ कदम उठाने को सोच रही है।"

"मतलब ?"

"मुहम्मद अमीन ने बादशाह और उनकी मा को आपके खिलाफ खूब भरा है। शाही फौज के खास-खास सरदारों को आपके खिलाफ भड़काने की उनकी कोशिशें बराबर जारी हैं, और सुनने में आता है कि कुछ सरदारों ने उनका साथ देने का भी फैसला कर लिया है।"

"उस लौंडे और बुढ़िया की यह मजाल ! चींटियों के पर जम आये हैं शायद ।"

"और वे लोग आपके लौटने का इन्तजार भी कर रहे है।"

"मेरा इन्तजार ?"

"जी हाँ, वे लोग आप के साथ दक्षिण जाना चाहते हैं।"

"मेरे साथ दक्षिण जाने के पहले उन्हें मेरे हाथों खुदा के घर जाना पड़ेगा।"

"हुजूर जो भी कदम उठायें, खूब सोच-समझ कर। शाही ताकत से अपना साथ देने की कोई खास उम्मीद न रखें। किसी भी वक्त कोई भी सरदार हुजूर को धोखा दे सकता है।"

"हुसेन की तलवार तो धोखा नहीं दे सकती।"

"मगर, हुजूर कोई ऐसा कदम क्यों न उठायें जिससे सांप भी मर जाये और लाठी भी न टूटे।"

"मगर, मेरे पास अब इतना वक्त नहीं है कि मैं ऐसी तरकीबों के सोचने में अपना वक्त जाया करूँ।"

"हुजूर को कुछ सोचने-विचारने की जरूरत ही कहां है, दुश्मन तो खुद ही मौत के मुँह में जाने को तैयार बैठे हैं।"

"तुम्हारे कहने का मतलब हैं दुश्मनों को अपने साथ दक्षिण चलने दूँ ?"

"हर्ज ही क्या है ? निजामुल्मुल्क के साथ हुजूर उन्हें भी क्यों न वहीं दफना दें।"

"हाँ मुमकिन तो है।" कुछ सोच कर हुसेन ने अपना फैसला दे दिया—"कहलवा दीजिए, मैं उन्हें साथ ले चलने को तैयार हूँ; मगर कल रात तक सब तैयारी हो जानी चाहिए; ताकि परसों सुबह कूँच किया जा सके।"

"वे तो पहले से ही तैयार बैठे हैं; उन्हें तो सिर्फ हुजूर की इजाजत भर की देर है।"

"तो फिर उन्हें इत्तिला कर दो कि कल सुबह हमारी फौजें कूँच करेगी। हुसेन मुड़ कक्ष के बाहर हो गया।

"जो हुक्म।" रतनचन्द ने आदेशानुसार आचरण करने की स्वीकृति व्यक्त की।

३५

हुसेन अली की इच्छानुसार बादशाह अपनी मा के साथ दूसरे दिन सुबह दक्षिण के लिए रवाना हो गया। साथ में सैय्यद बन्धुओं के सभी प्रमुख शत्रु थे। मार्ग में भी दो दल हो अलग-अलग चल रहे थे। आगे-आगे हुसेन अली के नेतृत्व में सैनिक चल रहे थे, और पीछे-पीछे बादशाह का दल उसका अनुकरण कर रहा था। हुशेन अली शीघ्राति-शीघ्र दक्षिण पहुँच निजामुल्मुल्क को अपनी प्रतिशोधाग्नि में स्वाहा करना चाहता था, अतः उसकी गति असाधारण थी। दिन भर चलते रहे। सूर्य डूब गया था। संध्या ने रात्रि का रूप धारणकर अपनी कालिमा बिखेरनी आरम्भ कर दी थी पर हुसेन की गति में कोई अन्तर न आ पा रहा था, मैदानों दुर्गम घाटियों, बीहण वनों और ऊबड़-खाबड़ जमीन आदि कष्टपूर्ण मार्ग को लाँघता हुसेन अविजित योद्धा की भाँति अग्रसर हो रहा था। रात्रि के दो पहर बीतने पर भी जब हुसेन के रुकने के कहीं आसार दिखाई न दिये तो मुहम्मदअमीन खाँ ने बादशाह के पास आकर प्रश्न किया—"क्या रात भर यों ही चलते रहियेगा ?"

"मुझे क्या मालूम ? खाँ साहब से पूछिये जाकर।" मुहम्मदशाह ने उत्तर दिया

मुहम्मद अमीन ने गरदन घुमा कहा—"हैदर, जरा आगे बढ़ दरियाफ्त करो।"

"जो हुक्म।" कह हैदर मुड़ा ही था कि उसे सुनाई पड़ा"—"जरा जल्दी लौटना; कहीं कुछ ....।"

"आप फिक्र न कीजिये, अभी आता हूँ।" हैदर का घोड़ा अंधकार

में विलीन हो गया।

"हुजूर को किसी बात की तकलीफ तो नहीं हुई रास्ते में ?"

"आप भी तकलीफ की बात पूँछते हैं अमीन साहब! कचूमर निकल गया है; रग-रग दुःख रही है? एक-एक जोड़ कसक रहा है; यह भी कोई जिन्दगी है! इससे तो तहखाने की ही जिन्दगी वेहतर थी; अगर रात भर इसी तरह चलना पड़ा तो आधी जान रह जायेगी।"

"हुजूर,शायद, कुछ ज्यादा परेशानी महसूस कर रहे हैं।"

"मुझे मालूम होता कि फौज के साथ चलने में इतनी तकलीफ होती है, तो मैं हरगिज न राजी होता सफर के लिए।"

"यह परेशानी कुछ ही वक्त की है। सिर्फ....।"

"बादशाह, मुहम्मद अमीन के मुँह से, यही बात कई बार सुन चुका था ; महसा झुंझलाकर बोला–"आखिरकार, कौन-सा वक्त होगा वह ? पूरा दिन तो निकल गया इन्तजार करते-करते।"

"बस, हैदर को लौट आने दीजिये। आपकी सारी तकलीफ रफा होती है।"

"हैदर भी तो जहाँ जाता है वहीं का हो जाता है; लौटने का नाम ही नहीं लेता।"

"आता ही होगा हुजूर; फासला काफी है हमारे और हुसेन खाँ के बीच में।"

"न मालूम इस फासले का खात्मा कब होगा ?" दीर्घ निःश्वास छोड़ बादशाह ने अपना अभिमत व्यक्त किया–"मेरी सलाह मानिये तो वक्त का ज्यादा इन्तजार न करिये। नेक काम में देरी नहीं करनी चाहिये।"

'इसी लिये तो आप को इतनी तकलीफ उठाने पर मजबूर किया है। दोनों भाइयों की मिली-जुली ताकत का सामना करना नामुमकिन

था।"

"वह तो जो कदम आपने उठाया है, उसमें उज्र किसे; मगर जरूरत से ज्यादा वक्त जाया हो रहा है।"

"हुजूर! इन्तजार, वक्त का नहीं, दूरी का है। दिल्ली से जितने ही फासले पर हम होंगे, उतनी ही कामयाबी की ज्यादा उम्मीद है।"

"आप जरूरतसे ज्यादा हर बात पर गौर फरमाने के आदी हो गये हैं। इन्तजार करने वाले कभी किसी मसले पर चट-पट कोई फैसलानहीं कर पाते हैं, और न, कोई कदम ही उठा पाते हैं। किसी भी कामयाबी के लिये सबसे जरूरी है वक्त का इन्तजार न करना। जो हमारा इन्तजार नहीं करता, उसका हम इन्तजार क्यों करें! वक्त कभी किसी का इन्तजार नहीं करता।"

इसी बीच हैदरबेग, आ गया; बादशाह को सलाम कर सूचित किया—"हुसेन खाँ साहब का कहना है कि आज रात पड़ाव कहीं नहीं पड़ेगा; कल देखा जायगा।"

हैदर द्वारा व्यक्त किया गया हुसेन का निर्णय सुन बादशाह और मुहम्मद अमीन ने एक दूसरे की ओर देखा। बादशाह की दृष्टि में प्रश्न भाव था—"कहिये, अब और कितना इन्तजार करने का इरादा है?" मुहम्मद अमीन की दृष्टि में उत्तर था—"इन्सान कितनी ही जल्द बाजी क्यों न करे; काम अपने वक्त पर ही होगा।"

मुहम्मद अली ने हैदर बेग को अपने साथ आने का संकेत किया और शाही पालकी छोड़ दी।

फौज गतिमान थी ही। वे, जो हुसेन के स्वभाव से परिचित थे, चुप-चाप खिचे चले जा रहे थे। हुसेन दिन भर तो घोड़े पर चलता रहा; पर, रात होते ही उसने अश्वघोड़ पालकी ग्रहण कर ली थी।

चन्द्रमा का प्रकाश शनै-शनै क्षीण होने लगा। कालिमा घटने लगी। सूर्यागमन का आभास पूर्व दिशा की रक्तिम आभा से प्राप्त होने लगा। पक्षियों का सामूहिक कलरव मुखरित हो उठा। रात बीती दिन आया। दल बढ़ता चला जा रहा था। सूर्य चमका। किरणें चारों ओर बिखरीं। प्रकृति का कण-कण सजीव हो उठा। एक ने दूसरे को दृष्टि भर के देखा; पहचाना, मुस्कान बिखेर दी। एक-दूसरे ने मुस्कान के आदान-प्रदान में ही व्यक्त कर दिया—"यह भी कोई जीवन है।"

मुस्कान का स्थान स्वर ने ग्रहण किया—"कहिये, क्या हाल-चाल हैं।"

"आप अपने बताइये।"

"अपने राम तो इसके पहले कई बार इस हालत से गुजर चुके हैं।"

"तब तो आप भुक्त-भोगी हैं।"

"जी हाँ; तीन-दिन और तीन रात बराबर एक दफा चल चुका हूँ।"

"क्या इस बार भी कुछ ऐसी ही उम्मीद है ?"

"कहा नहीं जा सकता भाई; मुमकिन है।"

"तब तो हमारी रास्ते में ही जान निकल जायेगी।"

"तलवार की रोटी खाने वाले को इतना कोमल नहीं होना चाहिये।"

"मगर यह भी किसी इन्सान के वस की बात है कि दिन-रात बिना आराम किये चलते ही रहो ?"

"ऐसे ही लोग तो हुकूमत करते हैं।"

"बाज आये ऐसी हुकूमत से।"

"हुसेन मियाँ के दिल से जाकर पूछिये।"

"उनकी तो बात ही छोड़िये; उन्हें इन्सान समझना बेवकूफी है

"क्यों ?"

"उनका हर काम हैवानों का होता है।

"जरा धीरे से कहो ; कहीं किसी ने सुन लिया तो......।" सचेष्ट करने वाले का स्वर मन्द था ।

"मुझे परवाह नहीं ।"

"परवाह तो हुसेन मियां की आँखें देखते ही हो जायेगी ।"

"अमाँ, तुम भी क्या बुजदिलों की-सी बातें करते हो ! वे जमाने लद गए अब । अगर वह हुसेन मियाँ हैं तो, मैं भी अनवरअली हूँ ।"

"जी हाँ, मगर यह न भूलिये कि बहादुर जमाने को बनाता है ; जमाना बहादुर को नहीं । हुसेन मियां की तलवार में इतनी ताकत है कि जमाने का रुख मोड़ कर रख देते हैं ।"

"उनकी ताकत का कायल कौन नहीं ; मगर, फौजी हर सिपाही को अपने को किसी से कम नहीं समझना चाहिए ।"

परस्पर बात करते हुए यात्राजनित कष्टों को भूलने की चेष्टा कर अग्रसर हो रहे थे सैनिक ।

सूर्य तेजी से आकाश मण्डल में चमक रहा था । गर्मी के दिन थे । धूप में तेजी थी । हर प्राणी पशीने से लथपथ था । हुसेन अली निजा-मुल्मुल्क को मारने का स्वप्न शीघ्रातिशीघ्र साकार करने की धुन में था, पर यात्रा की गति को सहसा एक विशाल पहाड़ी नदी ने रोक दिया । हुसेन के संकेत पर पानी की गहराई का पता लगाया जाने लगा । कुशल तैराक कूदे पानी में । उछल-उछल कर डुबकियाँ लगाई उन लोगों ने, मगर थाह न मिली । इधर-उधर बढ़ने लगे । जल-ही-जल तैर कर काफी दूर जाने पर नदी सुगमता पूर्वक पार करने योग्य प्रतीत हुई । हुसेन के कदम उसी ओर बढ़ गए । नदी पार की गई, पर काफी समय लग गया, क्योंकि पानी देखते ही मनुष्यों-पशुओं के मुंह स्वाभाविक रूप से अपनी तृषा बुझाने के लिए जल का स्पर्श करने लगते थे । हुसेन नदी पार कर एक ऊँची कगार पर खड़ा लश्कर को

पार होता हुआ देख रहा था। उसने लोगों को जल पर बुरी तरह टूटते पाया ; चमकते हुए सूर्य की ओर दृष्टि उठा बरसती ज्वाला की भीषणता को अनुभव किया। सम्पूर्ण फौज को नदी पार उतरने के उपरान्त हुसेन ने वहीं निकट स्थित घने वन की छाया में दोपहर भर के विश्राम की घोषणा कर दी। यात्रियों को जैसे प्राण मिले। दौड़-कर अपने उपयुक्त स्थान की खोज करने लगे सब। देखते–देखते सहस्त्रों तम्बू तन गए। भोजनादि की व्यवस्था द्रुति गति से होने लगी। सिपा-हियों ने वस्त्र-शस्त्रादि उतार पैर सीधे किए ।

हुसेन के शिविर में अनेक विश्वस्त सहायक सेनाधिकारी एकत्र हो गए थे। परस्पर वार्तालाप प्रारम्भ हो गया था। एक ने कहा—"सुनने में आया है कि बादशाह के बुरे हाल हैं।"

"बादशाह की वालिदा साहिबा की तो और भी ज्यादा हालतखराब होगी।"एक ने अपना अनुमान व्यक्त किया।

"हुजूर के साथ सफर करने का यही तो मजा है।" हुसेन की ओर देख एक अन्य सरदार ने प्रशंसा-भाव व्यक्त किया।

"अमाँ तुमसे तो कुछ छिपा नहीं है कि हम लोग कितनी बेसब्री से इस दिन का इन्तजार किया करते हैं।"

"वाकई, इस जिन्दगी का लुत्फ ही कुछ और है। पड़े-पड़े खाना और इधर-उधर की गप्पें हांकना भी कोई जिन्दगी है। सरदार की तलवार से जब तक दस-बीस हजार दुश्मन न कटें ; खून का दरिया न बहे ; तब तक बहादुर की जिन्दगी की अहमियत ही क्या।"

"दुरुस्त फरमा रहे हैं जनाब ! जिन्दा अगर कोई रहता है, तो सरदार।"

"और सब क्या मरे हुए रहते हैं ?"

"जी हाँ, उन्हें भी कहीं जिन्दा इन्सान कहा जा सकता है जोहम लोगों के सहारे जिन्दा रहते हैं। हर मुश्किल के वक्त हमी लोगों का

दामन पकड़ते हैं ; हमारी ही तलवार की साया में पनाह लेते हैं।"

"दुरुस्त फरमा रहे हैं साजिद साहब ! बादशाह वगैरह की जिन्दगी भी कोई जिन्दगी है। हर वक्त हमारे हुजूर का मुंह ताका करते हैं।"

"वाह! क्या बात कही है आपने। हर वक्त हमारे हुजूर का ही मुंह ताका करते हैं।"

"अमां ! सिर्फ मुंह ही नहीं ताका करते हैं, बल्कि हुजूर की नज़रे-इनायत के ख्वाहिशमन्द रहते हैं।"

"क्यों न हो ; हुजूर ने ही तो सिर पर ताज रखा है।"

"हुसेन ने टोंका—"ताज नहीं, जूता-कहो-जूता। जिस के सिर पर जूता रख देता हूँ, वही हिन्दुस्तान का बादशाह हो जाता है।"

"सुना, बादशाह बनाने की हुजूर के जूते में ताकत है।" एक ने टीका की।"

दूसरे ने व्याख्या की--"बादशाह, हुजूर के पैर का जूता है।"

"हुजूर, पैर में जूता नहीं, बादशाहों को पहनते है।"

"एक नहीं, दो-दो।"

सरदारों द्वारा बादशाह को हुसेन के जूते से भी गया-बीता सिद्ध करने की चेष्ठा के मध्य बादशाह के सूचना वाहक के आगमन की सूचना दी गई।

"भेज दो। सरदारों द्वारा व्यक्त प्रशंसा के मद में झूमते हुए हुसेन ने सर्वोपरि शासक के स्वर में स्वीकृति दी।

हैदरबेग ने प्रवेश कर अभिवादन के पश्चात् नत मस्तक अवस्था में ही अभिप्राय व्यक्त किया—"बादशाह सलामत की वालिदा साहिबा को काफी तेज बुखार चढ़ आया है ......।"

बीच में ही हुसेन बिगड़ा— 'तो फिर मेरे पास क्यों आया है, किसी हकीम के पास जा। क्या बुखार की भी दवा हुसेन के पास मिलती है?"

"जहाँपनाह ने हुजूर की खिदमत में कहला भेजा है कि कल सुबह के पहले आगे के लिये यहाँ से कूँच न किया जाय।"

"जा, अपने बादशाह से कह दे जाकर कि हुसेन अली अपनी मर्जी का बादशाह है; वह किसी की नहीं सुनता। लश्कर आज ही यहाँ से आगे के लिए रवाना होगा—इसी वक्त—अभी।"

हैदरबेग ने हुसेन के शिविर में और अधिक एक पल भी रुकना उचित न समझ अभिवादन किया और फौरन शिविर के बाहर हो गया। उसकी प्रतीक्षा में खड़े अन्य साथी भी उसके साथ हो लिये।

हैदरबेग कदाचित ही बादशाह के शिविर तक पहुँच पाया था कि कूँच का डंका बजता सुनाई देने लगा। हैदरबेग को अपने समक्ष उपस्थित देख बादशाह ने डंके की आवाज की ओर संकेत कर आश्चय व्यक्त किया—"यह कूँच का डंका कैसा बज रहा है?"

"हुजूर की आज्ञा का जवाब हैं यह डंका।" हैदर ने निवेदन किया।

"मतलब?"

"हुसेन मियां ने हुजूर की बात पर गौर नहीं फरमाया; बल्कि नाराज हो कर अभी कूँच का डंका बजवा दिया है।"

"तो क्या इसी धूप में फिर आगे बढ़ना है?"

"जी हाँ, डंके की आवाज तो यही कह रही है

"यह तो सरासर ज्यादती है।" सहसा क्रोध भरे स्वर में बादशाह का अवज्ञापूर्ण भाव व्यक्त हो गया—"हम हरगिज नहीं कूँच कर सकते आज।"

मुहम्मद अमीन, जो अभी तक शान्त बैठा सुन रहा था, बोला—"नही; हमें तैयार होना चाहिये।"

"तो क्या हम हुसेन अली के मातहत हैं जो........

"जी हाँ, इस वक्त आपको हुसैन अली के हुक्म के मुताबिक ही कदम उठाना है।"

"मगर मुझे यह गुलामी हरगिज बरदाश्त नहीं।"

"हुजूर, यह डंके की आवाज नहीं, वक्त की आवाज है। मानिये, और इसी के मुताबिक कदम उठाइये।"

जालीदार परदे के पीछे बैठी बादशाह की मा ने मुहम्मद अमीन की बात का समर्थन करते हुए कहा—"मुहम्मद साहब दुरुस्त तो फरमा रहे हैं। बड़ों की नेक सलाह में उज्र नहीं करना चाहिये। चलने की तैयारी करिए, हम चलने को तैयार हैं।"

मुहम्मद अमीन और अपनी मा को एक मत देख बादशाह और अधिक विरोध करने का साहस न कर सका।

कूँच की तैयारी प्रारम्भ हो गई। बातों-ही-बातों में शिविरों की डोरियाँ ढीली हो गईं। कुछ ही देर में वह स्थान पूर्ववत् हो गया। बनचर विचरण करने लगे। सूर्य अस्ताचलोन्मुख हो रहा था।

मुहम्मद अमीन ने हैदरबेग की तरफ हाथ बढ़ाया। हैदरबेग ने अमीन के हाथ में रखी वस्तु को ग्रहण कर लिया और प्रश्न भरी दृष्टि से देखा। दृष्टि पूँछ रही थी—"और कुछ?"

नकारात्मक सिर हिला कर मुहम्मद अमीन ने कहा—"नहीं, बस! मगर, बहुत होशियार रहने की जरूरत है।"

"आप बेफिक्र रहें, हर हालत से मैं बाखूबी वाकिफ हूँ। आप भी ....।"

"हाँ—हाँ, तुम्हारे पहुँचने भर की देर है।" बीच में ही मुहम्मद अमीन ने हैदरबेग की शंका निर्मूल कर दी।

"आओ।" हैदरबेग के हाथ हिलते ही अनेक अश्वारोही साथ हो लिये।

बढ़ती हुई फौज की अपेक्षा हैदरबेग और उसके साथियों के अश्व अधिक तीव्र गति से अग्रसर हो रहे थे। सब अपनी-अपनी धुन में मस्त थे। कौन आगे या पीछे जा रहा है, किसी को खबर न थी।

हुसेन की पालकी के निकट हैदरबेग को अनेक साथियों सहित देख रक्षक वर्ग सतर्क हो गया। सबकी दृष्टि का केन्द्र-बिन्दु हैदरबेग बन गया। साथियों को पीछे छोड़ हैदर कुछ कदम आगे बढ़ आया। इसके पूर्व कि रक्षक किसी अव्यक्त आशंका के शिकार होने पावें, हैदर ने हाथ बढ़ा दिया। एक रक्षक ने आगे बढ़ हैदर के हाथ से पत्र ले लिया। पत्र हाथ से पृथक होते ही हैदर ने कहा—"हुजूर की खिदमत में पेश कर दो इसे।"

पत्र हुसेन अली के हाथ में खुला। हुसेन ने उसे ध्यान से पढ़ना प्रारम्भ कर दिया। समाप्त करने के उपरान्त गर्दन घुमाई तो हैदरबेग दृष्टिगत हुआ। हुसेन अली का निकट बुलाने का संकेत पाते ही हैदर घोड़े से उतर पड़ा और पालकी की ओर लपका। रक्षकों को हुसेन के संकेत का आभास न होने पाया था। एक साथ सब हैदर की प्रगति को रोकने के लिए बढ़े। इसके पूर्व कि हैदरबेग को हुसेन अली के अङ्ग रक्षक अधिकृत कर सकें, हुसेन का आदेशात्मक स्वर सुनाई दिया—"आने दो।"

रक्षक काई की तरह फट गये। हैदर रक्षकों के बीच से होता हुआ पालकी के निकट जा पहुँचा। हुसेन ने हैदर के मायूस चेहरे की ओर देख आत्मीय किन्तु तीक्ष्ण स्वर में प्रश्न किया—"तो मुहम्मद अमीन ने तेरी बीबी की सरेआम बेइज्जती की है?"

"नहीं।" स्वर के साथ ही हैदर ने अपनी कमर से छुरा निकाला और तेजी के साथ हुसेन के पेट में घुसेड़ दिया।

हैदरबेग का प्रहार अप्रत्याशित था। हुसेन की भीषण चीत्कार गूँज उठी। हैदरबेग छुरा पूरी तरह अपनी ओर खींचने भी न पाया

थां कि हुसेन ने एक लात मारी। लात के धक्के ने हैदर को पीछे ढकेल दिया। रक्षकों के हाथ में तलवारें आ चुकी थीं, पर उनके पहुंचने के पहले ही हैदर के साथियों की तलवारों से जा टकराईं। हैदर को मौका मिल गया। उसने तलवार निकाल हुसेन पर एक प्रहार और किया। हुसेन पालकी से उतर खड़े होने के लिये पैर बाहर निकाल चुका था। हैदर के प्रहार ने हुसेन के दोनों पैर काट दिए। पैर कटे हुसेन अली पर हैदर ने दूसरा प्रहार किया। हुसेन तो पहले ही अशक्त हो चुका था, हैदर के दूसरे प्रहार से वह धराशायी हो गया। हैदरबेग हुसेन के शरीर के अनेक खण्ड कर उठ खड़ा ही हुआ था कि सीने में गोली आ लगी। दृष्टि उठा सामने देखा तो हुसेन अली के भतीजे नूरुल्ला खां की बन्दूक से दूसरी गोली छूटी जिसने हैदरबेग को भी हुसेन की बगल में चिर निद्रा में निमग्न होने को बाध्य कर दिया। फौज गतिहीन हो चुकी थी। मुहम्मद अमीन ललकार–ललकार हुसेन के सहयोगियों को गाजर-मूली की भांति काट रहा था। विरोधियों की संख्या भी कम न थी। चारो ओर लपा-लप तलवारें चमक रही थीं। चीत्कार, आर्तनाद आदि करुण पुकारों से वातावरण करुण हो चला था। कुछ ही देर में करुण वातावरण से द्रवित हो सूर्य ने अपना मुंह छिपा लिया।

३६

नायक के मरते ही विजयी सैनिक भी हतोत्साहित हो भाग खड़े होते थे। और पराजित होता हुआ दल विजय-श्री का वरण करता था। हुसेन के मारे जाने का समाचार फैलते ही उसके दल के सैनिकों की यही दशा हुई। सहसा प्रश्न खड़ा हो जाता था कि लड़ें तो किसके लिए, क्योंकि नायक कभी भी अपने किसी भी अधीनस्थ कर्मचारी को इस सीमा तक सैनिकों का विश्वास पात्र इस भय से नहीं बनने देता था कि कहीं वही न किसी दिन उसके आस्तीन का साँप बन बैठे। हुसेन अली भी अपनी सेना का सर्वेसर्वा था। अपने दल में किसी भी सरदार को ऐसी स्थिति न प्राप्त करने दिया था,जिससे उसकी अनुपस्थिति में वह सेना का संचालन कर सके; फलतः हुसेन की मृत्यु ने उसके अधिकांश अनुयायियों को विरोधी दल का सहायक बना दिया। स्वभावतः कुछ नायकत्व उसके भतीजे नूरुल्लाखाँ को प्राप्त हुआ; पर, वह अनुभवहीन लड़का कब तक ठहरता शाही सेना के कुशल सैनिकों के समक्ष! हुसेन के साथी एक-एक बिन-बिन कर मारे गये। हुसेन की सारी सम्पत्ति लूट ली गई। आठ-दस घण्टे निरन्तर मार-काट, लूट-पाट के पश्चात एक भी व्यक्ति न रह गया था जो यह बता सकता कि हुसेन नाम का कोई सम्राट-निर्माता वीर बादशाह के साथ जा रहा था।

विजय गर्व से फूला मुहम्मद अमीन खाँ बादशाह के शिविर में में आया। यद्यपि बादशाह को क्षण-प्रति-क्षण का समाचार प्राप्त हो चुका था, तथापि बादशाह ने आगे बढ़ मुहम्मद अमीन को छाती से लगा लिया। कुछ क्षण में अलग हो मुहम्मद अमीन ने गद-गद स्वर

में प्रशंसा प्राप्ति की अभिलाषा से कहा-"कहिए, कैसी रही तरकीब?"

"मान गया, आपने तो सैय्यदों के भी कान काट लिये।"

"सैय्यदों के नहीं, सैय्यद के। अभी सैय्यद अब्दुल्ला खां से तो निपटना ही है।"

"अरे; उसमें क्या दम है जो आपका सामना कर सके। जब हुसेन अली जैसे बहादुर को जहन्नुम पहुँचा दिया तो अब्दुल्ला कौन खेत की मूली है!"

"अब्दुल्ला खां को हुजूर किसी तरह हुसेन से कम न समझें। हुसेन सिर्फ एक अक्खड़ सेनापति था। उसमें दुश्मन की चाल को समझने का माद्दा न था; मगर अब्दुल्ला खां बहादुर होने के साथ-साथ होशियार भी अव्वल दर्जे का है। दुश्मन की चाल को समझना उसके बायें हाथ का खेल है।"

"मगर अब उसको भी दोजख का रास्ता दिखाना आपके बायें हाथ का खेल हो गया है।"

"यह समझना गल्ती होगी। अब्दुल्ला को हुसेन के पास पहुँचाने के लिए जमीन-आसमान के सब कुलावे एक करने होंगे। हुसेन की खबर उस तक पहुँचते देर न लगेगी।"

"खबर ले जाने वाला बचा ही कौन है? सब तो मार डाले गये हैं।"

"जो लड़े, वे मारे गये; और जो भाग गये हैं, उनका क्या ठिकाना कि वे अब्दुल्ला के पास नहीं पहुँचेगे।"

"अरे, तो पहुँचने भी दो भगोड़ों को। जब दोनों मिलकर हमारा बाल बाँका नहीं कर सके तो अकेला अब्दुल्ला कौन पहाड़ उल्टा लेगा।"

"यही तो हमारी कामयाबी का राज है। अगर हम दोनों की मिली जुली ताकत का सामना करने की कोशिश करते तो आज हम वहीं

होते जहाँ हुसेन और उसके साथी हैं।"

"तो फिर, एक बाजू तो कट गई। दूसरी के लिए क्या इरादा है?"

"बस! अभी कूँच का डंका बजता है।"

"मगर, निजामुल्मुल्क से निपटने की अभी कौन-सी जल्दी है। फिर कभी देखा ·········।"

बीच में ही मुहम्मद अमीन बोल पड़ा—"कूँच दक्षिण के लिये नहीं, शाहजहानाबाद के लिये करना है।"

"ओह! मैं गलत समझ गया; मगर इतनी जल्दी कूँच करने की क्या जरूरत है? जीत की खुशी में कम-से-कम दो-चार दिन तो जश्न मनाने का मौका तो दीजिए ही सिपाहियों को।"

"अगर शाहजहानाबाद पहुँचने में देर की तो यहीं जश्न जङ्ग में बदल जायेगा।"

"क्या अब्दुल्ला इतनी जल्दी आ पहुँचेगा?"

"और क्या अपने भाई की मौत सुनकर सुख की नींद सोता रहेगा?"

"मगर, उसके पास शाही ताकत से टक्कर लेने के लिये फौजी ताकत है ही कहाँ?"

फौज खड़ी करने में क्या वक्त लगता है; सिर्फ दौलत चाहिए उसके लिये। और दौलत की उसके पास कमी है नहीं।"

"ऐसे मौके पर रतनचन्द भी तो उसकी मदद करेगा।"

"इस बाबत कुछ कहा नहीं जा सकता। रतनचन्द बनिया है। बनियां वहीं दौलत खर्च करना पसन्द करता है जहाँ से खर्च की हुई दौलत से कहीं ज्यादा लौटने की उम्मीद होती है। एक भाई के मारे जाने से सैय्यद की ताकत काफी कम हो गई है। हो सकता है कि सैय्यद भाइयों का सितारा डूबता हुआ सोचकर सहायता न करे

वह'।"

"अगर, ऐसे मौके पर अब्दुल्ला की मदद नहीं करेगा वह, तो अब्दुल्ला उसे जिन्दा भी न छोड़ेगा।"

"जिन्दा छोड़े जाने भर की दौलत तो बिना मांगे ही लेकर हाजिर हो जायेगा वह मदद के लिए। घाटे-मुनाफे का अन्दाज सबसे ज्यादा इस कौम को होता है। जहां जरा भी फायदे की गुंजाइश होगी, सिर के बल खड़े दिखाई देंगे। और, अगर कहीं घाटे का जरा भी शक हो गया तो वहाँ से ऐसे खिसकेंगे, जैसे गधे के सिर से सींग।"

"तो क्या वफादारी नाम की कोई चीज होती ही नहीं है इनमें ?"

"इनकी जिन्दगी में दौलत ही सब कुछ होती है। दौलत की पूजा तक करते हैं ये लोग। आप तो जानते ही हैं कि इन्सान पूजा उसी की करता है जिसे वह सबसे बड़ा मानता है; मगर दौलत जैसी बेवफा चीज दुनियाँ में दूसरी नहीं। कभी भी एक के पास नहीं टिकती। आज इसके पास, तो कल उसके पास। हमेशा चलती-फिरती नजर आती है। जब दौलत ही वफादार नहीं है, तो दौलत के पुजारियों से वफादारी की उम्मीद कैसे की जा सकती है।"

"खुदा करे रतनचन्द वैसा ही साबित हो जैसा आपने उसका खाका खींचा है।"

"मगर, हमें उम्मीद यही करनी चाहिए कि वह अब्दुल्ला खां की मदद करेगा। अब्दुल्ला खां की ज्यादा-से-ज्यादा ताकत का सामना करने के लिये हमें हमेशा तैयार रहना चाहिए।"

"और हमें तब तक चैन से नहीं बैठना चाहिए जब तक अब्दुल्ला हमारे कब्जे में नहीं आ जाता।"

"इसी लिये तो मेरी ख्वाहिश है कि जल्दी-से-जल्दी कूँच की

तैयारी शुरू कर दी जानी चाहिये, ताकि सुबह यहाँ से रवाना हुआ जा सके और दुश्मन को तैयार होने से पहले ही शिकस्त दी जा सके।"

इसके पूर्व कि बादशाह अपनी राय जाहिर कर सके, परदे के पीछे बैठी राजमाता की आज्ञा व्यक्त हो गई–"आप फौरन कूँच की तैयारी के शाही फरमान का एलान करवा दीजिए। सूरज निकलने के पहिले ही हमें रवाना हो जाना है।"

किसमें साहस था, जो राज माता के निर्णय में किसी तरह का परिवर्तन कर सकता।

कुछ ही देर में शिविरों के उखाड़ने में व्यस्त कर्मचारियों का शोर-ग़ुल प्रारम्भ हो गया।

३७

हुसेन के मारे जाने का समाचार पाते ही अब्दुल्ला खाँ बौखला उठा। उसके क्रोध की सीमा न रही। दांत पीसता हुआ निकट बैठे पुत्र सैय्यद गैरत खाँ को आज्ञा दी—"गैरत। दो हजार सिपाही लेकर फौरन शाही किले पर कब्जा कर लो जाकर।"

"जो हुक्म।" सिर झुका गैरत खाँ कक्ष के बाहर हो गया।

"करीमुल्ला।" दाहिनी ओर सामने बैठे निकट सम्बन्धी सैय्यद करीमुल्ला खाँ को सम्बोधित किया।

"जी हुजूर।" करीमुल्ला आज्ञा शिरोधार्य करने के लिए उठ खड़ा हो गया।

"फौरन फौज की भरती शुरू कर दो जाकर और जो जितनी तन-ख्वाह मांगें, इन्कार मत करो। साथ ही तीन-तीन मास की तनख्वाह पेशगी भी देते जाओ।"

बाईं ओर बैठे सआदत खाँ को दृष्टिगत कर अब्दुल्ला खाँ ने आज्ञा दी—"तुम अपने सिपाही लेकर फौरन रास्ता रोकने की कोशिश करो जाकर। जिस तरह भी हो पलवल से आगे बादशाह न बढ़ने पायें।"

"जो हुक्म।" सिर झुका सआदत खाँ बाहर के लिए मुड़ गया।

रतनचन्द पहले से ही अब्दुल्लाखाँ की क्रोधपूर्ण मुद्रा और भीषण स्वर में प्रसारित की जाने वाली आज्ञायें सुन-सुन कर सिहर उठा था। अब्दुल्ला के समक्ष अपने को अकेला अनुभव कर प्रकम्पित शरीर में साहस बटोरने लगा वह। अब्दुल्ला ने आवश्यक नाकाबन्दी से निश्चिन्त हो रतनचन्द की ओर देखा। रतनचन्द को विस्फारित नेत्रों से अपनी ओर देख अब्दुल्ला ने कहा-"देखा रतनचन्द बादशाह का सलक, भूल गया

आपने वे दिन जब तहखाने में पड़ा-पड़ा सड़ा करता था, एक-एक बूंद पानी को तरसता था, सूरज की रोशनी का दीदार मुश्किल था। जिसने बादशाह बनाया, उसी की जड़ खोदने पर उतारू हो गया है। जिनकी ताकत पर उसने हमसे टकराने की जुर्रत की है, उनकी खालें खिचवा कर भूसा न भरवा दिया तो मेरा नाम अब्दुल्ला नहीं।"

डरते-डरते रतनचन्द ने कहा—"यह सब मुहम्मद अमीन की ही कारस्तानी होगी। उसी ने बादशाह को आपके खिलाफ भरा होगा।"

"बादशाह को भी मालूम हो जायेगा कि ऐरों-गैरों को मुँह लगाने का क्या अन्जाम होता है।"

"हुजूर, मोहम्मद अमीन के लिए कोई ऐसी सजा तजवीज करें कि देखने वाले भी दंग रह जाँय।"

"उसे तो ऐसा तड़फा-तड़फा कर मारूँगा, जैसे भाड़ में चना उछल-उछल कर गिरता है। अच्छा रतनचन्द! बड़ा नाजुक वक्त आ गया है। शाही ताकत का मुकाबला करना है। बहुत मुमकिन है कि नयी फौज तैयार करने में तुम्हारी मदद की जरूरत पड़े।"

"हुजूर की खिदमत के लिये गुलाम का शरीर हाजिर है।"

"रतनचन्द, मुझे तुम्हारे शरीर की नहीं, दौलत की जरूरत पड़ेगी।"

"मेरे पास जो कुछ है, सब हुजूर का ही दिया हुआ तो है। मेरे पास है ही क्या अपना।"

"ठीक है; अब तुम जा सकते हो सुबह-शाम जरूर मिलते रहना।"

"हुजूर का हुक्म हो तो गुलाम यहाँ से जाये ही नहीं।"

"नहीं, घर जाओ; मगर रहना घर पर ही। जिस वक्त जरूरत समझी जायेगी, तुम्हें तलब किया जायेगा।"

"जो हुक्म ।" अभिवादन कर रतनचन्द ने जान बचाई ।

कोठी में घुसते ही सेठ रतनचन्द ने चिल्लाना शुरू कर दिया-- "रामू ··· कल्लू · भीखू किशन ··· न जाने कहाँ मर गये सब के सब ।" एक सांस में ही सबको पुकार कोस डाला ।

सेठ रतनचन्द की आवाज पर सभी एक साथ दौड़ पड़े । हाथ बांधे सिर झुकाये पुकारे गये सभी नौकरों को दृष्टिगत कर रतन चन्द ने आदेशात्मक स्वर में कहा—"देखो, वजीर और बादशाह में जंग छिड़ने वाली है । वजीर के आदमी मेरी तलाश में आयेंगे । एक भी न बताना कि मैं कहाँ हूँ, वरना जान से मार डालूँगा ।"

"और अगर, खां साहब खुद आये तो ?" रामू ने प्रश्न किया ।

"कोऊ आवै हमैं अपने मालिक कै बात मानै का है या खाँ साहब कै ?" कल्लू ने रामू को डांटा ।

"और अगर खाँ साहब जबर्दस्ती अन्दर घुस आये तो·· ··?" भीखू ने सम्भावित स्थिति को स्पष्ट करना चाहा ।

"अबे तो तहखाने का रास्ता थोड़े ही जानते हैं वह । घुस आयेंगे तो घुस आने देना । मर जाना, मगर तहखाने का रास्ता न बताना ।"

किशनू ने आत्मीयता व्यक्त की—"मगर मालिक! आप तो कहत हौ तहखाने माँ साँप रहत हवैं । हुआँ हम पन्चन का न जावै चाहीं । का आपका साँप न काट खइहैं ?"

कल्लू ने किसनू को धर डपटा—"का साँप अपने मलिकौ का नाहीं पहिचानत हवैं । मालिक उनका दूध नाहीं पियावत हैं ? मालिक का कइसे कटिहैं । हम-तुम जाई तो तुरतै काटि खइहैं ।"

"तब तो अगर कउनौ ज्यादा डाँटी-डपटी तो होंई साँपन माँ भेजि देइब ।"किसन ने अपनी साधारण बुद्धि से सेठ के विरोधियों को

पीड़ित करने का सबसे सरल रास्ता सुझा दिया।

"चुप रह बे। इस कम्बख्त को कभी अक्ल नहीं आयेगी।" सेठ ने झुँझला कर कहा।

"आप मालिक फिकर ना करौ। हम दिन-रात दरवाजे पर डटे रहब। किशुनुआ का हम कोहू ते बातैं न करैं देव।"

सेठ रतनचन्द ने आश्वस्त हो कहा—"और देखो कल्लू, तहखाने की सीढ़ियों को किसी होशियार कारीगर से ऐसी बराबर करवा दो कि पता ही न चलने पावे कि वहाँ कभी सिढ़ियां रही भी हैं।"

"अबै लेव मालिक—अबै लेव।" कल्लू ने कहा।

किशनू के मस्तिष्क में फिर एक बात सूझी—"मालिक, जब सीढ़ी न रही तो आप अइहौ–जइहौ कइसे ?"

"तू तो निरा बुद्धू है"' कल्लू ने फिर टोंका किसनू को—"वजीर औ बादशाह कै घरेलू लड़ाई है। कउनौ बहुत दिन थोड़ै चलिहै। जब दुइ-चार दिन मा खतम हुइहै, तब सीढ़ी फिर बनाइ दीन जइहै। का पिछली बात कै नाहीं याद हवै। जब मालिक दुइ दिना तक तहखाने ते बाहरैं न निकरे रहैं।"

"जा कल्लू, तू अपना काम देख। किसनू तो जाहिल है-जाहिल। इस गधे को तो नौकर रखना भी आफत मोल लेना है। जा तू अपने गाँव चला जा। एक महीना बाद आना।"

"वाह मालिक, जुग-जुग जियौ। आप हमारी सुनि लिहेव। साल भर ते गाँव-जांय का आपते कहत आहिन, मगर आप कबहूँ न सुनेव। अब की जब लौटब तो अपने लरिकौ का साथै लिहै आइब।"

"जा-जा ज्यादा बक-बक मत कर। फौरन "इसी वक्त रवाना हो जा।"

"अबै जाइत है मालिक।" कँधे पर रखे कपड़े के टुकड़े को हाथ

मे सम्हालता झुका-झुका भीतर की ओर भागा।

रतनचन्द ने रोकते हुए कहा—"अन्दर की तरफ नहीं।" बाहर की ओर हाथ से संकेत कर कहा—"इधर जा।"

"मालिक ! कपड़ा-लत्ता तो लइ लेई।"

"अच्छा जा, मगर कोठी में दिखाई मत देना।"

"अबहीं रवाना होइत हवै मालिक।" किशनू हिलता-डुलता अन्दर की ओर भागा।

सेठ रतनचन्द तहखाने की ओर सरका।

३८

अठारहवीं शताब्दी का प्रारम्भिक काल बड़ी ही अनिश्चितता का काल माना जाता था। आये दिन शासक बदलते रहते थे। शासक इतने विलासी होते थे कि मंत्रियों आदि के हाथ की कठपुतली बन कर रहते थे। कभी-कभी तो शासक और शसक्त मन्त्रियों के मध्य षणयंत्र प्रारम्भ हो जाते थे जिनका अन्त अन्ततोगत्वा युद्ध ही करता था। युद्ध में कौन जीता अथवा कौन पराजित हुआ, जनता को इससे विशेष सम्बन्ध न था। जनता तो युद्ध में पीसी जाती थी और नवीन शासक के करों के बोझ से उसकी सदा दयनीय स्थिति रहती थी। गरीबी इतनी अधिक थी कि भूखों मरते प्राणी युद्ध के अवसर की प्रतीक्षा किया करते थे; क्योंकि, प्रत्येक युद्ध में नई भरती प्रारम्भ की जाती थी। कुछ दिन तो बढ़िया खाने को मिलेगा, इस लालच में जन साधारण फौज में जान देने को भरती हो जाता था।

अब्दुल्ला के पास विशेष सेना न थी। अधिकांश हुसेन अपने साथ रखता था और दक्षिण के लिए तो बादशाह की सुरक्षित सेना भी दिल्ली से दूर हो चुकी थी। शाही ताकत का सामना करने के लिये एक विशाल सैनिक शक्ति की आवश्यकता थी। सैनिकों के भरती किए जाने का समाचार आग की तरह चारो ओर फैल चुका था। चारो ओर से झुण्ड-की झुण्ड मरभुखी जनता एकत्र हो रही थी। सभी राजमार्गों पर नित्य की अपेक्षा अधिक चहल-पहल देख किशनू ने एक व्यक्ति से पूछा-
"का कउनौ तमाशा होय का हवै ? ई सब मनई कहाँ का जात हवैं ?"

"फौज में भरती होने। लड़ाई शुरू होने वाली है।" शाहगीर ने किशनू के प्रश्न का उत्तर दिया।

कदम-से-कदम मिलाते हुए किशनू ने फिर सवाल किया—"मगर ई बूढ़-बूढ़ मनई कहाँ जात हवैं ?"

"बूढ़ों की भी भरती हो रही है। तुम क्या भरती होने नहीं जा रहे हो ?"

"नाहीं, हम अपने गाँव जाइत हवैं।"

"गाँव जाकर क्या करेगा ऐसे वक्त ? फौज में क्यों नहीं भरती हो जाता है ? मुँह मांगी तनख्वाह मिल रही है; और, वह भी तीन-तीन महीने की पेशगी। सारी गरीबी दूर हो जायेगी।"

"मगर, हम बूढ़ का कउन पुछिहै?" किशनू ने अविश्वास प्रकट किया।

"बूढ़ा हो या जवान—सभी की भरती हो रही है। किसी को लौटाया नहीं जाता।"

"अगर हम का भरती कर लेहैं तो तनख्वाह का देहैं ?"

"जो तुम माँगोगे।"

"आपौ भल बूढ़ जानिकै मजाक करत हौ। मुँह माँगी तो मउतौ नाहीं मिलत है, तनख्वाह भला कउन देइहै।"

"मौत माँगने से चाहे मिले या न मिले, मगर इस वक्त तनख्वाह जरूर मिल रही है; विश्वास न हो तो साथ देख लो चलकर।"

किशनू को कुछ-कुछ विश्वास हुआ। कृतज्ञतापूर्ण स्वर में प्रार्थना की उसने—"अगर हमका तुम दुइ जून भर पेट रोटिउ मा भरती करवाय देव, तौ हमार बाल-बच्चा तुमका आशीष देहैं। मालिक के हियां तौ एक वखत रात मा आधे पेट रोटी मिलत है।"

"सेठ रतनचन्द के यहाँ नौकर हो तुम ?"

"हाँ, तुमहूँ नौकरी करि चुके हो का मालिक के हुआँ ?"

"उस मक्खीचूस के यहां भला कौन जान देने जायेगा ।"

"का मालिक जानौ लेत हवैं ?"

उस व्यक्ति ने किशनू का ध्यान हाथ से संकेत कर कुछ दूरी पर एकत्र भीड़ की ओर आकृष्ट किया—"वहाँ भरती हो रही है ।"

किशनू के कदम तेजी से उस आदमी के साथ-साथ बढ़ने लगे । काफी लम्बी कतार थी उम्मीदवारों की । किशनू भी उस व्यक्ति के साथ जा खड़ा हुआ पीछे कतार में ।

कतार यद्यपि थी काफी लम्बी, पर आगे खिसक इतनी तेजी से रही थी कि नियुक्ति अधिकारी के सामने कुछ ही देर में किशनू जा खड़ा हुआ । उसने किशनू को एक बार ऊपर से नीचे तक देखा और बिना कुछ पूँछे-जाँचे किशनू के हाथ में कुछ सिक्के सोने के और कुछ चाँदी के रख दिये । किशनू ने इतने अधिक सिक्के न तो कभी देखे थे न छुये थे । वह दोनों हाथों में रखे सिक्कों को देखता रह गया । नियुक्ति अधिकारी ने आदेश दिया—"आगे बढ़ो ।"

आगे बिना बढ़े ही किशनू ने अधिकारी को साश्चर्य दृष्टि से देख कहा—"ई सब हम का करिब ? हमका तौ सिरफ रोटी चाही ।"

"जाओ-जाओ, अपने लड़कों-बच्चों को देना जाकर ।"

किशनू सिक्कों को कौतूहलपूर्ण दृष्टि से देखता हुआ अधिकारी के हाथ के सहारे आगे बढ़ गया ।

फौज के लिए जवानों-बूढ़ों और बड़े बच्चों तक को भरती किया जा रहा था । भरती होने वालों को आशा से अधिक धन मिल रहा था । धन पानी की तरह बह रहा था । दिन भर धन बहने के उपरान्त समाप्त-सा प्रतीत हुआ । धन की मांग अब्दुल्ला खाँ के पास पहुँचाई गई । अब्दुल्ला खाँ ने शाही खजाने का एक-एक सिक्का निकलवा

मँगवाया। शाही खजाने से प्राप्त धन के सहारे रात तो किसी तरह कट गई, पर सूरज निकलते ही धन की माँग फिर अब्दुल्ला खाँ के सामने विशाल मुँह खोल कर खड़ी हो गई। अब्दुल्ला को विशेष न सोचना पड़ा; रतनचन्द का ध्यान तत्काल आ गया। अत्यधिक व्यस्तता के कारण न तो रतनचन्द की ओर ध्यान ही गया था और न रतनचन्द स्वयं ही आया था। अब्दुल्ला ने समक्ष खड़े करीमुल्ला को आदेश दिया—"सेठ रतनचन्द से, जितनी दौलत चाहो, ले लो जाकर।"

"जो हुक्म।" करीमुल्ला आवश्यकता की पूर्ति के लिए वहाँ से चल दिया।

करीमुल्ला के जाने के उपरान्त अब्दुल्ला खाँ का रतनचन्द की ओर ध्यान पूर्णतया गया। यह सोचते ही कि रतनचन्द कल से नहीं आया है, अब्दुल्ला का माथा ठनका; गैरत खाँ को दृष्टिगत कर तत्काल आज्ञा दी—"तुम भी जाओ; और, अगर, रतनचन्द कुछ आना-कानी करे तो शाही खजाने की तरह उसकी भी कोठी खोद कर सारी दौलत कब्जे में कर लो जाकर।"

"जो हुक्म।" गैरत खाँ ने भी अपनी गति का लक्ष्य रतनचन्द की कोठी को बनाया।

इधर, दो दिनों से अब्दुल्ला की मदिरा-पान की मात्रा अप्रत्याशित रूप से बढ़ गई थी। तनिक भी अवकाश मिलने ही मदिरा की अभाव जनित व्याकुलता व्यक्त हो जाती थी। लक्ष्मी को अपेक्षाकृत प्रसन्न बदन मदिरा पूरित पात्र लिए अपनी सेवा में उपस्थित देख खाँ साहब ने प्रश्न किया—"आज कुछ ज्यादा खुश नजर आ रही हो लक्ष्मी?"

लक्ष्मी की मुस्कान और भी स्पष्ट हो गई।

लक्ष्मी के हाथों ही पात्र की मदिरा पान कर खाँ साहब ने पुनः जिज्ञासा व्यक्त की—"क्या बात है लक्ष्मी?"

लक्ष्मी की आन्तरिक प्रसन्नता उमड़ी पड़ रही थी ; रिक्त पात्र में मदिरा उड़ेल खाँ साहब के ओठों तक पात्र बढ़ा दिया। दृष्टि मिलते ही खाँ साहब ने स्निग्ध स्वर में कौतूहल प्रकट किया—"लक्ष्मी! क्या मुझे अपनी खुशी का हिस्सेदार न बनाओगी ? ऐसा भी क्या है, जो मुझसे छिपा रही हो ?"

"जिस पर हुजुर की नजरे इनायत हो, वह खुश क्यों न हो।"

"नहीं लक्ष्मी ! आज तुम बेहद खुश नजर आ रही हो। इतनी खुशी का इजहार तो तुमने कभी नहीं किया।"

मदिरा पात्र आगे बढ़ा प्रसन्नता अन्दर समेट लक्ष्मी ने जानना चाहा -"सेठ रतनचन्द की हवेली हुजूर के हुक्म से लूटी जा रही है ?"

"हाँ, लक्ष्मी! फौज की भरती के लिये इस वक्त दौलत की निहायत जरूरत है और रतनचन्द है कि कल से दिखाई ही नहीं दिया है।"

"उन्होंने तो अपने को तहखाने में बन्द कर रखा है।"

"सिपाही सब खोज निकालेंगे।"

"तहखाने को ऊपर से चुनवा लिया है सेठ ने। खोदते वक्त कहीं सेठ का शरीर भी न खोद डाला जाय !" लक्ष्मी ने अपनी आशंका व्यक्त की।

"नमक हराम को मौत के मुँह में तो जाना ही है, कुछ वक्त पहले ही सही।"

"ऐसी गल्ती न होने दीजिए, हुजूर। अगर रतनचन्द इस दुनियाँ से कूँच कर गया तो दौलत कैसे हासिल होगी ?"

"सिपाही सब हासिल कर लेंगे।"

"मगर, हुजूर, सेठ के बिना वह दौलत हासिल नहीं होने की जो उसने जगह-जगह गाड़ रक्खी है।"

लक्ष्मी की बात खाँ साहब की कुछ समझ में आ गई। खाँ साहब

ने ताली बजाई दो सशस्त्र रक्षक तत्काल सेवा में आ उपस्थित हुये। उन्हें दृष्टिगत कर खाँ साहब ने आदेश दिया—"गैरत खाँ को दनिया हो कि रतन चन्द जिन्दा ही मेरे सामने पेश किया जाय।"

"जो हुक्म।" दोनों रक्षक अभिवादन कर कक्ष के बाहर हो गये।

"हुजूर को फौजी ताकत की ऐसी क्या जरूरत पड़ गई?" लक्ष्मी ने खां साहब की सेवा में मदिरा-पात्र उपस्थित कर प्रश्न किया।

मदिरा का घूँट कण्ठ से नीचे उतार खाँ साहब ने आश्चर्य व्यक्त किया—"क्या अभी तक तुम्हें कुछ नहीं मालूम हुआ?"

"हुजूर के अलावा कनीज को कोई भी तो फूटी आखों तक देखना पसन्द नहीं करता, मुझे 'कुछ' भी कौन बताने वाला है।"

"बादशाह, उसकी मा और अमीन खाँ के इशारे पर हैदर बेग ने धोखे से हुसेन को कत्ल कर दिया है।" लक्ष्मी अपलक दृष्टि से साँस रोके खाँ साहब के चेहरे की ओर देख रही थी और खाँ साहब सुना रहे थे—"हैदर बेग भी जिन्दा न बचने पाया। उसे मेरे ······।"

खाँ साहब के वाक्य पूर्ण होने के पूर्व ही लक्ष्मी के हाथ का पात्र छूट कर गिर पड़ा और उसकी मदिरा बिखर गई। लक्ष्मी के नेत्र बन्द हो गये थे; आकस्मिक आघात जनित वेदना चेहरे पर उभर आई थी। लक्ष्मी की स्थिति में आकस्मिक परिवर्तन ने खाँ साहब का ध्यान आकृष्ट किया; पुकारा उन्होंने—"लक्ष्मी।"

"जी···।" लक्ष्मी ने आँखें खोल दीं, पर क्षण भर में ही चेहरा ऐसा सफेद पड़ गया था, मानो किसी ने सम्पूर्ण रक्त निचोड़ लिया हो।

"क्या हो गया लक्ष्मी? तुम्हारा चेहरा क्यों सफेद हो गया?'

वेदना को नियन्त्रित कर कृत्रिम मुस्कान बिखेर लक्ष्मी मन्द स्वर में बोली— "कुछ नहीं, यों ही कभी-कभी इसी तरह दौरा पड़ जाता है।"

"पर, तुमतो मेरे साथ दिन-दिन भर रात-रात भर रही हो, पहले

कभी नहीं देखा तुम्हें इस हालत में ?"

खाँ साहब के प्रश्न की उपेक्षा कर गई लक्ष्मी—"तो क्या हुजूर को बादशाह के साथ जङ्ग करनी पड़ेगी ?"

"उसी की तो तैयारी की जा रही है ।"

"मगर छोटे खां साहब को मारा तो हैदरबेग ने था, बादशाह सलामत के खिलाफ जङ्ग की तैयारी आप क्यों कर रहे हैं ?"

"हैदरबेग बादशाह का ही तो आदमी था; जब तक बादशाह के एक–एक आदमी को जहन्नुम नहीं पहुँचा दूँगा, इन्तकाम की आग ठण्डी नहीं होगी ।"

लक्ष्मी ने मन-ही-मन सोचा—"इन्तकाम-मुझे भी किसी का इन्त–काम लेना है ।"

लक्ष्मी ने सस्वर अभिलाषा व्यक्त की -"क्या हुजूर मुझ कनीज को भी मैदाने जङ्ग में जाने की इजाजत देने की इनायत फरमायेंगे ?"

"मैदाने-जङ्ग में किसलिये जाना चाहती हो ?"

"जिस लिये आप या और लोग जाना चाहते हैं ।"

"मगर, तुम्हारा दुश्मन कौन है ?"

मन की बात लक्ष्मी के ओंठो पर आकर मुस्कान बन बिखर गई। दार्शनिक के स्वर में लक्ष्मी बोली—"इन्सान का सबसे बड़ा दुश्मन वह खुद है । इसके बाद वह, जिसे अपने सबसे नजदीक समझता है, दुश्मन साबित होता है । आप ही, जरा गौर फरमाइये । बादशाह सला-मत को क्या शान नहीं बख्शी आपने; मगर आज वही आपके जानी दुश्मन बने हुए हैं ।"

"यही सब देख कर तो हुसैन की कही हुई बातें रह-रह कर याद आ रही हैं । वह कहा करता था—"किसी पर भी जरूरत से ज्यादा यकीन नहीं करना चाहिए, अपने दिल का राज अजीज-से-अजीज पर

भी नहीं जाहिर होने देना चाहिए; दुश्मन का खून दुश्मन ही साबित होता है। आज उसकी एक-एक बात हकीकत नजर आ रही है।"

"मगर, इन्सान ऐसा कमजोर जीव है कि समझ-बूझ कर भी धोखा खाता रहता है; अपनी आदत से बाज नहीं आता है। मगर, अब अफसोस करने से क्या फायदा! हुजूर दिलो-जान से जङ्ग की तैयारी करें और····· ।"

गैरत खाँ के धक्के से रतनचन्द के कमरे में आ गिरने से लक्ष्मी का वाक्य अधूरा ही रह गया। सहसा कुछ पीछे हट गई वह।

गैरत खाँ विजय-गर्व से फूला नहीं समा रहा था; उल्लास अङ्ग-अङ्ग से फूटा पड़ रहा था। सेठ के गिरते ही खाँ साहब ने सेठ की ओर देखा। सेठ रतनचन्द मुँह के बल पर आ गिरा था। अपनी कोठी से खाँ साहब के महल तक लाये जाने के कारण सेठ की हालत विचित्र हो चुकी थी। वस्त्रों से यत्र-तत्र सेठ का स्थूल शरीर बाहर झाँकने लगा था। सेठ का चेहरा तो भय के मारे पहचाना ही न जा रहा था। सिर उठा सेठ ने खाँ साहब की ओर किंचित देख दृष्टि नीची की ही थी कि खाँ साहब का भीषण स्वर ध्वनित हुआ—"कुछ दौलत हाथ लगी?"

"जी हाँ, पूरा खजाना करीमुल्ला के हवाले कर दिया गया है।" गैरत खाँ ने प्राप्त धन की सूचना व्यक्त की।

सक्रोध दृष्टि का सेठ रतनचन्द को शिकार बना खाँ साहब ने प्रश्न किया—"और दौलत कहाँ है रतनचन्द?"

क्रोध से तमतमाये चेहरे की ओर अधिक देर देखने का साहस रतनचन्द में न था; दृष्टि नीची कर कहा—"मैं तो खुद ही हुजूर की खिदमत के लिये पूरा खजाना तहखाने से लेने गया था।"

"वह तो तू कल सुबह से ही निकाल रहा है।" दाँत पीस एक जोर

का तमाचा रतनचन्द की कनपटी पर मार खाँ साहब ने पूँछा—"और दौलत कहाँ है ?"

तेज हवा में हिलते हुए पत्ते की भाँति काँप रतनचन्द ने जन्मजात सम्पत्ति-लोभ व्यक्त किया—"जो कुछ थी हुजूर, सब तो ले गये, अब कहाँ ··· ···।"

वाक्य पूर्ण होने के पूर्व ही रतनचन्द की दूसरी कनपटी पर झड़ाम से झापड़ आ लगा। प्रहार तीव्र था; सेठ न सह सका और वहीं मुँह के बल धँस गया। इसके पूर्व कि रतनचन्द उठने पाये, खाँ साहब गर्जे —"जल्दी बता कहाँ-कहाँ गाड़ रखी है दौलत !"

सेठ रतनचन्द के मुँह से जो रक्त निकल फर्स पर आ गिरा था, खाँ साहब के कठोर प्रश्न ने अधिक देर उसे न देखने दिया; रतनचन्द को कहना पड़ा—"खजाने की सीढ़ियों के नीचे कुछ मुहरें गड़ी हैं।"

"और कबूल ?" खाँ साहब के चाँटे के साथ ही भल्ल से चुल्लू भर रक्त रतनचन्द के मुँह से और निकल पड़ा।

खाँ साहब-रतनचन्द के लिए उस वक्त काल रूप हो रहे थे। बुरी तरह काँपते हुये हाथ जोड़ने का व्यर्थ उपक्रम कर सेठ ने कहा—"बाग के दोनों कुओं में कुछ सोने की ईंटें पड़ी हैं।"

"और तालाब के अन्दर जो दौलत भरी लोहे की सन्दूकें गड़ी है, उन्हें क्यों नहीं बता रहे हैं सेठ जी ?" लक्ष्मी, जो अभी तक चुपचाप बैठी रतनचन्द की दुर्दशा देख रही थी, बोली—"और सेठ हीराचन्द की समाधि के अन्दर गड़े मनों हीरे किसके लिये छिपा रहे हो सेठ जी ?"

रतनचन्द के पिता का नाम हीराचन्द था।

सेठ ने लक्ष्मी को भय और क्रोध मिश्रित दृष्टि से देखा।

उसी बीच खाँ साहब का निर्णय ध्वनित हुआ—"गैरत खाँ ! ले

जाओ इस दगाबाज–नमकहराम को और उबलते तेल की कढ़ाई में जिन्दा डाल दो जाकर।"

सेठ रतनचन्द की भय के कारण घिग्घी इस बुरी तरह बन्द थी कि भरसक प्रयास करने पर भी सिर्फ इतना ही बोल पाया–"हुजूर माफ•••—•••।"

रतनचन्द का स्वर खाँ साहब की गर्जना में डूब गया।"करीमुन्ना!"

"जी हुजूर।"

"रतनचन्द की हवेली के चारों ओर की जमीन दूर-दूर तक गहरी खोदवा कर जितनी दौलत हाथ लगे, हासिल कर लो जाकर।"

"जो हुक्म हुजूर।"

गैरत खाँ रतनचन्द को बाहर के लिये घसीट रहा था। करीमुन्ना ने बाहर की ओर बढ़ रतनचन्द के घसिटते शरीर में ऐसी जोर से एक लात मारी कि सेठ का मृतप्राय शरीर काफी दूर तक सरकता चला गया।

३९

विगत अनेक युद्धों में अब्दुल्ला खाँ भाग ले चुके थे; और भली भाँति जानते थे कि बादशाह कितना ही दुर्बल क्यों न हो; पर, जन-साधारण के हृदय में उसके प्रति श्रद्धा अटूट रहती है; युद्ध स्थल में सैनिक बादशाह के अभाव में गिरे मन से लड़ते हैं; बादशाह को अपने बीच देख वीर अपूर्व उत्साह से प्राणार्पण करता है ; अतएव अब्दुल्ला खां ने तहखाने से इब्राहीम नाम के एक शाहजादे को निकाला और बादशाह बना दिया। इब्राहीम की उपस्थिति में औपचारिक ढङ्ग से दरबार लगा। प्रमुख नागरिक, राज्याधिकारी आदि ने उपस्थित हो बादशाह को मान्यता प्रदान की। बादशाह को साथ ले अब्दुल्ला खां ने नव निर्मित पूरी सेना का निरीक्षण किया। "बादशाह जिन्दाबाद" के नारों से गगन मण्डल ध्वनित-प्रध्वनित हो उठा।

उधर, मुहम्मद शाह की सेनायें पलवल जिले की सीमा से टकरा रही थीं। सआदत खां के सेनापतित्व में भेजे गये दो हजार सैनिक बढ़ते हुए शत्रु को रोकने में असफल सिद्ध हो रहे थे। शनैः-शनैः उनकी संख्या कम होती जा रही थी। शाही सेनायें पलवल में प्रवेश कर गयी थीं। सआदत खां उन्हें न रोक सका था; अपनी जान बचा भागा था पीछे की ओर।

इधर, अब्दुल्ला खाँ प्रस्थान की तैयारी में थे। सहसा सआदत खां को सामने देख अब्दुल्ला खाँ ने प्रश्न किया—"क्या शाही सेनाओं को मार भगाया ?"

'जी नहीं, पलवल में काफी आगे तक बढ़ आईं हैं शाही फौजें ।"

"और, तू क्या वहाँ आराम करता रहा ?" गरजे अब्दुल्ला खाँ ।

"मेरे सब साथी मर कर भी उनका आगे बढ़ना न रोक सके। मैं अकेले कर ही क्या सकता था ?"

"औरों की तरह जान तो दे सकता था। मुझे क्या शक्ल दिखाने आया है।" वाक्य की समाप्ति के साथ ही अब्दुल्ला की तलवार सआदत खाँ के रक्त से लाल हो उठी।

अब्दुल्ला की रक्त-रञ्जित तलवार आसमान की ओर उठते ही कूँच का डंका बज उठा।

टिड्डी दल की भाँति पचास हजार से भी अधिक अवधड़ सेना अब्दुल्ला का अनुसरण करने लगी। अब्दुल्ला खां घोड़े पर सवार रक्त-रञ्जित नङ्गी तलवार हाथ में पकड़े साक्षात कालरूप प्रतीत हो रहे थे।

तेरह नवम्बर सत्तरह सौ बीस को अब्दुल्ला खाँ की सेना हसनपुर से आगे न बढ़ने पायी; क्योंकि सामने ही विशाल मैदान में शत्रु सेना सन्नद्ध खड़ी थी। अब्दुल्ला खाँ बादशाह और उसके चापलूसों की शक्ति से परिचित थे; फलतः बिना प्रतीक्षा किये ही आक्रमण की आज्ञा दे दी। विरोधी पक्ष तो दो दिन पहले से ही अपनी व्यूह रचना समाप्त कर इस अवसर की प्रतीक्षा कर रहा था। दोनों ओर के वीर शक्ति प्रदर्शन के लिये अधैर्य हो उठे। पहाड़ी नदियों की-सी असंख्य धारायें परस्पर आ टकराईं। मार-काट होने लगी। वीर कट-कट कर धराशायी होने लगे। एक-से-एक बढ़-चढ़ कर वीर दोनों ओर थे अन्तर केवल इतना था कि शाही सेना के सैनिक दक्ष थे, इसलिये वे व्यवस्थित ढङ्ग से लड़ रहे थे और अब्दुल्ला खां की नव निर्मित सेना में रङ्गरूट ही अधिक थे, अतएव अधिकतर वीर बिना शौर्य—प्रदर्शन के

ही धराशायी हो रहे थे। दिन भर युद्ध चलता रहा । दोनों ओर के असंख्य सैनिक मारे गये।

दूसरे दिन सूर्योदय के पूर्व ही युद्ध प्रारम्भ हो गया। रात भर में अब्दुल्ला खां ने काफी अपनी शेप सेना को व्यवस्थित कर लिया था। दोपहर तक के संघर्ष में शाही सेना की क्षति अधिक हुई और अब्दुल्ला को पूर्ण विश्वास हो गया कि उनकी विजय निश्चित है। कुछ ही देर में युद्ध के अपने पक्ष में निर्णीत होने का अनुमान कर सुरक्षित सैन्य टुकड़ी को साथ ले बुरी तरह टूट पड़े अब्दुल्ला शत्रुओं पर। शत्रु-सेना के दुर्धर्ष योद्धाओं को गाजर-मूली की भाँति काट-काट धराशायी करने लगे । अब्दुल्ला की तलवार का रुख जिस ओर हो जाता, उसी ओर के युद्ध-रत सैनिक काल का ग्रास बन जाते। अब्दुल्ला की घण्टे भर की ही मार ने शत्रु दल को आतंकित कर दिया। दोनों ओर के विरोधी सैनिकों ने सामने के सैनिक से युद्ध करने की अपेक्षा अब्दुल्ला के संहार का दृश्य देखने लगे थे। शत्रु सेना के सैनिकों के चेहरों पर हवाइयाँ उड़ती नजर आने लगी थीं। कुछ ही देर में ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई कि अब्दुल्ला जिधर मुड़ते उधर ही भगदड़ मच जाती। आस-पास के शत्रु-सैनिक तो सम्भावित भय से सिर पर पैर रख भाग खड़े होते। अब्दुल्ला शत्रु-सेना में धँसता चले जा रहे थे। शत्रु-दल में प्रतिरोध की शक्ति समाप्त हो चली थी। विजय-गर्व से उमंगित हो अब्दुल्ला के साथ लग-भग दो सौ प्रमुख सरदार जिनमें गैरत खाँ भी था, अब्दुल्ला की ढाल बने शत्रु— व्यूह को चीरते प्रविष्ट हो रहे थे। ज्यों-ज्यों अब्दुल्ला अग्रसर हो रहे थे, गति तीव्र होती जा रही थी। अब्दुल्ला की विजय पताका फहराने में कुछ ही क्षण शेष थे कि पीछे से अब्दुल्ला की गरदन पर ऐसा प्रहार हुआ कि वह घोड़े पर न रह सके और भूमि पर आ रहे। अपने आगे-आगे कुछ ही अन्तर पर

अग्रसर होने वाले घुड़सवार का अप्रत्याशित आचरण देख गैरत खाँ की तलवार म्यान में न रह सकी। घुड़सवार, इसके पूर्व कि मुड़कर भागने का अवसर प्राप्त कर सके, गैरत खाँ की तलवार ने उसका सिर धड़ से अलग कर दिया। कटा सिर अब्दुल्ला खाँ के निकट जा गिरा। लुढ़कते सिर की पगड़ी अपने स्थान पर न रह सकी। पगड़ी के अलग होते ही सिर के लम्बे-लम्बे बाल दृष्टिगत कर अब्दुल्ला के मुँह से अन्तिम शब्द निकला—"लक्ष्मी !"

प्रतिशोधाग्नि की ज्वाला में भस्म लक्ष्मी को पहचानने के हेतु गैरत खाँ ने अपनी दृष्टि का केन्द्र बिन्दु उसे बनाया ही था कि सर पर शत्रुओं की असंख्य तलवारें एक साथ गाज-सी गिरीं। सैयद भाइयों का अन्तिम वंशज टुकड़े-टुकड़े हो वहीं बिखर गया।

समाप्त